

**TEXT PROBLEM
WITHIN THE
BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182604

UNIVERSAL
LIBRARY

Osmania University

Call No. H 81.01

Accession No. H 2828

Author

B 186

Title

बाली, लारकनाथ
गुरुत्वाकर्षण और उलझे

This book should be returned on or before the date
last marked below.

नूरुजा 1958

गुरुमतसिंह
और उनकी
गुरुता

तारकनाथ बाली
एम.ए.

गुरुभक्तसिंह और उनकी नूरजहाँ

[आलोचनात्मक अध्ययन एवं व्याख्या]

लेखक

श्री तारकनाथ बाली एम० ए०

विनोद पुस्तक मन्दिर,
हॉस्पिटल रोड, आगरा ।

प्रकाशक—

राजकिशोर अग्रवाल,
विनोद पुस्तक मन्दिर,
हॉस्पिटल रोड, आगरा ।

[सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन]

प्रथम संस्करण

जून १९५८

मूल्य ३)

मुद्रक—विनोदकुमार अग्रवाल, भारतीय प्रिंटिंग प्रेस,
बाग मुजफ्फरख़ाँ, आगरा ।

विषय-सूची

क्रम	पृष्ठ
आलोचना	
१—कथावस्तु	१
२—चरित्र-चित्रण	१४
मेहरुन्निसा	१४
अनारकली और सर्वमुन्दरी से तुलना	२०
जहाँगीर	२२
सलीम और मेहर	२६
३— कलापक्ष और भावपक्ष	३१
४— प्रकृति-चित्रण	४३

व्याख्या

१. पहला सर्ग	५२
२. दूसरा सर्ग	७०
३. तीसरा सर्ग	८७
४. चौथा सर्ग	९४
५. पाँचवाँ सर्ग	१०७
६. छठवाँ सर्ग	१२२
७. सातवाँ सर्ग	१३४
८. आठवाँ सर्ग	१४५
९. नवाँ सर्ग	१५६
१०. दसवाँ सर्ग	१६४
११. ग्यारहवाँ सर्ग	१७६

[ख]

१२. बारहवाँ सर्ग	१६६
१३. तेरहवाँ सर्ग	२०५
१४. चौदहवाँ सर्ग	२१३
१५. पन्द्रहवाँ सर्ग	२२०
१६. सोलहवाँ सर्ग	२३०
१७. सत्रहवाँ सर्ग	२४४
१८. अठारहवाँ सर्ग	२५६



कथावस्तु

‘नूरजहाँ’ काव्य में हमें नूरजहाँ के जीवन के एक भाग की कहानी मिलती है। उसका आरम्भ नूरजहाँ के माता-पिता के संक्षिप्त चित्रण के साथ अरब देश में होता है। इसके बाद वे गरीबी से तंग आकर भारत की ओर चल देते हैं। मार्ग में नूरजहाँ का जन्म होता है। कहानी के इस अंश में कवि ने अरब देश के नौरोज त्यौहार का, वहाँ की प्रकृति का और पक्षियों आदि का सुन्दर वर्णन किया है।

अरब देश से आरम्भ होकर कथा काश्मीर प्रदेश में समाप्त होती है। लेकिन जो पात्र हमारे सामने सबसे पहले आते हैं—नूरजहाँ के पिता गयास-बेग और उसकी माँ वेगम—उनके जीवन में भी रेगिस्तान ही है। सारे सुख छिन गये हैं। हाँ कभी बहार थी। उनके पूर्वज अमीर थे। धन की कमी नहीं थी। लेकिन अब सब समाप्त हो गया था। सुख की बहार जा चुकी थी, दुख का पतझर था। नहीं दुख का रेगिस्तान था जो हमेशा तपा करता था।

जिस प्रकार रेगिस्तान को पार करना टेढ़ी खीर है उसी प्रकार दुखों को पार करना भी आसान काम नहीं है। गयास और उसकी पत्नी को अपने दुखों से नजात पाने के लिए रेगिस्तान को पार करना पड़ता है। वे निश्चय करते हैं कि भारत जाकर वे व्यापार करेंगे और सुख से रह सकेंगे।

लेकिन अपसोस, रेगिस्तान के बीचोंबीच उन पर एक कड़ी मुसीबत पड़ती है। उनके यहाँ नूरजहाँ का जन्म होता है। काफिले वाले उन्हें छोड़कर आगे बढ़ जाते हैं। नूरजहाँ को साथ लिया नहीं जा सकता। कौन उसे उठाकर ले जाए। गयास अपनी पत्नी ही को संभाल कर मुश्किल से चल पाता है। छाती पर पत्थर रख कर वे अपने जिगर के सुन्दर टुकड़े को वहीं छोड़ जाते हैं।

लेकिन रेगिस्तान के बीच पैदा होने वाली, जन्म के अवसर पर ही माता-पिता द्वारा छोड़ दी जाने वाली इस बच्ची को भारत की साम्राज्ञी बनना था उसे उस समय कौन जानता था। पीछे से दूसरा काफिला आया, और एक

बूढ़े सौदागर ने उसे काबुल तक पहुँचा दिया। वहाँ एक धाय के हवाले कर दिया जो इसे पुत्री के समान ही पालने लगी।

विकास—इसके बाद कथा का जो विकास होता है वह बड़ा धीरे-धीरे होता है। बीच-बीच में कई स्थानों पर पाठक का मन ऊब सा जाता है। इसका कारण है। इसे समझना होगा।

कथा के विकास के लिए घटनाओं की अपेक्षा होती है। जीवन का विकास जिस प्रकार संघर्ष के बीच से होकर होता है, उसी प्रकार साहित्यिक कृतियों में भी कथावस्तु के विकास के लिए संघर्ष की आवश्यकता होती, घात-प्रतिघात की अवस्था होती है। लेकिन यह संघर्ष और घात-प्रतिघात बहुत देर बाद उपस्थित होता है, वह भी थोड़ी देर के लिए।

तो फिर सवाल होता है कि इसकी कथावस्तु का विकास कैसे हुआ? दो उपकरणों द्वारा। एक उपकरण है वर्णन और दूसरा उपकरण है संवाद।

साहित्य में वर्णन और संवाद दोनों का ही महत्त्व होता है। और विशेषकर प्रबन्ध-काव्यों में तो इसके ऊपर बहुत कुछ निर्भर रहता है क्योंकि इन्हीं दोनों उपकरणों के द्वारा ही कथा का विकास होता है। तीसरा महत्त्वपूर्ण उपकरण है घटनाएँ; लेकिन जैसा कि कहा गया इस काव्य में घटनाओं का स्थान बहुत गौण है और वर्णनों की ही प्रधानता है।

इस कथा का आरम्भ ही वार्तालाप से होता है। गयास अपनी पत्नी से कहता है—

“क्यों मुरझाई हुई प्रिये हो, कैसे बुझा हुआ है दिल ?

हैं नौरोज आज हम दोनों भी कर लें बिहार हिलमिल।

प्रेम पत्र जो भेज चुके थे, पवन दूत से माधव पास,

राह किसी की देख रहे थे खड़े खड़े ही बने उदास ?”

पृ० १

और यह कथन चौथे पृष्ठ के कुछ अंश तक चलता है। इसके बाद फिर उसकी पत्नी कहती है—

“तुमको रँग रलियाँ सूझी हैं, मेरी फटती है छाती,

आँखों में हूँ रात काटती, निशिभर नींद नहीं आती।

यह चिन्ता घेरे रहती है कैसे बीतेगा जीवन,
नहीं हाथ में शेष रहा कुछ, निकल गया जो कुछ था घन ।”

पृष्ठ ४

इस प्रकार लगभग पूरा सर्ग ही वार्तालाप में समाप्त हो जाता है ।
आगे के कई सर्ग भी संवादों में ही समाप्त हो लेते हैं ।

यह तो हुई संवाद की बात । दूसरा है वर्णन । विविध प्राकृतिक दृश्यों
के वर्णन के द्वारा भी कथा आगे बढ़ती है । जिस प्रकार पहले सर्ग का
आरंभ संवाद द्वारा होता है, उसी प्रकार अन्य कई सर्गों का आरम्भ प्रकृति
के किसी रूप के वर्णन से होता है ।

उदाहरण के लिए नवें सर्ग का आरम्भ रात के घने अन्धकार से होता
है । वर्षा ऋतु की काली अंधेरी रात है । बादल घिरे हैं । तारे भी दिखाई
नहीं देते, बादल सारी प्रकृति को आनन्द का सन्देश दे रहे हैं—

“अर्ध निशा में महा निविड़तम घेरे था पृथ्वी तल ।
अंधकार ही अंधकार दिखलाई देता केवल ।
ऊपर लोकवासी के लख पड़ते थे जो दृग तारे ।
वे भी मेघों के पलकों में छिपे नींद के मारे ॥”

पृष्ठ ६६

कहीं-कहीं संवाद और वर्णन ये दोनों उपकरण एक साथ आए हैं । वह
व्यक्ति जो बात करता है, वही उसी बात के साथ-साथ प्रकृति का वर्णन करने
लगता है । इस प्रकार संवाद वर्णनात्मक हो गए हैं ।

कई स्थलों पर ऐसा हुआ है । लेकिन उदाहरण के तौर पर हम प्रथम
सर्ग का पहला संवाद ही ले सकते हैं । गयास अपनी पत्नी से कहता है कि
चलो हम भी विहार करें, घूमें, फिरें, आनन्द मनाएँ । लेकिन तुरन्त ही
प्रकृति के वर्णन में तल्लीन हो जाता है । वृक्षों, लताओं और पत्तियों का
वर्णन करने लगता है । जैसे इन पंक्तियों में वह लताओं और वृक्षों का वर्णन
करता है—

“शाखाओं से वर विटपी की लिपटी ललित लताएँ हैं,
मधुपावलि बलि हो प्रसून पर लेती लाख बलाएँ हैं ।

चारों ओर श्याम हरियाली का है बिछा हुआ कालीन,
रंग रंग के फूलों से होगई घाटियाँ है रंगीन ।”

पृष्ठ २

अब देखना यह है कि घटनाओं की बहुत कमी के कारण तथा संवादों और वर्णनों की प्रधानता के कारण कथा की रोचकता पर कहाँ तक अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ।

घटनाओं के बहुत कम होने से कथावस्तु की रोचकता में पर्याप्त कमी हो गई है । कहीं भी संघर्ष और घात-प्रतिघात बहुत कम है । इसलिए पाठक की जिज्ञासा बढ़ती नहीं ।

हाँ संवाद अच्छे हैं और वर्णन भी । इससे कथा कुछ रोचक होगई है । लेकिन जहाँ इन दोनों उपकरणों से कथावस्तु में रोचकता आई है, वहाँ अनेक स्थानों पर शिथिलता भी आगई है । जहाँ भी वर्णन लम्बे हो गए हैं, संवाद लम्बे हो गए हैं, वहीं यह अरोचकता एवं शिथिलता दिखाई देती है । इन वर्णनों को पढ़ते-पढ़ते पाठक ऊब जाता है । जैसे दूसरे पृष्ठ पर ही गयास के कथन में ये वर्णन—

“करते हैं विहार पर्वत पर ‘शाहबलूत’ और ‘आजाद’,
सुन्दरता के पुतले बनकर शोभा सरसाते ‘शमशाद’ ।
लचका देते बड़े लोच से ‘सरो’ सुडौल सुरम्य शरीर,
निर्निमेष नयनों से ‘नरगिस’ लखती रहती यह तसवीर ।”

ऐसे अन्य भी अनेक स्थल हैं ।

कथावस्तु में एक दूसरा दोष भी है । वह यह कि अनारकली का चित्रण काफी विस्तार से किया गया है । वहाँ भी इसी प्रकार वर्णनों की प्रधानता है, संवादों की भरमार है ।

अपने आप में अनारकली की कथा कोई अरोचक नहीं है । शायद अनारकली का चरित्र नूरजहाँ के चरित्र से भी कहीं अधिक उज्ज्वल है । लेकिन उसका इतना अधिक वर्णन अप्रासंगिक है । पाठक उसे पढ़ते पढ़ते अनारकली के जीवन से इतना प्रभावित होता है कि वह भूल ही जाता है कि यह रचना नूरजहाँ के जीवन से सम्बन्ध रखती है ।

नूरजहाँ इस काव्य की नायिका है। लेकिन अनारकली को देखकर यह पिछड़ जाती है। अनारकली का चरित्र इससे भी अधिक श्रेष्ठ और महान दिखाया गया है। और उसका मुख्य कथा से, अनारकली का नूरजहाँ से कोई सम्बन्ध नहीं।

अन्त—कथावस्तु के विकास की चरमसीमा वहाँ आती है जहाँ 'शेर अफगन' की हत्या कर दी जाती है। यह घटना सोलहवें सर्ग में घटित होती है। (पृष्ठ ११६)। यही कथावस्तु की चरम सीमा है। इसके बाद कथा का उतार शुरू होता है।

अब देखने की बात यह है कि कथा का विकास तो १२२ पृष्ठों तक होता है और उसका अन्त प्रायः पच्चीस पृष्ठ में ही हो जाता है। आरम्भ से चरमसीमा का अंश चरमसीमा से अन्त तक के अंश से पाँच गुना अधिक है। इस दृष्टि से भी कथावस्तु कलात्मक दृष्टि से दोषपूर्ण है।

इस दोष को संतुलनहीनता का दोष कहा जा सकता है। संतुलित कथावस्तु में चरमसीमा का बिन्दु प्रायः बीचोबीच में होना चाहिए।

इसलिए इस चरमसीमा का बिन्दु से पहले का विस्तार बहुत अधिक है, कथा बहुत धीरे-धीरे चलती है। इसके बाद तो ऐसा लगता है कि कवि कथा को अन्त की ओर घसीटता लिए जा रहा है। अन्त बहुत तेजी से आ जाता है।

इसके बाद अब कथावस्तु के कुछ अन्य गुणों पर विचार किया जाएगा।

ऐतिहासिकता—नूरजहाँ एक ऐतिहासिक काव्य है। भारत के प्रसिद्ध मुगलसम्राट् जहाँगीर और नूरजहाँ के जीवन से इसका सम्बन्ध है। कवि ने इतिहास के तथ्यों को सही रूप में अपनाया है। यह एक गुण है। इतिहास की बातों की मनमानी व्याख्या नहीं की गई है। और फिर देखा जाए तो शेर अफगन की हत्या के अतिरिक्त इसमें कोई मुख्य घटना है भी नहीं। और यह घटना इतिहाससिद्ध है।

पात्र भी ऐतिहासिक हैं। हाँ जमोला, सर्वमुन्दरी आदि पात्र कल्पित हैं। कल्पित पात्रों में जमोला और सर्वमुन्दरी का काफी विस्तार से और रोचक चित्रण है। जमोला में पतित मनोवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। वह खलनायिका

कही जा सकती है। सर्वसुन्दरी का चरित्र बहुत महान है, अनारकली के समान ही सबसे महान् चरित्र इसी का है।

लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि से देखते हुए यह कहा जा सकता है कि एक भारी कमी भी है। और यह कि इस काव्य में उस युग के समाज का चित्रण बिल्कुल नहीं हुआ। अगर जहाँगीर—नूरजहाँ के साथ-साथ समाज का भी थोड़ा बहुत चित्रण होता तो इस काव्य का महत्त्व बढ़ जाता।

इस प्रकार इस काव्य का सम्बन्ध मुख्यतः पात्रों के व्यक्तिगत जीवन के साथ है। नूरजहाँ, जहाँगीर, शेर अफ़गन के पात्र का चित्रण उसके व्यक्तिगत जीवन को लेकर ही किया गया है। हाँ, शेर अफ़गन को ढाके के शासक के रूप में भी चित्रित किया गया है।

हम कह सकते हैं कि यह काव्य रीतिकालीन काव्यों की प्रवृत्ति लेकर चलता है। उन काव्यों में भी कवि समाज का चित्रण नहीं करते थे वरन् राजाओं महाराजाओं के व्यक्तिगत जीवन के चित्र ही अधिक खींचा करते थे।

अतएव इस काव्य में सामाजिक चिन्तन के लिए कुछ गुंजाइश नहीं! हाँ, अनारकली और सर्वसुन्दरी द्वारा निष्काम-प्रेम और कर्तव्य-भावना का चित्र मिलता है।

उदाहरण के लिए ये पंक्तियाँ लीजिए जिनमें अनारकली के सच्चे प्यार और बलिदान का चित्रण है---

मैं करने को बैठी हूँ बलिदान प्रेम पर कर दो।

प्यासे पृथ्वी के मुख को शोणित से मेरे भर दो।

इसके बाद जंगल में जब सलीम से अचानक उसकी भेंट हो जाती है तो वह कहती है---

“अब जाओ तुम राज्य करो, मत बादशाह को रुष्ट करो।

इस दासी के संग न प्यारे अपना जीवन नष्ट करो ॥

मैंने प्यार तुम्हारा पाया, जो जीवन का केवल सार।

उसे छोड़ सब क्षणभंगुर है, एक अमर है सच्चा प्यार ॥

करना क्षमा भूल सब मेरी, अब मैं और न जीऊँगी।
तुम्हें धर्म-संकट में रखकर विष का घूँट न पीऊँगी।”

पृ६ ४१

उसी प्रकार सर्वसुन्दरी के चरित्र में भी उच्च आदर्श दिखाई देते हैं।
मेहर जब शेर को छोड़ देने की बात कहती है तो वह उसे समझाती है—

“तेरा सुधा-सलिल जीवन बरसाता हुआ जिघर जावे।

हरी भरी खेती लहरावे कूल फूल से भर जावे॥

अमृत-सा मीठे जल से तू उस ऊसर को सींचा कर।

शांत भाव से उसे भेंट कर बेकल की अशांति को हर॥”

पृ० ८८

नाटकीयता—इस काव्य की अन्य विशेषता उसकी नाटकीयता से है।
नाटकीयता से अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार नाटक के एक दृश्य के बाद
दूसरा दृश्य आता है और प्रत्येक दृश्य के साथ दर्शक में याँड़ी जिज्ञासा होती
है उसी प्रकार इस काव्य में भी एक प्रसंग के बाद दूसरा प्रसंग आता है।
बीच में उन्हें जोड़ने की कोशिश नहीं की गई। फिर भी वे इस रूप में रखे
-गए हैं कि पाठक अपनी ओर से बीच के अंशों की कल्पना कर लेता है।

इसका आरम्भ ही बड़ा नाटकीय है। संवाद से आरम्भ करने से पाठक के
मन में जिज्ञासा पैदा होती है। जैसे ही हम पढ़ते हैं—

“क्यों मुरझाई हुई प्रिये हो, कैसे बुझा हुआ है दिल ?

हैं नौरोज आज हम दोनों भी करलें विहार हिल-मिल।”

पृ० १

यह पढ़ते ही पाठक के मन में जिज्ञासा होती कि यह कौन कह रहा है ?
किस से कह रहा है ? आदि। लेकिन इस संवाद के लम्बेपन के कारण कुछ
अरोचकता भी पैदा हो जाती है। इस ओर संकेत किया गया है।

इसी प्रकार स्थान-स्थान पर एक प्रसंग के बाद नाटकीय ढंग से दूसरा
प्रसंग रखा गया है जिसे पाठक को समझाने में कोई कठिनाई नहीं होती।

पृ० ११६ पर पहले प्रसंग में शेर और मेहर की बातें हो रही हैं। कुतुब
के बुलवा भेजने पर मेहर शेर को रोकती है—

“मेहर रोकती रही बहुत कह, बातों का करके परिहास ।
चल ही दिया शेर मुस्काता मेहर खड़ी रह गई उदास ॥
आँखों में आँसू भर ऊपर देख कहा हे जगदाधार ।
रक्षा करना उठती है मन में आशंका बारम्बार ॥
गए अकेले संग न कोई करना कुशल अरे रहमान ।
रही चढ़ाती आँखों का जल, का पाषाण-मूर्ति का ध्यान ॥”

इसके बाद उसी पृष्ठ पर ही शेर का यह कथन है—

“ऐसी बात निकाले मुँह से तेरी इतनी हुई मजाल ।
क्या सबमुच ही नाच रहा है तेरे सर पर काल कराल ॥
जहाँगीर है नहीं आज वरना मैं उसे सिखा देता ।
पर नारी पर बुरी नजर रखने का मजा चखा देता ॥”

यहाँ पाठक को अपनी ओर से यह सोच लेना पड़ता है कि कुतुब ने मेहर को जहाँगीर के लिए माँगा है और उसके उत्तर में शेर कह रहा है ।

हाँ कहीं-कहीं अवश्य ऐसा होता है कि नाटकीयता के मोह में कवि देर तक कहने वाले को छिपाए रहता है । फल यह होता है कि वहाँ दुरूहता आने लगती है । उदाहरण के लिए शेर अफगन की हत्या के बाद सर्वसुन्दरी कहने लगती है—

“फूला हुआ गर्व में उतना अरे ! बुदबुदे ! फूट गया ।
बिखर गए मोती तत्त्वों के जीवन धागा टूट गया ॥
तेरा वैभव बल घमंड धन का सारा ही छूट गया ।
तू दुनियाँ को लूट चुका था तुझे कौन यों लूट गया ॥”

पृ० १२

यह संवाद दो पृष्ठों से अधिक चलता है और सर्व सुन्दरी का नाम अन्त में दिया है । आरम्भ में ऐसा प्रतीत होता है कि कवि स्वयं कह रहा है ।

खण्ड काव्य

काव्य दो प्रकार का माना जाता है—एक मुक्तक काव्य, दूसरा प्रबन्ध काव्य । मुक्तक काव्य वह कहलाता है जिसकी रचनाएँ एक दूसरे से स्वतन्त्र हों । एक छोटी सी कविता में ही पूरा भाव समाप्त हो जाता है ।

उदाहरण के लिए महादेवी, पन्त, निराला, प्रसाद आदि के गीत लीजिए । सूरदास के पद लीजिए । इन गीतों में, इन पदों में एक का दूसरे के साथ कोई ऐसा सम्बन्ध नहीं है कि दोनों का पढ़ने से ही भाव पूरा हो या अर्थ पूरा हो । प्रत्येक गीत एवं प्रत्येक पद अपने आप में स्वतंत्र है, पूरे भाव की अभिव्यक्ति करता है और पूरे अर्थ का प्रकट करता है ।

दूसरे प्रकार का काव्य प्रबन्ध-काव्य है । इन काव्यों में कथा चलती है । यह समझिए कि गद्य में जिस प्रकार कहानी और उपन्यास होते हैं, पद्य में उसी प्रकार प्रबन्ध-काव्य होते हैं । जैसे कहानी या उपन्यास में नायक-नायिका तथा अन्य पात्र होते हैं वैसे ही खंड काव्य तथा महाकाव्य में भी नायक, नायिका और अन्य पात्र होते हैं ।

अब यह देखिए कि खंडकाव्य और महाकाव्य में क्या अन्तर है ।

महाकाव्य में नायक के जन्म से लेकर उसके जीवन के अन्त तक की घटनाओं का चित्रण मिलता है । किसी-किसी महाकाव्य में ऐसा नहीं भी होता । केवल नायक के जीवन की प्रधान घटनाओं का ही विवरण होता है ।

इसके साथ ही महाकाव्य में प्रकृति का बड़ा व्यापक चित्रण भी होना चाहिए । पहाड़, जंगल, सागर, नदी, विविध देश, युद्ध, प्रातःकाल, संध्या, रात्रि आदि के विस्तृत विवरण महाकाव्य में होने चाहिए । सात से अधिक सर्ग होने चाहिए । प्रत्येक सर्ग के अन्त में छन्द बदलना चाहिए ।

खंड काव्य में भी नायक के जीवन का चित्रण होता है लेकिन सम्पूर्ण जीवन का चित्र नहीं होता । और न ही उसमें जीवन की सारी महत्वपूर्ण घटनाओं का चित्रण मिलता है । इसकी कथा सीमित होती है और उद्देश्य भी सीमित ही होता है । वर्णनों की वैसी विविधता-व्यापकता नहीं होती जैसी कि महाकाव्य में पाई जाती है ।

उपर्युक्त महाकाव्य और खंड काव्य के संक्षिप्त विवेचन के बाद अब हम नूरजहाँ के बारे में विचार करेंगे ।

संक्षेप में कहे तो कह सकते हैं कि नूरजहाँ का कलेसर महाकाव्य से छोटा है और खंडकाव्य से कुछ बड़ा है । नूरजहाँ में प्रकृति-चित्रण तो प्रायः महाकाव्य सा ही मिलता है । लेकिन उसको कथावस्तु खंडकाव्य के योग्य ही है ।

जैसा कि आगे प्रकृति-चित्रण में विचार किया जाएगा, नूरजहाँ में संध्या, रात, रेगिस्तान, जंगल, पहाड़, नदी आदि का सुन्दर और सरस चित्रण है वैसा ही जैसा कि लगभग महाकाव्य में होता है। किन्तु इसी एक विशेषता के कारण हम उसे महाकाव्य नहीं कह सकते। क्योंकि एक दूसरा महत्वपूर्ण तत्त्व कथावस्तु का भी है।

नूरजहाँ की कथावस्तु बहुत संक्षिप्त है। और इस सीमित कथावस्तु में भी कवि ने घटनाओं के चित्रण की अपेक्षा प्रकृति-चित्रण को अधिक महत्व दिया है। घटनाएँ तो बहुत ही कम हैं और जो हैं उनका भी विधिवत् चित्रण नहीं किया गया है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि महाकाव्यकार की सबसे बड़ी विशेषता इस बात में है कि वह कथा के मार्मिक अंशों को पहचान कर उनका विस्तृत वर्णन करे तथा कथा के नीरस अंशों का संकेत करता चले। लेकिन नूरजहाँ में इस विशेषता का अभाव सा ही है। प्रायः मार्मिक अंशों का चित्रण सीमित रूप से हुआ है।

उदाहरण के लिए जब नूरजहाँ को यह ज्ञात होता है कि उसका विवाह शेर अफगन के साथ हो रहा है तो वह केवल इतना भर कहती है कि जो होनी दिखाएगी देखूँगी। उसी प्रकार यह समाचार सुनकर जहाँगीर की जो प्रतिक्रिया हुई उसका तो चित्रण ही नहीं।

विवाह के बाद तो जहाँगीर शेर अफगन को मारने चल देता है लेकिन तब तक उसका कहीं पता तक नहीं। अगर वह विवाह से पूर्व ही शेर को अपने मार्ग से हटाने का प्रयास करना दिखाया जाता तो और बात होती।

इस प्रकार कथावस्तु की दृष्टि से हम नूरजहाँ को खंडकाव्य ही कहेंगे।

एक दूसरी बात भी है जो इसे खंडकाव्य ही ठहराती है। वह यह कि उसमें समाज के चित्रण का प्रयास नहा के बराबर है। नूरजहाँ और जहाँगीर के वैयक्तिक प्रेम का चित्रण है।

जब नूरजहाँ का विवाह शेर अफगन से हो जाता है, तभी से उस काव्य के उद्देश्य का भी निश्चय होता है। और वह यह कि शेर अफगन को मार्ग

से हटाकर जहाँगीर के साथ नूरजहाँ का विवाह । उसके बाद जो भी वर्णन है वे सब इसी उद्देश्य की ओर संकेत करते हैं ।

नूरजहाँ एवं शेर अफ़ग़ान के विवाह से पूर्व तो इस के उद्देश्य के बारे में कोई स्पष्ट आभास नहीं मिलता । वहाँ भी अगर देखा जाए तो नूरजहाँ और जहाँगीर के प्रेम-वर्णन से उनके मिलन का उद्देश्य ही ध्वनित होता है ।

अतएव नायक और नायिका के मिलन को उद्देश्य लेकर चलने वाले इस काव्य को हम खंडकाव्य से ऊपर नहीं रख सकते । और यह मिलन ऐसा है जिसके लिए एक पाप किया गया है, एक अनुचित कार्य कराया गया है ।

यह अनुचित कार्य है शेर अफ़ग़ान की हत्या । उसकी हत्या के बाद उसी के हत्यारे के साथ नूरजहाँ का विवाह करना एक अनुचित कार्य है । इसमें महानता तो क्या, क्षुद्रता भलकती है । इस काव्य को पढ़ने के पश्चात् यह क्षुद्रता ही याद रह जाती है । और यह क्षुद्रता हटाने से नहीं हटती ।

कवि ने इस क्षुद्रता को घोने की कोशिश की है । लेकिन यह एक असंभव कार्य है । और अपने इस प्रयास के कारण कहीं-कहीं कुछ वर्णन हास्यास्पद से लगते हैं ।

उदाहरण के लिए जब लैला अपने बचपन के भोलेपन में अपने विवाह की बात करती है तो मेहर कहती है—

“गोद उठा, मुख चूम, मेहर बोली, लोचन भर आये ।

ये तेरी भोली बातें ही रखतीं मुझे जिलाये ॥

तेरा ब्याह ! न जाने कब हो ! कौन करेगा किससे ?

जीवन की गुथी में उलझन और पड़ गई इससे ।”

पृ० १२७

यह पढ़कर तो ऐसा लगता है जैसे मेहर ने अपना विवाह उसी के विवाह को खातिर किया । लेकिन वह भी अपने पति के घातक के साथ ।

इसी हत्या की घटना के कारण इस काव्य में एक और भी बड़ी दुर्बलता आ गई है । वह यह कि इस हत्या के साथ इस काव्य के नायक जहाँगीर का सम्बन्ध है । कवि ने उसे इस अपराध से बचाने के लिए भरसक चेष्टा की है । और इसके लिए कवि ने इस घटना की उपेक्षा की है । मेहर भी एक

स्थान पर केवल चार पंक्तियों में ही उसका वर्णन करके रह जाती है—

क्या सचमुच तुम नहीं जानते, होगा मुझे बताना ।
दुनिया जिसे जानती सब है नहीं उसे क्या जाना ।
हटो हटो इन खूनी हाथों को तूम दूर हटाओ ।
मेरे पति के घातक हो तुम पास न मेरे आओ ॥

पृ० १३१

और जहाँगीर जब क्षमा माँगता है तो वह उसे तुरन्त क्षमा भी कर देती है ।

मेहर की माँ जब उसे जहाँगीर से शादी करने को कहती है । उसके कथन की परीक्षा करने पर तो यह दोष और भी उभर आएगा । इन पंक्तियों पर विचार कीजिए—

बन माली वह दूर खड़ा है, दौड़ उसे तुम छू लो ।
जान बूझ कर दुखी बनो मत बीती बातें भूलो ॥
लोक रीति है, हुक्म खुदा है, अनुमति जान हमारी ।
हिन्द देश की साम्राज्ञी बन पुरवो साधें सारी ॥”

पृ० १२६

माना कि इस्लाम दूसरे विवाह की इजाजत देता है और उनके यहाँ पर प्रचलित है । लेकिन क्या पति के हत्यारे से विवाह किया जाए ? इस बात की और उसकी माँ ने संकेत नहीं किया ।

और नूरजहाँ भी यह सुनकर चुप रह जाती है । उससे भी यह न कहते बना, या कवि ने यह नहीं कहलवाया कि मैं पति के हत्यारे के साथ विवाह नहीं करूँगी । ऐसा क्यों हुआ ? क्योंकि कवि ने अनुचित रूप से जहाँगीर को इस कलंक से बचाने की चेष्टा की है ।

कवि की इस अस्वाभाविक चेष्टा का बहुत बुरा प्रभाव इस रचना पर पड़ा है । सब से पहला तो यह कि नूरजहाँ का चरित्र गिर गया है, या गिरा दिया गया है । दूसरा यह कि कथावस्तु में शिथिलता आ गई है, नहीं एक अभाव आ गया है ।

बिन्होंने प्रसाद जी की कहानी “आकाशदीप” पढ़ी है वे जरा उसकी

कथावस्तु से इसकी तुलना करें। उस कहानी का नायक है बुद्धगुप्त और नायिका है चम्पा। दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं, एक दूसरे पर मर सकते हैं। लेकिन फिर भी अन्त विवाह में नहीं, वियोग और बिदाई में होता है। क्यों ? क्योंकि चम्पा को सन्देह है कि उसके पिता की हत्या में बुद्धगुप्त का हाथ है।

और नूरजहाँ में सलीम ने शेर अफगान की हत्या करवाई और मेहर चुप रही। बदला लेना तो दूर उसके इशारों पर नाचने लगी। यह वही मेहर है जिसने जहाँगीर को उस समय कड़ी फटकार सुनाई थी जब वह स्वयं शेर को मारने आता है। मेहर का सलीम से विवाह करना उसके चरित्र का पतन है।

खंडकाव्य होते हुए भी इस रचना में इसी लुद्रता के कारण कोई विशेष महत्त्व नहीं रहा। यद्यपि प्रकृति-वर्णन सुन्दर है लेकिन इस लुद्रता को वह कैसे छिपाए ?



चरित्र-चित्रण

जैसा कि पहले कहा जा चुका है नूरजहाँ एक खंडकाम्य है। उसमें एक कथा चलती है। नायिका है, नायक हैं तथा अन्य पात्र हैं। कथावस्तु की विशेषताओं की परीक्षा करने के बाद अब हमें यह देखना है कि इसमें पात्रों के चरित्र का कैसा चित्रण हुआ है। पात्रों के चरित्र पर आने से पहले एक-दो सामान्य बातें बताना जरूरी है।

सबसे पहली बात तो यह है कि आधुनिक युग के पात्रों की यह विशेषता है कि वे यथार्थता लिए होते हैं। वे पात्र इस रूप में चित्रित किए जाते हैं जैसे कि वे वास्तव में होते हैं। उनमें किसी भी ऐसे गुण या सामर्थ्य का आरोप नहीं किया जाता जो कि उन्हें समाज में रहने वाले व्यक्तियों से दूर ले जाएँ जिस प्रकार हम जीवन में कुछ बातों पर दुखी होते हैं, कुछ पर सुखी होते हैं, उसी प्रकार वे पात्र भी चित्रित किए जाते हैं।

चरित्र-चित्रण के सम्बन्ध में दूसरी महत्वपूर्ण बात है गत्यात्मकता। प्रायः व्यक्ति ऐसे होते हैं जो परिस्थितियों के साथ बदल जाते हैं। कुछ परिस्थितियों में उनके अच्छे गुण उभर आते हैं और दूसरी परिस्थितियों में वे गुण दब जाते हैं, उनमें अन्तर्द्वन्द्व या मानसिक संघर्ष होता है। आधुनिक साहित्य में पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का मानसिक संघर्ष के चित्रण पर खास जोर दिया जाता है।

अब हम पात्रों के चरित्र की चर्चा करेंगे।

मेहरुन्निसा

मेहर का जन्म बड़ी विषम परिस्थितियों में होता है। उसके माता-पिता काफिले के साथ भारत आ रहे थे। रास्ते में उसका जन्म हुआ। उसके माँ-बाप गहन चिन्ता में पड़े। काफिला पदले ही उन दोनों को छोड़ कर आगे

बढ़ गया था। अगर वह मेहर को साथ लेते हैं तो काफिले तक नहीं पहुँच पाते। अगर वहीं ठहरते हैं तो सब का जीवन खतरे में पड़ जाता है। छाती पर पत्थर रख कर वे उसे छोड़ कर चले जाते हैं।

मेहर के जन्म में विषम परिस्थितियाँ रहीं। आगे के जीवन में भी काफी समय तक उसके जीवन की परिस्थितियाँ विषम ही बनीं रहीं। वह जहाँगीर से प्रेम करती थी लेकिन विवाह शेर अफ़ग़ान के साथ हो गया। पहले पति का स्वभाव बड़ा कठोर था। जब उसे होश आया और इसने कुछ दिन सुख से काटे तभी उसके पति की हत्या करवा दी गई।

पति की हत्या के बाद वह चार वर्ष तक विषम परिस्थितियों का शिकार बनी रही। जहाँगीर से विवाह के पश्चात् उसका जीवन फिर से खिल उठता है। और विषमता मिट जाती है।

शारीरिक सौन्दर्य—जन्म से ही मेहर बहुत अधिक सुन्दर थी। उसकी सुन्दरता के कारण ही आगे चलकर उसे नूरजहाँ कहा गया। इस शब्द का अर्थ है संसार का प्रकाश। पहले पहल जब उसके माता-पिता उसे छोड़कर चल देते हैं और दूसरे काफिले का सरदार देखकर आश्चर्य में भर जाता है। वह जो उसके बारे में कहता है उसी से मेहर के अपूर्व सौन्दर्य का संकेत मिलता है—

“वारि-वीचियों की सरोजिनी, कविता की आनन्द-लहर।
मानसरोवर की मरालिनी, मरुप्रदेश की सरिता वर॥
तरुणी अंचल की श्रीड़ा सी जिसे हिलाता हो मारुत।
मौन आसुओं की भाषा सी, अलसाई आँखों सी बुत॥”

पृ० १८

यहाँ उसे लहरों की कमलिनी, कविता की आनन्द-लहर, मानसरोवर की हंसिनी और रेगिस्तान की सुन्दर नदी कहा गया है। इन प्रयोगों से उसका सौंदर्य स्पष्ट है।

सरलता—नूरजहाँ स्वभाव से ही बड़ी सरल है। उसमें तेजी या चालाकी नहीं पाई जाती। उसका स्वभाव सीधा-सादा है। इसका संकेत कई स्थलों पर मिलता है।

कवि ने उसके बढ़ने का वर्णन इन पंक्तियों में किया है--

“यह किरण-जाल सी उज्ज्वल है मानस को विकल मराली ।
अंग अंग में चपला खेल रही है फिर भी भोली भाली ॥

+ + +

कितनी आँखों के जाल बिछे, कितनों ही ने डोरा डाला ।
संसार-जाल में पानी सी छन जाती थी वह सुर बाला ॥

पृ० ४४

यद्यपि उसके सारे शरीर में शोभा की बिजली नाचा करती थी फिर भी वह भोली थी और इसी भोलेपन के कारण ही वह संसाररूपी जाल में पानी के समान छन जाती थी । संसार का उस पर कोई असर नहीं पड़ता था ।

जब जहाँगीर का एक कबूतर मेहर के हाथ से उड़ जाता है और वह आकर पूछता है कि दूसरा कबूतर कहाँ है तो वहाँ भी उसके भोलेपन और सरलता का वर्णन है—

“एक कबूतर देख हाथ में पूछा कहाँ अपर है ।

उसने कहा अपर कैसा ? वह तो उड़ गया स-पर है ॥

उत्तेजित हो पूछा उसने, उड़ा ! अरे वह कैसे ।

फड़ से उड़ा दूसरा बोली उड़ा देखिए ऐमे ॥”

भोलापन यह देख चकित हो मुख-छबि खूब निहारी ।

क्षण भर रहा निरखता इनटक, तन की दशा बिसारी ॥

भाग्यवादी—मेहर भाग्यवादी है । जब कभी वह विषम परिस्थितियों में पड़ती है तो यही सोच लेती है कि भाग्य उसे जो-जो दिखाएगा, वह देखेगी । उदाहरण के लिए जब जमीला उससे यह कहती है कि उसका विवाह शेर अफगान के साथ निश्चित हो चुका है तो वह बहुत दुखी होती है लेकिन फिर भी यही कहती है—

“हटो मिटाए नहीं मिटेगी यह भावी की रेखा ।

देखूँगी आगे जो होगा, इधर बहुत है देखा ॥”

पृ० ६२

भाग्य जो दिखाएगा वह तो देखना ही पड़ेगा ! हमेशा से ही परेशानियाँ,

देखती चली आ रही हूँ ।

भाग्यवादी होने के साथ-साथ वह आस्तिक भी है । उसे खुदा पर विश्वास है और परेशानी के समय उसे ही याद करती है । इसी समाचार को सुनने के बाद वह सोचती है—

मेरी ही किस्मत टेढ़ी हो वह न संवारे उसको ।

उलटा चला जमाना मुझसे वह न सुधारे उसको ॥

पृ० ६३

प्रकृति-प्रेम—मेहर को प्रकृति से बहुत अधिक प्यार है । प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण में पहुँच कर उसका मनमयूर नाच उठता है, वहाँ की शोभा देखकर वह उसमें खो जाती है, वहाँ की अनेकरूपता उसे मोहित कर लेती है । मेहर के प्रकृति-प्रेम के अनेक उदाहरण इस काव्य में मिलते हैं । जैसे बंगाल में पहुँचते ही वहाँ की शोभा देख वह और उसका पति दोनों ही आनन्दित होते हैं---

“प्रकृति नटी का रंगमंच वह, रम्य देश प्यारा बंगाल ।

वहाँ पहुँच कर नव दम्पति वह छटा निरख हो गया निहाल ॥”

पृष्ठ ७५

जब शेर अफगन उसे महल में ले जाता है तो उसकी सारी आजादी छिन जाती है । न तो वह आजादी से बोल सकती है न सुन सकती है, न देख सकती है, न घूम सकती है । उसकी सारी इन्द्रियों को जकड़ दिया गया है ।

“उसकी वह सुन्दर बेगम रहती महलों के अन्दर ।

पग न कभी रख पाती थी वह दरमसरा के बाहर ॥

कानों पर, मुँह पर, पग पर था उस दुल्हिन के ताला ।

सारी स्वतन्त्रता हर कर पिंजड़े में पक्षी डाला ॥” पृष्ठ ८०

ऐसी अवस्था में रह रहकर उसके मन में इच्छा होती है कि वह प्रकृति में स्वतंत्र घूमे । प्रकृति उसे पुरानी सहेली के समान दिखाई देती है । वह अपनी

पुरानी संगिनी से मिलने को तरसा करती थी लेकिन बेकार । लताएँ उसे बुलाती सी दिखाई देती थीं । हरिणों के बच्चे उसे जंगल में घूमने का निमंत्रण देते थे---

“वह मीनारों पर चढ़कर सहचरी प्रकृति को लखती ।
उस हरियाली की हाला वह आँखों द्वारा चखती ॥
लतिकाएँ उसे बुलातीं, तरु चढ़कर हाथ हिलाकर ।
बन में चलने को कहते मृगशावक आँख मिलाकर

पृष्ठ ८०

प्रकृति-सौन्दर्य देखकर वह उसमें घूमना चाहती थी । लेकिन बेबस थी । उसकी इस बेबसी का कैसा करुण चित्रण इन पंक्तियों में हुआ है---

“तब वन-शोभा में, पहिले सा, फिरने को ललचाती ।
दीवारों के बाहर वह पर कभी न जाने पाती ॥
वह ललच ललच कलियों के चुनने को हाथ बढ़ाती ।
फिर साँस खींचकर ठंडी वह मन मसोस रह जाती ॥”

पृ० ८१

काश्मीर में जाकर जब जहाँगीर उससे चौपड़ खेलने को कहता है तो वह उसे नहीं मानती और कहती है कि मैं तो अपना बाग सजाऊँगी । कहती है—

वह पोधा है सूख रहा उसमें चलकर जल छोड़ेंगे ।
सूख गई है मिट्टी उसकी थाले को हम गोड़ेंगे ॥
× × ×
ये गुलाब हीजों में भरकर इत्र निकाल लगाऊँगी ।
चौपड़ कभी नहीं खेलूँगी अपना बाग सजाऊँगी ॥

पृ० १४०

स्वाभिमान नूरजहाँ स्वाभिमानिनी है तथा स्वतंत्र रहना चाहती है । आजाद रहना चाहती है । वह नहीं चाहती कि कोई भी उसके मन पर शासन करे । वह किसी के इशारों पर चलना नहीं चाहती । जब उसका पति उसके साथ कठोर व्यवहार करता है तो उसके आत्मगौरव को चोट लगती है, उसका

स्वाभिमान तड़प उठता है। जब वह देखती है उसे कोई आज़ादी नहीं और चुप रहकर भी उसे अत्याचार सहने पड़ते हैं। वह कहती है—

‘ऐसा दुर्व्यवहार करें वे नित हो मेरा यों अपमान।
यों जिल्लत सहने से अच्छा है दे देना अपना प्राण ॥
नहीं आत्मगौरव को मेरे कोई यों ठुकरावेगा।
नहीं आज से कोई मुझ को आँखें लाल दिखावेगा ॥’

पृ० ८७

पति की हत्या के बाद जहाँगीर के महल में रहती है। वहाँ उसके मन में दुर्बलता पैदा होती है। वह उसे जहाँगीर की ओर खींचता है। लेकिन वह स्वयं आज़ाद रहना चाहती है। इसलिए मन की दुर्बलता पर वश न पाकर जान देने को तैयार हो जाती है—

उफ् मेरे मन आगे मत बढ़ ओ गज कानन-चारी।
तुझे फँसाने को खोदा है आगे गड्ढा भारी ॥
× × ×
सामदाम हस्तिनी भेज फिर परचायेगा तुझको।
फिर मस्तक पर बैठ करेगा सर अंकुश से तुझको ॥
नहीं ! नहीं ! कोई हो शासन तुझ पर कौन करेगा।
उस परिचित दुख में फिर फँसकर आहें कौन भरेगा ॥’

पृ० १३०

किन्तु आगे चलकर उसे आत्मसमर्पण करना ही पड़ता है।

पत्नी के रूप में—पत्नी के रूप में मेहर के चरित्र में काफी परिवर्तन होते रहे हैं। उसका सबसे उज्ज्वल रूप वहाँ दिखाई देता है जब सलीम उसके पति शेर अफ़ग़ान को मारने के लिए आता है। वह मेहर अपने प्रेम को भुलाकर उसे फटकारती है, अपना बलिदान देने को तैयार हो जाती है और यहाँ तक कि सलीम से दो-दो हाथ तक करने को तैयार हो जाती है। सलीम की मिन्नत और निवेदन का उस पर कोई असर नहीं होता। वह कहती है।

“आज सलीम ! बात करते हो जिससे, परनारी है।
जो अपने कर्तव्य धर्म पर तन मन धन हारी है ॥
इस से उचित नहीं है तुमको सोचो अधिक ठहरना।
और किसी की पत्नी से यों बहकी बातें करना।
नहीं यहाँ साम्राज्य तुम्हारा, मेरा पावन घर है।
इसकी दीवारों के भीतर दम्पति धर्म अमर है ॥

×

×

×

विनय मानते हो चुपके से, या आवाज लगाऊँ।
या हो रक्त देखना ही तो अपने हाथ दिखाऊँ ॥”

पृ० ६६

यहाँ मेहर का चरित्र उच्चतम है। लेकिन वह अपनी इस उच्चता को बनाए नहीं रख सकी। धीरे-धीरे उसके पत्नी-रूप में पतन होने लगा। पति की कटोरता से घबरा कर वह कहती है—

“नहीं, नहीं, यह कभी न होगा कभी न होने दूँगी मैं।
मानवता-विहीन पति का अन्याय न यों सह लूँगी मैं ॥
मेरा मस्तक नहीं भुकेगा अविवेकी मद के डर से ॥
मान सहित मैं मर सकती हूँ प्रेम अगर इंगित करदे।
मर्यादा खोकर तलवा मैं नहीं किसी का चाटूँगी।
पराधीनता-बेड़ी यह अपने हाथों से काटूँगी ॥

पृ० ८८

और अन्त में जब वह अपने पति के हत्यारे जहाँगीर से विवाह कर लेती है तो चरित्र की दृष्टि से वह गिर जाती है। कवि ने चाहे उसके इस कार्य को बहुत सही या जायज बनाने की कोशिश की, लेकिन फिर भी यह कलंक उसके चरित्र पर है ही।

अनारकली और सर्वसुन्दरी से तुलना

हम मेहर के चरित्र की तुलना अनारकली और सर्वसुन्दरी से कर सकते हैं। यद्यपि उनके जीवनो में भिन्नता है किन्तु एक बात में तीनों समान हैं। अनारकली और मेहर दोनों ने ही जहाँगीर से प्यार किया है और उसे पति

के समान ही माना है। और सर्वसुन्दरी भी पत्नी है। इसी एक पक्ष को लेकर तीनों की तुलना की जा सकती है।

अनारकली का चरित्र मेहर से महान है। अगर अनारकली चाहती तो अकबर की बात मान कर सुख-वैभव लूट सकती थी। लेकिन वह प्रेम पर इस सुख को बलिदान करनी है। इतना ही नहीं, अपना जीवन भी बलिदान कर देती है। जहर खा कर हमेशा के लिए सो जाती है।

मरते-मरते भी सलीम को अपने पिता की आज्ञा में रहने की प्रार्थना कर जाती है—

“हुई आज पूरी पूजा जो दर्शन यह पाया अभिराम ॥
अब जाओ तुम राज्य करो मत बादशाह को रुष्ट करो।
इस दासी के संगन प्यारे अपना जीवन नष्ट करो ॥
मैंने प्यार तुम्हारा पाया जो जीवन का केवल सार।
उसे छोड़ सब क्षणभंगुर है एक अमर है सच्चा प्यार ॥
करना क्षमा भूल सब मेरी अब मैं और न जीऊँगी।
तुम्हें धर्म-संकट में रखकर विष की घूंट न पीऊँगी ॥”

पृ० ४१

इसी प्रकार सर्वसुन्दरी का चरित्र भी महान है। वह पति के मारे जाने के बाद योगिनी बनकर घूमा करती है और सारा जीवन परोपकार में लगा देती है। बीच में जब मेहर पति से नाराज हो तो सर्वसुन्दरी ही उसे समझाती है। विवाह के विषय में उसके विचार बहुत महान हैं—

“पर मेरा आदर्श और था, देवी तुम्हें बनाने का।
क्षणिक देह-सुख-स्वप्न छोड़कर चिर-सुख-मार्ग चलाने का ॥
पर वह मार्ग महा दुर्गम है भारी प्रेम परीक्षा है।
स्वार्थ-हीन निष्काम भक्ति की मिलती पूरी शिक्षा है ॥
मेरा धर्म ब्याह-बंधन को नाता अमर बनाता है।
जन्म जन्म में भी जो नाता नहीं टूटने पाता है।

पृ० ८६

इसी के उपदेश से मेहर उस बार पतन से बच जाती है। सर्वसुन्दरी

स्वयं देवी बन जाती है लेकिन मेहर इस आदर्श से गिर जाती है ।

जब शेर अफ़ग़न की हत्या हो जाती है तब भी सर्वसुन्दरी उसे समझाती है—

“जो होना था हुआ अन्त वह उसने काटा जो बोया ।
अहमन्यता स्वार्थ में ही अपना सारा जीवन खोया ॥
तू अब चेत बची खेती की बनचर से रखवाली कर ।
स्वर्णमयी पावन अनाज से फिर अपना घर ले तू भर ॥”

पृ० १२१

इस प्रकार अनारकली और सर्वसुन्दरी दोनों का चरित्र मेहर के चरित्र से महान है ।

जहाँगीर

प्रेमी का रूप—जहाँगीर के जीवन का एक सीमित अंश ही इस काव्य में लक्षित होता है और उसकी आयु के इस लघु भाग में भी हमें उसके जीवन के एक पक्ष के ही दर्शन होते हैं । और यह पक्ष है प्रेम का । प्रेमी के रूप में ही वह इस काव्य में पदार्पण करता है और इस काव्य के अन्तिम दृश्य में भी वह प्रेमी के रूप में ही दिखाई देता है । बीच का उसका सारा जीवन भी इसी प्रेम से ही संचालित है ।

सलीम और अनारकली—सबसे पहले जहाँगीर जब उपस्थित होता है तो एक रसिक के रूप में । वह अपने महल में आधा लेटा परियों सी सुन्दरियों का नृत्य देख रहा है । उन्हीं सुन्दरियों में एक का नाम अनारकली है । उसका गाना, उसका नाच, उसके कटाक्ष सभी ऐसे हैं जिन्होंने बरबस सलीम के दिल को अपनी ओर खींच लिया । वह कुमार के दिल को ही नजरों के तीर का निशाना बना रही थी—

स्वर खींच खींच थी गाती थी कमर कमान बनाती ।
कर लक्ष्य पुकार हृदय को भी दृग के तीर चलाती ॥
गति बाँध ताल सम में वह जो नाची छम छम छम छम ।
उस रसिक कुमार हृदय पर उसका ही रंग गया जम ॥”

इस प्रकार वह रसिक के रूप में ही हमारे सामने आया है। यह चरित्र उसके लिए स्वाभाविक ही है। वह मुगल खानदान का चिराग है। भारत के सम्राट् अकबर का पुत्र और देश का भावी सम्राट्। पूरे विलास, नशे और मस्ती के वातावरण में पलकर बढ़ा है।

अनारकली के साथ ही सबसे पहले वह प्रेमपाश में बँधा दिखाई देता है। अनारकली के रूप और कला पर वह मुग्ध हो जाता है।

लेकिन इस दृश्य में वह प्रेमी के रूप में नहीं, विलासी के रूप में ही आया है। विलासी और प्रेमी में बड़ा अन्तर है। विलासी तो शारीरिक आकर्षण से मुग्ध होकर शारीरिक इच्छाओं की पूर्ति को ही अपना उद्देश्य बनाता है। उसमें शारीरिकता एवं मांसलता अधिक होती है। आवेग होता, जोश होता है लेकिन क्षणिक।

इसके विपरीत प्रेमी में शारीरिक पक्ष गौण होता है और मानसिक पक्ष की प्रधानता होती है। इसमें उत्साह होता है गंभीरता होती है और होती है बलिदान के रूप में।

नीचे की पंक्तियों से स्पष्ट हो जायगा कि सलीम अनारकली के साथ इस पहले दृश्य में रसिक के रूप में—विलासी कुमार के रूप में ही आता है—

कुमार बोला कि आज तूने,
कमाल दिखला चुरा लिया चित
यह हार मेरे गले का ले अब,
तू हार मेरे गले का होजा।

पृ० २५

इन पंक्तियों में स्पष्टतः कुमार इनाम देकर तथा प्रशंसा करके अनारकली को लुभा लेना चाहता है। दिल के चुराने की बात कहता है और उसे अपने गले का हार बनाना चाहता है। स्पष्टतः यह विलास है, प्रेम नहीं। आगे की पंक्तियों में शारीरिकता और भी उभर आई है—

हुए शिथिल तेरे अँग थककर,
तू लग कलेजे से मेरे सोजा।

हगों के डोरे यह लाल तेरे,
कपोल पर वह अरुण उदय सा ।
प्रभात यौवन है वत्त सर में,
कमल भी विकसित हुआ है कैसा

पृ० २५

थोड़ी देर में ही अकबर वहां आ पहुँचता है । उसे देखकर सलीम घबरा जाता है । गिरता पड़ता उठकर खड़ा हो गया । सर झुकाए काँप रहा था और उधर अकबर अनारकली पर बरस रहा था ।

लेकिन सलीम की यह विलास-भावना आगे चलकर अनारकली के पति प्रेम-भावना के रूप में परिणत हो जाती है । जब जंगल में वह अचानक ही अनारकली से मिल जाता है तो उसके उद्गार विलास के नहीं प्रेम के हैं । जब मेहर यह कहती है कि “तुम जाकर पिता की आज्ञा का पालन करो और राज्य करो” तो वह उत्तर देता है—

“क्या कहती हो मत घबड़ाओ हुआ सलीम तुम्हारा है ।
अपना हृदय जिसे दे डालूँ किसका यहाँ इजारा है ॥
पिता करें शासन दुनियाँ पर मेरा मन है सदा स्वतंत्र ।
इस पर कभी नहीं चल सकता राजदण्ड का कोई मंत्र ॥
सुख के लिए राज वैभव है, मेरे सुख साम्राज्य तुम्हीं ।
बिना तुम्हारे जग के वैभव छूने की भी वस्तु नहीं ॥”

पृ० ४२

यहां वह बलिदान के लिए तैयार है । वह राज्य-वैभव को भी ठुकरा कर अनारकली को पाने के लिए तैयार है । राज-दण्ड के भय से भी विचलित नहीं होता ।

और जब अनारकली विष पी लेती है तब वह भी अपनी जान देने को तैयार हो जाता है—

चाटे होंठ, अधर-प्याली ! यदि विषरस थोड़ा होवे शेष ।
तो थोड़ी मुझको भी देकर करो क्लेश मेरे निःशेष ॥”

पृ० ४२

और अन्त में वह पैदल ही कन्धा देता हुआ चलता है और अनारकली की समाधि पर कितने ही दिनों तक रोता रहा—

कन्धा देता, पैदल पैदल, आँसू से पृथ्वी करता तर ।
लाहौर नगर में ले जाकर बनवाई इक समाधि सुन्दर ॥
आँसू से भीगे फूल वहाँ पर बिलख चढ़ाया करता था ।
घंटों चिपटा उसकी समाधि से रो रो आहें भरता था ॥

पृ० ४३

जहाँगीर और अनारकली के इस प्रेम के ऊपर एक आक्षेप लगाया जा सकता है । वह यह कि इसके बाद सलीम अनारकली को कभी याद भी नहीं करता जैसे वह उसके जीवन में कभी आई ही नहीं थी या उसने जो प्रेम उससे किया था वह एक खेल भर था ।

वस्तुतः इस आक्षेप में जान है । लेकिन इसके उत्तर में दो बातें कही जा सकती हैं ।

पहली बात तो यह है कि कवि अगर चाहता तो वह सलीम को इस आक्षेप से बचा सकता था । यह जो कमी है वह कवि की ओर से है ।

दूसरी बात यह है कि जीवन में बड़ी-बड़ी घटनाएँ होती हैं और उसमें व्यक्ति को समझौता करना ही पड़ता है । जो प्रेम में असफल होते हैं वे भी अपनी जिन्दगी से समझौता करते ही हैं, करना ही पड़ता है । कमजोर लोग जो ऐसा नहीं कर पाते, जान दे देते हैं । लेकिन इसमें कोई बहादुरी नहीं ।

समय भी जीवन की असफलताओं के घाव भरने में बड़ी सहायता करता है । ज्यों-ज्यों किसी घटना को समय व्यतीत होता जाता है, जैसे-जैसे घटनाएँ पुरानी होती हैं, वे नई-नई घटनाओं के बीच दबती चली जाती हैं । याद रहती हैं, जीवन की अन्य नई पेचीदा व्यस्त परिस्थितियों से अवकाश पाते ही उभर आती हैं । नूरजहाँ के रचयिता ने इस तथ्य का उपयोग नहीं किया ।

सलीम के चरित्र के ऊपर एक दूसरा आक्षेप भी लगाया जा सकता है । वह यह कि उसने अनारकली से भी प्यार किया और मेहर से भी । और वह दोनों से ही सच्चा प्यार करता था । क्या ऐसा संभव है ? क्या सच्चा प्यार जीवन में दो या अधिक बार भी किया जा सकता है ? इस प्रश्न का निश्चय

तो आप स्वयं ही कीजिए ।

सलीम और मेहर

मेहर के साथ सलीम की पहली भेंट कहाँ, कैसे और किन परिस्थितियों में होती है इसका कोई उल्लेख नहीं है । जैसा कि कथावस्तु के विवेचन में कहा गया है, नूरजहाँ में इस तरह के कई दोष हैं । कवि बीच-बीच के कई स्थल छोड़ गया है । उनके छोड़ने से कहीं तो नाटकीयता का सृजन होता है और कहीं दोष एवं दुरुहता का ।

इस रचना में जब दोनों पहली बार मिलते हैं तो उन दोनों का पहले से ही परिचय हो चुका होता है । मेहर की अंगुली में काँटा लग जाता है और वह सलीम के पास आती है । वह अपना दामन फाड़ कर इसे पट्टी बाँधता है और फिर कबूतर उसे देकर फूल लेने जाता है । जब आता है तो एक कबूतर उड़ जाता है ।

लाया कुँवर सलीम विहँसता भरी फूल की भोली ।
लखता रहा कहीं गुलाब से सुन्दर सूरत भोली ॥
एक कबूतर देख हाथ में पूछा कहाँ अपर है ?
उसने कहा अपर कैसे ? वह तो उड़ गया स-पर है ॥
उत्तेजित हो पूछा उसने उड़ा ! अरे वह कैसे ?
'फड़' से उड़ा, दूसरा, बोली, उड़ा देखिए ऐसे ॥
भोलापन यह देख चकित हो मुख-छवि खूब निहारी ।
क्षण भर रहा निरखता इकटक, तन की दशा बिसारी ।
फिर इक ठंडी साँस खींचकर दौड़ अधर चुम्बन ले ।
ऊपर उठा लिया हाथों पर लगा लिया सीने से ॥

पृ० ५०

यहाँ सलीम मेहर के भोलेपन पर मुग्ध होता है । अनारकली का शारीरिक सौंदर्य ही प्रेम का प्रथम कारण था । दोनों में यह अन्तर है ।

यहाँ से जो प्रेम उदित हुआ वह बढ़ता ही चला गया । लेकिन बीच में ही जमीला आ धमकी । वह जहाँगीर से प्यार करती थी और मेहर को अपने

रास्ते का काँटा समझती थी। इसलिए उसने अकबर को भड़काया और इस पर अकबर ने मेहर का विवाह शेर अफगन से कर दिया।

जब विवाह हो जाता है तब सलीम का जोश भड़कता है। वह प्रेम में असफल होकर पागल हो जाता है। और उसका पतन हो जाता है। वह चोरों के समान शेर अफगन के घर जाता है और उसे कत्ल करने के लिए मेहर की सहायता की याचना करता है। इस पर मेहर उसे डौंटी है—

कौन ? कौन, क्या तू सलीम है ? क्या सलीम शहजादा ?

पर घर जाकर, तस्कर बनकर, ऐसा नीच इरादा ?

मेरा तो विश्वास और था धोखा मैंने खाया।

जाओ, अभी निकल जाओ तुम, पग जो एक बढ़ाया ॥”

पृष्ठ ६६

लेकिन सलीम का आत्मगौरव तो जैसे मर ही चुका था। उस पर मेहर की इन कड़ी बातों का कोई असर नहीं होता। यहाँ वह प्रेमी के रूप में नहीं विलासी के रूप में ही आता है। उसकी जो बातें हैं वे क्षुद्रतापूर्ण और गिरी हुई सी हैं।

वह यह नहीं सोचता कि मेहर ब्याही जा चुकी है। विवाह से पहले अगर वह कुछ करता तो और बात थी। और उसका यह कथन तो क्षुद्रतापूर्ण है—

क्या चुम्बन के नहीं लगे हैं इन अधरों पर ताले।

वही अधर हैं हुए आज यों मुझे रोकने वाले ॥”

पृष्ठ ६८

मैं ही खुद यों लूटा जाऊँ, मुझको कहो लुटेरा।

मुझको ही तुम चोर बनाओ, हृदय चुरा कर मेरा ॥

क्यों आवाज लगाओगी हाजिर हूँ बन्दी करलो।

जंजीरों का कौन काम है मंजु अंक में भरलो ॥

पृष्ठ ६९

आखिर मेहर की क्रोधभरी बातों के सामने इसे झुकना ही पड़ता है और वह चला जाता है। लेकिन जाते-जाते भी वह कहता है उससे स्पष्ट है कि उसे अपने किए पर पश्चात्ताप नहीं है। वह अपनी गलती महसूस ही नहीं

करता । फिर भी मेहर को दोषी ही ठहराता है—

ओ पाषाण हृदय ! बस बस अब जाता हूँ मैं जाता ।
क्या सचमुच तू वही मेहर है समझ नहीं कुछ आता ॥
कल जो प्यार मुझे करता था आज वही दुत्कारे ।
आज तलक के कोमल नाते रौंदे क्षण में सारे ॥

पृष्ठ ७०

स्पष्टतः यहाँ आकर सलीम का चरित्र बहुत दुर्बल हो जाता है । उसमें गिरावट आ जाती है । यहाँ चरित्र-चित्रण की दुर्बलता है । नूजहाँ के सभी पात्रों के चरित्रों में इस प्रकार की दुर्बलताएँ पाई जाती हैं और इसका कारण कवि की चरित्र-चित्रण विषयक कमजोरी ही है । कवि चरित्र-चित्रण में कुशल नहीं है ।

सलीम जब सम्राट् हो जाता है तब भी मेहर को नहीं भूल पाता । सब वैभव होने पर भी वह कमी का अनुभव करता है, सूनापन अनुभव करता है । अब वह अपने पिता के प्रति भी अपनी नाराजगी प्रकट करता है—

सम्राट् आज हूँ भारत का हूँ सब विभूतियाँ भरी हुई ।
आनन्द अर्क का उदय हुआ निःशेष क्लेश शर्वरी हुई ॥
क्या थी अनीति अपमान घोर, इस पराधीनता वेदी पर ।
वह रत्न खो दिया है मैंने, जिसका पाना अब दुस्तर है ॥

पृष्ठ ६८

इसके बाद वह एक सैनिक नाहरसिंह को शेर अफगन की हत्या के लिए भेजता है । वह लालच में तैयार भी हो जाता है । लेकिन पत्नी के समझाने पर रुक जाता है । इससे यह तो स्पष्ट ही है कि सलीम का चरित्र कितना पतित हो जाता है । वह मेहर को पाने के लिए उसके निर्दोष पति की हत्या कराने के लिए भी तैयार है । भारत सम्राट् का ऐसा इरादा !

लेकिन इस बार असफल होकर भी जहाँगीर को चैन नहीं । वह जमीला का विवाह कुतुबुद्दीन से कर देता है और उससे कहता है कि वह ढाँके के सूबेदार शेर अफगन के स्थान पर तुम्हें सूबेदार नियुक्त किया जाता है ।

इसके बाद शेर अफगन मेहर को साथ लेकर गाँव में रहने लगता है ।

शेर का चरित्र सुघर जाता है और उसे अपनी भूलों का ज्ञान हो जाता है । इसके लिए वह मेहर से क्षमा भी माँगता है । अब उनका जीवन सुख से बीतने लगता है ।

लेकिन जहाँगीर उसके इस सुख को नहीं देख सका । आखिर वह शेर अफगन की हत्या करवा ही देता है । वह शेर अफगन को उसके अन्याय के लिए हटा देता है और खुद जो हत्या करवा देता है उसका न्याय कौन करता ?

इसके बाद वह मेहर को अपने महलों में ठहराता है और उसे हर प्रकार से खुश करने की कोशिश करता है ।

इसमें संदेह नहीं कि इन दिनों जब मेहर बीमार पड़ती है तो वह उसकी सेवा करता है । उसके सिरहाने ही बैठा करता है । उसकी खातिर पानी की तरह रुपया बहाता है । मेहर की माँ कहती है कि उसकी बीमारी में जहाँगीर कितना चिन्तित रहता था—

“तेरी नाड़ी ही की गति पर उनका हृदय धड़कता ।
स्वास्थ्य सुघरता देख हर्ष से उनका अंग फड़कता ॥
उपचारों में सदा निरत थे सब कुछ किया कराया ।
तुझ पर न्योछावर धन करके पानी तुल्य बहाया ॥

पृष्ठ १२५

फिर जब मेहर स्वस्थ हो जाती है तो जहाँगीर उससे बात-चीत करने का प्रयास करता है और उससे नाराजगी का कारण पूछता है तो वह बताती है कि ‘तुम मेरे पति के हत्यारे हो, मुझ से दूर रहो ।’

उसके उत्तर में जहाँगीर जो कहता है उसमें भी वह अपनी भूल पर पश्चात्ताप नहीं करता और बल्कि गर्व के साथ उसका उल्लेख करता है तथा सामान्य विधा-सी व्यक्तियों जैसी बातें करता है ।

तुरत पैर पर गिर सलीम ने कहा क्षमा कर रानी ।
मेँ हत्या का अपराधी हूँ गलती मैंने मानी ॥

स्वाभाविक है प्रेमी होकर प्रतियोगी से जलना ।

और उसे परास्त करने को सब कुछ चालें चलना ॥

पृष्ठ १३१

और आगे वह कहता है कि मेरा मन हार कर यह निश्चय कर ही बैठा कि तुम्हें किसी प्रकार भी अपनाया जाए । और इस उद्देश्य के लिए मैंने मार्ग के काँटों को तोड़ दिया—

पर आ ही वह गया प्रेम के बहकावे में आखिर ।

प्रण कर लिया तुम्हें अपनाने का कैसे भी हो फिर ॥

यह गुलाब पाने में जिन काँटों ने बाधा डाली ।

उन्हें तोड़ कर मुक्त कर दिया प्रिय गुलाब की डाली ॥

पृष्ठ १३१

अन्त में आकर वह फिर मेहर से निवेदन करता है, आग्रह करता है और वह स्वीकार कर लेती है—

सब बोझा अपने ऊपर ले जीवन दे मैं सींचूँगा ।

तब सेवा-सम्पादन से मैं हाथ कदापि न खींचूँगा ॥

तुम केवल यह ताज पहन कर मेरे सम्मुख खिली रहो ।

मैं अपनापन तुम में खोदूँ तुम मुझ से ही मिली रहो ॥”

पृष्ठ १४५

यह ठीक है कि जहाँगीर ने मेहर की बहुत सेवा की, वह उसे प्रसन्न रखना चाहता था उसकी खुशी के लिए अपना जीवन तक देने को तैयार था लेकिन फिर भी उस पर शेर अफगन की हत्या का कलंक लगा वह नहीं हट सकता । अगर उससे सच्चाई के साथ अपनी इस भूल पर पश्चात्ताप करवाया जाता तो शायद यह कलंक हल्का हो जाता ।

मेहर से ज़मा भर माँग लेने से उसका दोष हल्का नहीं हो जाता ।



कलापक्ष और भावपक्ष

अब नूरजहाँ के कलापक्ष और भावपक्ष पर विचार किया जाएगा। रचना की भाषा, अलंकार, छंद आदि का विवेचन कलापक्ष में किया जाता है और भावपक्ष में भाव, रस और गुण आदि की चर्चा होती है।

कलापक्ष

नूरजहाँ की भाषा खड़ी बोली है। बोलचाल के शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। प्रायः संवादों में बोलचाल की भाषा है जो सभी को समझ में आ जाती है। बोलचाल की भाषा होने के बावजूद भी भाषा में प्रवाह है और रोचकता है।

उदाहरण लीजिए। जब बाग में मेहर आती है तो सलीम उसे देखकर कहता है “देखो मैंने नया कबूतर फाँसा है।” इस पर वह उत्तर देती है—

“उसने कहा तुम्हीं रखो यह अपना नया तमाशा।

थी गुलाब का फूल तोड़ती सरका वहीं जरा पग।

बड़े जोर से काँटा मेरे कर में तुरत गया लग ॥

फूल सभी गिर गए धरा पर, कर से अंचल छूटा।

देखो नहीं रक्त बहने का तार अभी तक टूटा।

वह अँगुली से लगा देखने, छूते ही ‘सी-सी’ कर।

कहने लगी अरे मत छूवो ! अरुण नयन आये भर ॥

पृ० ४६

इसमें पहली पंक्ति में कैसी खीझ व्यक्त होती है।

संवादों की भाषा सरल है। लेकिन जहाँ कवि वर्णन में प्रवृत्त होता है वहाँ भाषा प्रायः संस्कृतगर्भित और गंभीर हो गई है। और ऐसा होना स्वाभाविक भी है। यह उदाहरण देखिए—

“था निशीथ, कालिन्दी कलकल शान्त था।

था मारुत हो श्रान्त कहीं पर सो रहा ॥

३१

सुप्त धरा का रजनी-तम से मलिन मुख ।
जगमग नभदीपों ही से है हो रहा ॥
तटवर्ती प्रासादों के प्रतिबिम्ब-शिशु ।
निश्चल सोते थे यमुना के वक्ष पर ॥
जिनकी व्योम-विचुम्बी वर श्रट्टालिका ।
व्योम मीन को बेध रही थी लक्ष्य कर ॥

पृ० २२

यहाँ रात का वर्णन है और उसके विविध उपकरणों का भी चित्र खींचा गया है ।

उस उद्धरण की भाषा और ऊपर वाले उद्धरण की भाषा की तुलना करने से प्रतीत होता है कि बोलचाल की एवं संस्कृतगर्भित दोनों प्रकार की भाषाओं पर कवि का अच्छा अधिकार है ।

कवि का मुहावरों पर भी अच्छा अधिकार है । वैसे तो मुहावरों का थोड़ा बहुत प्रयोग तो सभी पात्रों की भाषाओं में मिल जाएगा लेकिन जमीला के संवादों में तो मुहावरों का प्रयोग प्रचुरता के साथ हुआ है । नीचे के उद्धरणों में मुहावरों का प्रयोग देखिए—

वह साथ साथ खेली मेरे अब आँखें लगी चुराने है ।
मैं उसको अभी पढ़ाऊँगी वह मुझको चली चराने है ।
मैं उसकी प्रिय हमजोली हूँ वह मुझसे प्रेम छिपाती है ।
अब उसने पैर निकाले हैं बातों में मुझे उड़ाती है ॥
वह डाल-डाल मैं पात-पात वह मुझसे पार न पायेगी ।
मुझको जो हवा बताती है तो स्वयं हवा हो जाएगी ॥’

पृ० ५३

यहाँ आँखें चुराना, पढ़ाना, चराना, पैर निकालना, बातों में उड़ाना, डाल-डाल, पात-पात, पार न पाना, हवा बताना, तथा हवा हो जाना मुहावरों को सुन्दर प्रयोग हुआ है । और विशेषता यह है कि इतने अधिक मुहावरों के बावजूद भी अस्वाभाविकता नहीं आ पाई ।

साहित्य की भाषा में एक यह विशेषता होनी चाहिए कि वह विषय के

अनुसार बदलती जाए, तथा भाव के अनुसार ढलती जाए। यह एक बहुत बड़ी विशेषता है और भाषा की भावानुकूलता कहलाती है। इसके दो उदाहरण दिए जाएँगे।

पहले उदाहरण में मेहर सर्वसुन्दरी से पति की शिकायत करती है। इसमें जोश है। वैसा ही जोश और आवेग उसकी भाषा में भी पाए जाते हैं—

‘सर्वसुन्दरी चुप क्यों हो ! कुछ कहो तुम्हारी क्या मति है।
क्या कहती हो मैं चुप यों ही सहा करूँ ऐसी दुर्गति ?
नहीं, नहीं यह कभी न होगा, कभी न होने दूँगी मैं।
मानवता-विहीन पति का अन्याय न यों सह लूँगी मैं।’

पृ० ८८

नीचे दिए उद्धरण की भाषा में आप गंभीरता पाएँगे जो कि उसके भाव-अनुरूप है। शेर अफगन के मारे जाने के बाद सर्वसुन्दरी मेहर को समझाती है। उसका उपदेश गंभीर है इसलिए भाषा में गंभीरता पाई जाती है—

‘दिवस-निशा-कूलों में बहती है अनन्त जीवन की धार।
लहरों का सिरजन होता रहता है लहरों का संहार ॥
यों ही बनता और बिगड़ता ब्रह्म सलिल ही में आसीन।
जीव रूप बन उठ जाता है हो जाता फिर वही विलीन ॥’

पृ० १२०

अलङ्कार-काव्य में अलंकारों के प्रयोग से अधिक चमत्कार आ जाता है। लेकिन अलङ्कारों के प्रयोग पर कवि को थोड़ा बहुत नियंत्रण करना चाहिए। कारण यह है कि अलङ्कार तो सौन्दर्य बढ़ाने के साधन हैं। मुख्य चीज तो भाव है, रस है। अगर अलङ्कारों पर कवि का ध्यान अधिक रहता है तो भाव छिप जाते हैं, रस दब जाता है और काव्य में शक्ति का अभाव हो जाता है।

‘नूरजहाँ’ में कुछ सांगरूपक बहुत सुन्दर बन पड़े हैं। उदाहरण के लिए जंगल में पड़ी बच्ची मेहर का यह वर्णन देखिए—

‘यह भावी रहस्यमय अभिनय की पहली ही भाँकी है।

यह सुभग चित्र किसने खींचा ? क्या मूर्ति गढ़ी यह बाँदी है ?

सुरभित पुष्पों की रज और लेकर मोती का पानी ।
हिमबालाओं के कर से जो गई प्रेम से सानी ॥
पृथ्वी का चाक चलाकर दिनकर ने मूर्ति बनाई ।
छवि फिर बसंत की लेकर उसमें डाली सुघराई ॥
चरखे नक्षत्रों के चल थे सूत कातते जाते ।
जिनको लपेट रवि, कर से, थे ताना सा फैलाते ॥
सुन्दर विहंग आ-जाकर उसमें बुनते थे बाना ।
फिर सांध्य जलद भर जाता तितली का रंग सुहाना ॥
ऐसे अनुपम पट में थी शोभित वह विश्व निकार्ड ।
जिसकी छवि निरखि निरखि कर मोहित थी विधि निपुणाई ॥

पृ० १७-१८

यहाँ मेहर का वर्णन एक मूर्ति के समान किया गया है । मूर्ति बनाने के लिए जिन-जिन उपकरणों की आवश्यकता होती है सब का वर्णन है । मूर्ति बनाने के लिए मिट्टी चाहिए और पानी चाहिए । मेहर का निर्माण फूलों के पराग और मोती के पानी से हुआ है—उसमें फूलों के पराग सी सुगन्धि है और मोती के पानी सी शोभा है ।

मिट्टी और पानी को लेकर कुम्हारिनें मिलती हैं । फिर यह गीली मिट्टी चाक पर चढ़ाई जाती है और कुम्हार मूर्ति बनाता है । और अन्त में उसे सुडौल बनाता है ।

मेहर के निर्माण के लिए फूलों के पराग और मोती के पानी को पर्वतीय बालाओं ने मिलाया है । फिर सूर्यरूपी कुम्हार ने पृथ्वी रूपी चाक को चला कर उसे बनाया और बसंत की शोभा उसमें मिलाई ।

मेहर वस्त्र से मढ़ी हुई थी । अब उस वस्त्र के बुनने का सांगरूपक चलता है ।

नक्षत्र रूपी चरखे चल चल कर सूत कातते थे । सूर्य उनको अपनी किरणों रूपी हाथों से फैला कर ताने के समान फैला देता था । सुन्दर पक्षी उसमें आ-जाकर बाना बुना करते थे । और संध्या का आकाश उसमें तितलियों

सा सुहाना रंग भर जाता था ।

ये दोनों ही सांगरूपक—मेहर का मूर्ति के साथ और वस्त्र का—पूर्ण हैं और स्पष्ट हैं । ऐसे और भी सांगरूपक इसमें मिलते हैं ।

सांगरूपक का एक दूसरा उदाहरण देखिए । अनारकली जंगल में एक नदी के किनारे पहुँची—

“गहन विपिन में भूली भूली आई इक सरिता के तीर ।

सहज करों से खींच रहा है दिननायक जिसका वर चीर ॥

वे पानी होने के भय से कृष्ण कृष्ण चित्लाती है ।

मीन ब्याज तड़पी जाती है लहर ब्याज बल खाती है ॥

अचल बने गिरि निरख रहे हैं पत्थर की करके छाती ।

पानी खो, पानी पानी हो, तरुणी है रोती जाती ॥

किन्तु खड़ा वह नटनागर हो परदे में उस निर्भर के ।

जल-प्रपात का अम्बर देकर आबखां का पट दे दे ॥

मथ मंथन कर दिया सूर्य का, कर अनंत उस सारी को ।

लज्जित हो फिर डूब गया रवि शीश नवा बनवारी को ॥

यहाँ नदी द्रौपदी है । सूर्य दुःशासन है । जल वस्त्र है । कल-कल ध्वनि कृष्ण की आवाज है । मछली की चंचलता तड़पन है, लहरें बल खाना है । भीष्म आदि चुपचाप द्रौपदी का चीर हरता देखते रहे । इधर पर्वत खड़े ये सब देख रहे हैं । कृष्ण ने द्रौपदी का चीर बढ़ाया । इधर भरना नदी का वस्त्र बढ़ा रहा है । जैसे दुःशासन हार गया था वैसे ही सूर्य भी हार कर शाम को डूब गया ।

शाही बाग के वर्णन में मुद्रा अलंकार की छटा देखिए :

“इन दोनों ने श्वेत श्याम शतरंजी वहाँ बिछाई ।

जिस पर ‘संखों’ के प्यादों ने अपनी चाल दिखाई ॥

जल-विहार के लिए कभी ‘कस्ती’ को हैं दौड़ाते ।

‘हाथी’, ‘घोड़े’, ‘बादशाह’ को, अपनी चाल दिखाते ॥”

श्लेष अलंकार का प्रयोग देखिए—

बौराए 'रसाल' 'रम्भा' संग 'नारिकेल' में रत हैं ।

विविध 'ताल' ऊँचे सुशाल रोके सिर पर नभछत हैं ॥

इस रचना में कुछ गीत भी हैं । इन गीतों की भाषा अधिक सरस, मधुर और संगीतात्मक है । उदाहरण देखिए । मेहर गा रही है—

तू चलती जा इठलाती री मेरी नौका मदमाती ।

पाल-परों को अपने खोले, डगमग-डगमग तनिक न डोले,

बदन तोलती जाती री, हंसावलि को लजवाती...तू

सर-सितार के तार बजाती, सुन्दरियों से छेड़ मचाती,

स्वर-लहरी उपजाती री, अंगुलि सी गड़ती जाती...तू

पृ० १४०

भावपक्ष

साहित्य में जीवन का चित्रण होता है—व्यक्ति तथा समाज की वास्तविक दशा का, उनकी समस्याओं का, उनकी सफलताओं-असफलताओं की झलकें मिलती हैं । नूरजहाँ में समाज का चित्रण नहीं हुआ है । वह व्यक्तिपरक काव्य है । क्योंकि उसमें व्यक्तियों के जीवन पर ही प्रकाश पड़ता है ।

व्यक्ति के जीवन का एक पक्ष भाव पक्ष होता है । व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों में हँसता है और प्रतिकूल परिस्थितियों में रोता है । यही परिस्थितियाँ व्यक्ति में विविध भावों की सर्जना करती हैं । और यही विविध भाव साहित्य में भी दिखाई देते हैं ।

जीवन में भाव उत्पन्न होने के कारण होते हैं । साहित्य में जब हम उन कारणों का चित्रण करते हैं तो वे कारण विभाव कहलाते हैं । जीवन में भावों को पुष्ट करने के सहकारी कारण होते हैं । साहित्य में उन कारणों का चित्रण होता है तो उन्हें व्यभिचारी या संचारी भाव कहते हैं । जीवन में भाव पैदा होने पर उसके कुछ कार्य होते हैं जैसे क्रोध के भाव में मारना पीटना । जब साहित्य में इन कार्यों का चित्रण होता है तो उन्हें अनुभव कहा जाता है ।

जीवन के पक्ष में भाव की पूर्ण अभिव्यक्ति तभी मानी जाती है जब कारण, सहकारी कारण और कार्य तीनों उपस्थित हों । साहित्य में भी भाव की पूर्ण

अभिव्यक्ति के लिए विभाव, संचारी भाव और अनुभाव तीनों होते हैं। कभी-कभी केवल विभाव के चित्रण से भी भाव-प्रकाशन होता है।

विभाव, संचारी भाव और अनुभाव तीनों से पुष्ट भाव को रस कहा जाता है। इसलिए जब हम किसी रचना के भाव पक्ष का विवेचन करते हैं तो उसमें रस भी आ जाता है।

नूरजहाँ का मुख्य भाव प्रेम है। पहले सलीम और अनारकली के प्रेम का चित्रण है और फिर सलीम और मेहर के प्रेम की कहानी चलती है। इन दोनों ही प्रेमों में दोनों पक्षों का चित्रण हुआ है। मिलन पक्ष या संयोग पक्ष का भी और विरह-पक्ष या वियोग पक्ष का भी। पहले अनारकली के प्रेम की व्यंजना पर प्रकाश डालेंगे और फिर मेहर के प्रेम पर।

अनारकली से सलीम के प्रेम का उदय तब होता है जब वह उसका नृत्य देखता है। वह उसका रूप और उसकी कला देखकर मोहित हो जाता है—

कला निरख कर विमुग्ध होकर,
छटा निरख कर हुआ विमोहित।
कुमार बोला कि आज तूने,
कमाल दिखला चुरा लिया चित्त।
ये हार मेरे गले का ले अब,
तू हार मेरे गले का हो जा।

पृ० २५

यहाँ इस प्रेम का कारण है अनारकली। साहित्यिक शब्दावली में उसे आलम्बन विभाव कहेंगे। उद्दीपन विभाव है उसकी कला और सलीम का आवेश आदि अनुभाव है।

लेकिन संयोग शृंगार के इस दृश्य में शारीरिकता आगई है जैसा कि इन पंक्तियों से स्पष्ट होगा। सलीम की बातें सुनकर अनारकली उसे प्रणाम करती है—

प्रणाम कर वह कृतज्ञता से,
भुका निगाहें शरम से गड़कर।

हटाये पीछे को पैर ज्यों ही,
कुमार ने अंक में लिया भर ।
भुका के सर को निकाल धूँघट,
दृगों को उसने लजा के भींचा ।
कपोल को चूम चूम करके,
कुँवर ने रमणी को पास खींचा ।

पृ० २५, २६

लेकिन धीरे-धीरे यह शारीरिकता दूर हो जाती है और उनके प्रेम में मानसिकता की प्रधानता होने लगती है ।

लेकिन सलीम और अनार का प्रेम जैसे ही अंकुरित होता है, उस पर अकबर के क्रोध का तुषारपात होता है । यहाँ से उनके प्रेम की विषमता का आरम्भ होता है ।

अकबर अनारकली को कैद कर देता है और अनारकली सलीम को याद करके इतनी प्रार्थना करती है कि अन्तिम समय में उसके दर्शन हो जाएँ । अनारकली के ये उद्गार शुद्ध प्रेम से भरे हुए हैं जो हृदय पर प्रभाव डालने की शक्ति रखते हैं । उसके मन में बलिदान की भावना जड़ पकड़ती है !

वह कहती है—हे प्रिय तुम पर कोई कष्ट न आए । मैं स्वयं मरकर भी दुर्दैव को प्रसन्न करूँगी । मैं तुम्हीं से प्यार करती हूँ और तन मन धन तुम पर न्यौछावर कर देना चाहती हूँ—

तुम पर कुछ आँच न आये प्रिय जीओ मैं मर जाऊँ ।

दुर्दैव अनिष्ट करे क्यों ? मैं बलि हो उसे मनाऊँ ॥

तुम कुछ संदेह न करना मैं तुम्हें प्यार करती हूँ ।

मैं तन मन धन से प्यारे तेरे ऊपर मरती हूँ ।

पृ० २८

इसके बाद उसकी अन्तिम इच्छा है प्रिय-दर्शन की । वह मृत्यु से नहीं डरती । इसलिए वह कहती है जब जीवन का अन्त होता है, नदी सागर से मिलने के लिए अन्तिम चरण धर रही हो, जब एक बूँद में ही जीवन का प्याला भरने वाला हो, जब दीपक का तेल समाप्त हो गया हो और बत्ती-

बुझने वाली हो, जब चिरनिद्रा में सोने से पहले नेत्र तुम को ढूँढ़ रहे हों तो तुम आ जाना—

जब नहीं कामना कोई सुख-शान्ति भंग करती हो ।
जब सागर से मिलने सरि अंतिम पगको धरती हो ॥
जब जोवन हरी चरी को होवे मृग चरने वाला ।
हो एक बूँद में भरने वाला जीवन का प्याला ॥

× × ×
दीपक का स्नेह चुका हो बुझने पर होवे बत्ती ।
जब हो हिसाब कर डाला चुकता कर रत्ती-रत्ती ॥

× × ×
चिर निद्रा में सोने से पहिले जब नयन बेचारे ।
हों ढूँढ़ रहे जब तुमको तब आ जाना तुम प्यारे ॥

पृ० २६

जब अकबर वीसों प्रकार से अनारकली को लुभाने की चेष्टा करता है, राज्य, शक्ति, वैभव, शासन आदि का आकर्षण दिखाता है तब भी अनारकली अपने प्रेम पर दृढ़ रहती है और अन्त में सलीम के हित को देखते हुए जीवन बलिदान कर देती है । मरने से पहले वह सलीम से कहती है—

“अब जाओ तुम राज्य करो, मत बादशाह को रुष्ट करो ।
इस दासी के संग न प्यारे अपना जीवन नष्ट करो ॥
मैंने प्यार तुम्हारा पाया जो जीवन का केवल सार ।
उसे छोड़ सब क्षणभंगुर है एक अमर है सच्चा प्यार ॥

पृ० ४१

और यहाँ यह प्रेम-कहानी समाप्त हो जाती है ।

इसके बाद सलीम और मेहर के प्रेम का आरम्भ होता है । उनके प्रेम का आरम्भ शाही बाग के मनोरम वातावरण में होता है जबकि मेहर के हाथ से कबूतर उड़ जाता है तथा जहाँगीर के प्रश्न करने पर वह दूसरा कबूतर भी छोड़ देती है । इस सरलता पर वह मुग्ध हो जाता है ।

इसके बाद प्रेम के ये दोनों साथी बागों-बगीचों में घूमते रहते हैं और

फूलों के हार आदि बनाकर अनेक प्रकार की प्रेम-क्रीड़ाएँ किया करते हैं।

लेकिन इनके प्रेम पर भी अकबर के क्रोध का आघात होता है। ईर्ष्या के कारण जमीला इस प्रेम के रहस्य को अकबर तक पहुँचा देती है। वह निश्चय कर देता है कि मेहर का विवाह शेर अफगन के साथ होगा और शीघ्र ही यह विवाह हो जाता है।

विवाह के बाद सलीम शेर अफगन की हत्या करने के लिए उसके घर जाता है। मेहर जाग रही है। वह उससे शेर अफगन के बारे में पूछता है।

यहाँ मेहर की अवस्था बड़ी विषम हो जाती है। एक ओर प्रेम है दूसरी ओर कर्त्तव्य। प्रेम और कर्त्तव्य के इस संघर्ष के कारण यह कद सकते हैं कि इनके प्रेम का थोड़ा बहुत विकास हुआ है। प्रेम और कर्त्तव्य के इस संघर्ष में मेहर शीघ्र ही कर्त्तव्य के पक्ष में निश्चय कर लेती है और अपने प्यार को भुला कर सलीम को डौंटी है—

“कौन ? कौन ? क्या तू सलीम है ? क्या सलीम शहजादा ?

पर घर जाकर तस्कर बनकर ऐसा नीच इरादा ?

मेरा तो विश्वास और था, धोखा मैंने खाया।

जाओ, अभी निकल जाओ तुम, पग जो एक बढ़ाया ॥”

पृ० ६८

मेहर की यह डाँट सुनकर भी सलीम वापिस जाने को तैयार नहीं होता। वह उसे अपने पुराने प्यार की याद दिलाता है। कहता है मेहर तुम यह क्या कह रही हो ? मेरी होने वाली मलिका को किसने अपनाया है ? क्या तुम्हारे इन ढोंठों पर मेरे चुम्बन के ताले नहीं लगे हैं ?

“मेहर मेहर क्या कहती हो मैं हो गया पराया।

मेरी भावी साम्राज्ञी को किसने है अपनाया ?

क्या चुम्बन के नहीं लगे हैं इन अधरों पर ताले।

वही अधर हैं हुए आज यों मुझे रोकने वाले ॥

पृ० ६८

लेकिन मेहर फिर भी अडिग है। वह इन पुरानी स्मृतियों को कुचल देती है। सलीम के दिए प्रलोभनों से आँखें फेर लेती है। और अपने पति

का रक्षा के लिए अपना बलिदान करने को तैयार हो जाती है, सलीम से खून बहाने पर तैयार हो जाती है--

“बालकपन से पूछो जाकर उच्छृंखलता सारी ।
सुमन विकास, मधुर अलिगुंजन, मुक्ताग्रों की क्यारी ॥
ऊषा निज अंचल में भरकर चलती हुई बेचारी ।
जब से उस विवाह-दिनकर की निकली इधर सवारी ॥
आज सलीम ! बात करते हो जिससे पर नारी है ।
जो अपने-कर्त्तव्य धर्म पर तन मन धन हारी है ॥

पृ० ६६

इस प्रकार कर्त्तव्य की जीत होती है लेकिन अन्त में चलकर मेहर पति के हत्यारे के साथ ही विवाह कर लेती है ।

प्रेम के दूसरे पात्र सलीम का विश्लेषण किया जाए तो वह प्रेमी के रूप में सफल नहीं हो पाया । उसका प्रेम वासनात्मक है जिसके आवेग में वह शेर अफ़ग़न की हत्या करवाने से भी नहीं चूकता ।

जब मेहर बंगाल के लिए विदा होती है तो उसका विदाई का सन्देश वियोग-वेदना से भरा है । वह पुरानी स्मृतियाँ भुला देती है । लेकिन वे तो रह रह कर याद आती हैं—

विस्मृति-सागर में डुबा रही हूँ हठकर आती याद विदा !
वह लहरों सी उठ आती है इंगित से बुला सनाद विदा ॥
वे हिचकी बनकर आते है आंसू बन कर हो गए विदा ।
वे पीड़ा बनकर उठते हैं किस्मत बनकर सो गए बिदा ॥

पृ० ७३

पति की हत्या होने के बाद मेहर चार वर्ष तक अपने प्रेम को दबाने की कोशिश करती रही लेकिन अन्त में वह हार गई और उसने सलीम के साथ विवाह की स्वीकृति दे दी । जहाँगीर कहता है—

“हो प्रसन्न जीवन को मेरे मुस्कानों से दो तुम भर ।
रानी नूरजहाँ बन अब तुम, चमको जग में प्रिये मेहर ॥”

प० १४५

इसके बाद कवि ने इस प्रकार मेहर की स्वीकृति को चित्रण किया है—

प्रेम अश्रु भूलके आँखों में, भुका दिया रमणी ने सर ।

जहाँगीर ने गदगद हो रख दिया ताज उसके सर पर ॥

चिड़ियों ने संगीत सुनाया भँवरों ने गुन गुन गाया ।

नूरजहाँ के सिक्कों ने सिक्का उसका ही जमवाया ॥

पृष्ठ १४५

शेर अफगन मारा जाता है तब सर्वसुन्दरी उसे आकर समझाती है । उसके कथन में करुणा एवं विरक्ति के भावों का सुन्दर और प्रभावोत्पादक चित्रण हुआ है । यद्यपि यह कथन छोटा है लेकिन प्रभाव की गम्भीरता के कारण बड़ा महत्वपूर्ण है । करुणाभाव देखिए—

फूला हुआ गर्व में इतना अरे बुदबुदे फूट गया ।

बिखर गये मोती तत्त्वों के जीवन धागा टूट गया ॥

तेरा वैभव बल घमंड धन क्या सारा ही छूट गया ।

तू दुनिया को लूट चुका था तुझे कौन यों लूट गया ॥

स्नेहहीन दीपक मिट्टी का ! ज्योति कहाँ वह हुई विदा ।

ओ मरघट का अनल ! जला जग, बुझ कर अब सोया है क्या ।

पृष्ठ १२०

और विरक्ति का वर्णन देखिए—

इस शव पर अब क्या रोती हो यह तो सब का ही है अन्त ।

यह पतझड़ है जीवन तरु में फिर आवेगा वही बसंत ॥

पृष्ठ १२१

इसके अतिरिक्त जमीला के संवादों में ईर्ष्या का चित्रण हुआ है तथा शेर अफगन के चरित्र में क्रोध आदि भावों का वर्णन मिलता है । लेकिन प्रधानता प्रेम की ही है ।



प्रकृति-चित्रण

साहित्य में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान रहा है । और यह महत्व प्रकृति को तभी से मिलता रहा जब से साहित्य का जन्म हुआ । भारत के आदिकवि महर्षि वाल्मीकि के रामायण काव्य में प्रकृति का विस्तृत और मधुर चित्रण हुआ है ।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल में भी प्रकृति-चित्रण होता रहा । चाहे उसकी प्रणाली बदल गई लेकिन प्रकृति का वर्णन सभी कवि थोड़ा बहुत करते ही आए हैं ।

आधुनिक युग में आकर आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने काव्य में प्रकृति के महत्व पर बहुत बल दिया और इस बात को बार-बार लिखा कि साहित्य में प्रकृति का जो महत्वपूर्ण स्थान है उसे भुलाना नहीं चाहिए ।

नूरजहाँ में भी प्रकृति के विविध रूपों का सुन्दर चित्रण हुआ है । इस काव्य का सबसे उज्ज्वल पक्ष यही है । जैसा कि पीछे की आलोचना में आपने देखा होगा, नूरजहाँ के अन्य पक्षों में थोड़ी बहुत कमजोरियाँ पाई जाती हैं । लेकिन यह पक्ष—प्रकृति-चित्रण का पक्ष—सूक्ष्म, काव्योचित और सराहनीय है ।

प्रकृति के विविध अंगों का और रूपों का वर्णन नूरजहाँ में मिलता है । एक ओर अरब के रेगिस्तान का वर्णन है तो दूसरी ओर काश्मीर की हरी-भरी प्रकृति का वर्णन है । बंगाल की शोभा भी मिलेगी और गाँव की प्रकृति-की भाँकी भी । ऊषा, संध्या और रात्रि का भी वर्णन है । नदियों और पहाड़ों का दृश्य भी दिखाई देता है । अब इन सब के उदाहरण दिए जाएँगे ।

इस रचना का आरम्भ ही फारस के वसंत 'नैरोज' के वर्णन से होता है ।

वहीं से हमें यह स्पष्ट दिखाई देने लगता है कि कवि के हृदय पर प्रकृति के सौन्दर्य का पूरा-पूरा प्रभाव है और उसने प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण किया है।

इसी प्रकार इस काव्य का अन्त भी काश्मीर की प्रकृति की गोद में हुआ है जहाँ की शोभा वसंत की शोभा से किसी भी दृष्टि से कम नहीं। काश्मीर प्रदेश के प्रकृति-चित्रण में भी सूक्ष्म निरीक्षण की विशेषता मिलती है। और रचना के बीच-बीच में जहाँ भी कवि को अवसर मिला है उसने प्रकृति-चित्रण की ओर विशेष ध्यान दिया है।

फारस प्रदेश की प्रकृति

गयास बेग अपनी पत्नी से नौरोज का वर्णन कर उससे प्रकृति में बिहार करने को कहता है। नौरोज के आने पर वृक्ष फूले नहीं समाते। पहले वे उदास और सूने सूने से थे, निराशा और व्यथा के प्रतीक थे, इसी से इस परिवर्तन का चित्रण करने के लिए यह कल्पना की गई है कि वृक्षों ने वायु के दूत के सहारे माधव के पास पत्र भेजे थे और उसके आगमन पर वे हर्षित हो रहे हैं—

‘प्रेम पत्र जो भेज चुके थे पवन दूत से माधव पास,
राह किसी की देख रहे थे, खड़े खड़े ही, बने उदास।
ये साकार निराशा मानो मूर्तिमान थी हुई व्यथा,
गिरि-अलबुर्ज रजतपट पर थी अंकित मानो विरह-कथा।
जगा रहे थे अलख दिगम्बर घाटी जो ऐसे तरुवर,
वे भी फूले नहीं समाते आज भेंट निज कुसुमाकर ॥’

पृ० १,२

इसी संवाद में आगे चलकर फारस प्रदेश के विशेष पेड़ों और वृक्षों का वर्णन किया गया है। स्थानीय प्रकृति-चित्रण के द्वारा काव्य में यथार्थ सौंदर्य की वृद्धि हुई है। और साथ ही कवि की सूझ का परिचय भी मिलता है।

करते हैं विहार पर्वत पर ‘शाह-बलूत’ और ‘आजाद’,
सुन्दरता के पुतले बनकर शोभा सरसाते शमशाद।

लचका देता बड़े लोच से 'सरो' सुडौल सुरम्य शरीर,
निर्निमेष नयनों से 'नरगिस' लखती रहती यह तसवीर ।

पृष्ठ २

इन पंक्तियों में तो फारस के विशेष पेड़ों का शाहबलूत, आजाद, शम-
शब्द, और सरो तथा फूलदार पौदे नरगिस का वर्णन है । नीचे उद्धृत
पंक्तियों में फारस के पक्षियों का वर्णन है—

सुन्दर गति से घूम-घूम कर 'कब्क-दरी' बिहार करता,
'दुर्रज' घासों में से मिट्टी हटा हटा दीमक चरता ।
'तीहू' और 'हुबारे' के कलरव से वन गुँजा करता,
भाड़ी से खरगोश निकल कर टूँग-टूँग है तृण चरता ।

पृष्ठ २

यहाँ कब्क-दरी, दुर्रज तीहू और हुबारा ये फारस के विशेष पक्षी हैं ।

रेगिस्तान का वर्णन

गयास और उसकी बेगम भारत के लिए चल देते हैं । रास्ते में रेगि-
स्तान पड़ता है । कवि ने उसका भी वर्णन किया है । चारों ओर रेत की
दुनिया है । उसे देखकर सब की हिम्मत टूट जाती है । जितना तेज चलते हैं
उतने ही पाँव रेत में गड़ जाते हैं । चारों ओर सूर्य की किरणें नाच
रही हैं—

चतुर्दिक् बालू का संसार ।
देख कर हिम्मत जाते हार ॥
तेज जितना चलते कस कर ।
पाँव फँसते जाते धँसकर ॥

×

×

×

नाचती हैं किरणें भू पर ।

आग जलती नीचे ऊपर ॥

पृष्ठ १३

इसी में आगे चलकर नखलिस्तान का वर्णन भी किया है और उसके
साथ जहाज का साँगरूपक बाँधा है—

यकायक आया 'नखलिस्तान' ।
 डूबतों ने पाया जलयान ॥
 खजूर खड़े थे ज्यों मस्तूल ।
 पथिक लख गये हर्ष से फूल ॥
 पाल से पत्ते लहराते ।
 हवा में उड़ते दिखलाते ॥

पृष्ठ १३

नदी का वर्णन

जब अनारकली अकेली जंगल में भटकती फिरती है तभी वह एक नदी के समीप पहुँचती है । उस नदी का कलात्मक वर्णन मिलता है । आकाश-रूपी हँस उसमें नहा रहा था, उसके किनारे कभी भी मनुष्य नहीं आए थे—

सरसी उसको फिर मिली एक जिसमें आकाश नहाता था ।
 नभहंस उतर तरंग में जिसके डूब डूब उतराता था ॥
 उसके तृण संकुल कूलों पर मानव भूल न आये थे ।
 हो स्वतंत्र अनिल के भाँकों से नरकुल, हाँ, तट पर छाये थे ॥

पृष्ठ ३६

गर्मी में सूखती हुई नदी का भी अलङ्कारपूर्ण वर्णन है—

गहन विपिन में भूली भूली आई इक सरिता के तीर ।
 सहस करों से खींच रहा है दिननायक जिसका वर चीर ॥

पृ० ३६

बंगाल का वर्णन

जब मेहर विवाह के बाद अपने पति के साथ बंगाल जाती है तो कवि ने बंगाल का वर्णन किया है । यह वर्णन काफी दूर तक चलता है और अच्छा है—

ऊषा की कोमल किरणों पहिले जिसको नहलाती हैं ।
 जिसके पग पर अगणित नदियाँ आकर सलिल चढ़ाती हैं ॥

जिसका चरणोदक पयोधि ले सूर्य करें द्वारा वह जल ।
बरसा करके सारे जग पर पावन करता विश्व सकल ॥'

पृ० ७३

इसी प्रसंग में गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों का भी वर्णन है—

शंकर-जटा-जाल से गंगा निकली हुई चढ़ी आती ।
जहां ब्रह्मपुत्रा मानस से निकली हुई बढ़ी आती ॥
जहाँ गले मिल मिलकर फिर दोनों सरिताएँ हुईं निहाल ।
बिछ है गया उमंग कर भूपर अगणित स्नेह-स्रोत का जाल ॥

पृ० ७४

गाँव की प्रकृति का वर्णन

मेहर और शेर अफ़गन बंगाल की सूबेदारी छिन जाने पर गाँव में जाकर रहते हैं । कवि ने सोलहवें सर्ग में गाँव के सरल जीवन और प्रकृति का चित्रण किया है । गाँव के वातावरण में आकर मेहर शहरी जीवन की सुख-सुविधाएँ भूल गई ।

कपास भरी जा रही है । कमल मुरझा रहे हैं । ईख रस से भर गई है ।
धान सुनहली होती जा रही है । बालियों पर तोतों का समूह टूटा पड़ता है—
'भरी कपास कमल मुरझाने लगे, ईख हो गई सरस ।
सोने का पानी धानों पर फिरता जाता बरस बरस ॥
यौवन-भार-विनम्र बालियों में तोतों का ताँता है ।
उनके धानी अंचल में सोना सा भरता जाता है ॥

पृ० ११६

गेहूँ, चना और मटर आदि का वर्णन भी किया गया है—

हैं मसैं भीगती गेहूँ की तरुणार्ई फूटी जाती है ।
यौवन में माती मटर बेलि अलियों से आँख लड़ाती है ॥
लोने लोने वे घने चने क्या बने ठने इठलाते हैं ।
हौले हौले होली गा गा धुंधरू पर ताल बजाते हैं ॥

पृ० ११७

काश्मीर की प्रकृति—जहाँगीर मेहर के स्वास्थ्य के लिए तथा उसे लुभाने के लिए उसे लेकर काश्मीर जाता है। वहाँ पर काश्मीर की प्रकृति का भी चित्रण हुआ है।

एक ओर केसर के खेत हैं। दूसरी ओर पर्वतों की चोटियाँ हैं जो बर्फ के कारण सफेद हो रही हैं। सूर्य की किरणें चमचमाती हैं—

सुरभिमय केसर के ये खेत
शिखर वे हिम आच्छादित श्वेत ॥
तरण कर में करते चम चम,
हुआ जब हमें रजत संगम।

पृ० १३४-१३७

सुमन के विरवा बन घनश्याम
बारि-बालाएँ देख ललाम।
रास रच सखियों ही के संग,
केल कर मचा रहे हैं रंग।

पृ० १३७

×

×

×

यह तो हुआ प्रदेशों के वर्णन के बारे में। इनके अतिरिक्त दिवस के विविध महरों—ऊषा, संध्या और रात्रि का वर्णन भी किया है।

ऊषा-वर्णन—प्रातःकाल होते ही फूल खिल उठे हैं। सुगन्धि की लहरें सब को बहा ले जाती हैं। वन और उपवन भँवरों की गुन-गुन से गुंजरित हो रहे हैं। ऊषा ओस की बूंदों की मालाएँ पहने हुए सूर्य के हाथ में हाथ डाले उतर रही है—

नव कुसुमों का मृदुल हास रह रह ले रहा हिलोरें।
भूँग पुंज कर रहा गुंजरित वन उपवन की छोरें ॥
ओस बिन्दु की मालाओं का भूषण भार सम्हाले।
उतर रही मुग्धा ऊषा रवि के कर में कर डाले ॥

पृ० ५५

संध्या—संध्या के इस वर्णन में कवि ने प्रकृति के साथ-साथ मेहर का

भी चित्रण किया है। जहाँगीर संध्या से कहता है—तुम तारे के प्रकाश में अपना सुन्दर रूप दिखाती हो और फिर पता नहीं कहाँ अंधकार के पर्दे में छिप जाती हो। अगर तुम्हें कहीं मेहर मिले तो मेरा संदेशा उस तक पहुँचा देना—

उस तारा के लघु प्रकाश में मंजुल रूप दिखाती ।
सांध्य-सुन्दरी तम-परदे में कहीं छिपी हो जाती ॥
रुको-रुको यदि चन्द्रमुखी को कहीं देख तुम पाना ।
तो दो बातें मेरी भी जाकर उस तक पहुँचाना ॥

पृ० १४३

रात्रि—जब जहाँगीर शेर अफगन की हत्या के लिए उसके घर जाता है तो पृष्ठभूमि के रूप में रात का चित्रण किया गया है। आधी रात है। सारी घरती घने अंधकार से घिरी है। तारे मेघों में छिप गए हैं—मानो वे भी सो गए हों।

अर्ध निशा में महा निविड़तम घेरे था पृथ्वी तल ।
अन्धकार ही अन्धकार दिखलाई देता केवल ॥
अपर लोक वासी के लख पड़ते थे जो दृग तारे ।
वे भी मेघों की पलकों में छिपे नींद के मारे ॥

पृ० ६६

इसी में आगे चलकर वर्षाऋतु का वर्णन किया गया है जो अलंकारपूर्ण है। वर्षा ने मेघरूपी तारों पर बिजली को दौड़ाया इससे मेघ-गर्जन का संगीत सुनाई देने लगा। यह संदेश सुनकर सारी हरियाली आनन्दित हो गई—

वारिद-तारों पर पावस ने बिजली को दौड़ाया ।
हर्षनाद कर मित्रों का आगम जिसने बतलाया ॥
सूख गए थे जड़ जंगम जो विरहानल खा-खा कर ।
पुनः हरा कर दिया उन्हें जीवन-संदेश सुनाकर ॥
हरियाली उट्ठी ऊपर ही मिलने वारिद माला !
पुलकित हो वारिद ने उसके कर में निज कर डाला ॥

नव लतिकाएँ थिरक थिरक कर लगीं नाच दिखलाने ॥
घन-दामिनि सँग, ताल बजाकर लगा रंग बरसाने ॥

पृ० ६६

लेकिन इस नाच और उल्लास के वर्णन के बारे में एक बात ध्यान में रखनी चाहिए। यद्यपि अपने आप में यह वर्णन सुन्दर है लेकिन आने वाली घटनाओं के सर्वथा प्रतिकूल है। यह दोष है जो इस रचना में अन्यत्र भी देखने में आता है।

+

+

+

जैसा कि ऊपर के उद्धरण में आपने देखा, कवि ने ऋतुओं का वर्णन भी किया है। वर्षाऋतु का उदाहरण आप ऊपर देख चुके। अब वसंत और ग्रीष्म ऋतुओं का वर्णन देखिए।

वसंत ऋतु—जमीला वसंत का वर्णन करती है। फूलों को मधुशाला बना देना चाहती है। भंवरे उस से रस-पान करें। कलियों मुस्कराएँ, कोयल पंचम स्वर में गाए—

आया फिर वसंत उपवन में गाओ, गाओ गाओ ।
मेरी ही वीणा के स्वर में अपनी तान मिलाओ ॥
सुमन सुमन तुम मादकता में मधुशाला बन जाओ ।
रसिक-मधुप को प्याले भर भर सौरभ-सुरा पिलाओ ॥
हँसी होंठ पर नाच रही है कलिकाओ मुस्काओ ।
सुमन-मँजीरे पर पत्ते हिल हिल के ताल बजाओ ॥

पृ० ५६

ग्रीष्म—अन्तिम सर्ग में कवि ने ग्रीष्म का वर्णन किया है। इस गर्मी से बच कर मेहर और सलीम काश्मीर जाते हैं।

गजब की गर्मी है। सूर्य ऊपर चढ़ आया है। पसीने की धाराएँ बह रही हैं। घरती से आग की लपटें निकल रही हैं। तालाबों का पानी जलने लगा और रेत जल रही है—

यौवन पर है ग्रीष्म, दिवाकर चढ़ आया है ऊपर ।
नहीं मेघ का नाम कहीं है स्वेद बरसता भर भर ॥

किरणों नाच रही हैं, पृथ्वी से है लपट निकलती ।

पानी जलने लगा सरों का आग रेत पर मलती ॥

पृ० १३४

पवनदूत—मेहर के बङ्गाल चले जाने के बाद सलीम मलयपवन को दूत बना कर मेहर के पास भेजना चाहती है । कहती है तू पूर्व दिशा की ओर जा रहा है । किन्तु कहीं सुगन्धि रूपी सुन्दरी जग न जाए । विरह के सागर में मेरी इच्छा का जहाज जड़ है । तूने उसमें जरा भी गति नहीं भरी—

धीरे-धीरे और मन्दगति जाता है यदि पूर्व, मलय ।

सुरभि सुन्दरी सुमन-सेज पर सोई, जग न जाय निर्दय ॥

विरह सिन्धु के मंद सलिल में प्रिय अभिलाषा का जलयान ।

जीवन में निर्जीव पड़ा है तूने फूँका तनिक न प्रान ॥

पृ० ५७

हे मलय पवन ! जरा मेरा सन्देश उस कठोर मेहर तक पहुँचा दो । उसके दिल को द्रवित कर देना । बचपन के खेलों की याद करा देना और प्रेम की बुझती आग जला देना—

मलयानिल ! संदेश प्रेम का मेरा उस तक पहुँचा दो ।

उसके अति कठोर मानस को रस दे-दे कर पिघला दो ॥

बालापन की क्रीड़ाओं की उसको याद दिला देना ।

कँजाती उस दबी आग को दे दे फूँक जिला देना ॥

पृ० ७६

इस प्रकार इस काव्य में प्रकृति के विविध दृश्यों एवं रूपों का चित्रण हुआ है ।



नूरजहाँ

कथासार

कथासार—कथा का आरम्भ नाटकीय ढङ्ग से कथनोपकथन के द्वारा होता है। मिर्जा गयास बेग अपनी बेगम से बात करता दिखाई देता है। दूसरी ध्यान देने की बात यह है कि कथा का आरम्भ वसंत के आरम्भ से होता है। लेकिन गयास के जीवन में तो पतनरूप छाया है। इस प्रकार आरंभ अपनी विषमता में भावुकता से ओतप्रोत है।

मिर्जा गयास बेग अपनी बेगम से कह रहा है—“हे प्रिया तुम क्यों उदास हो। देखो तो नौरोज—वसन्तोत्सव का त्यौहार आ गया है। सारा संसार आनन्द में भूम रहा है। मगर एक तुम हो कि उदास हो। सारी प्रकृति आनन्द-विभोर हो रही है। जो पेड़ पहले उदास खड़े थे, पत्र-पुष्प से हीन थे, आज वे भी फूले नहीं समाते। चारों ओर सुन्दर हरियाली का कालीन बिछा है। गुलाब के फूल सुगन्धि बिखेर रहे हैं। हवा में अजीब मस्ती है। शाहबलूत, आजाद आदि सारे पेड़ों की शोभा अनुपम है।

ऐसे सुन्दर वातावरण में भी तुम्हारा चेहरा उतरा हुआ है। आँखों में चिन्ता की घनी छाया है। देखो तो पक्षी चहक रहे हैं। वह देखो सामने हरिण का बच्चा है जिसे तुमने ही पालापोसा है। वह भी आशा भरे नयनों से तुम्हारी ओर देख रहा है। बुलबुल प्रेम के तराने छेड़ रही है। प्रिये ! तुम भी प्रेमभरा संगीत छेड़ दो ताकि मैं अपने आप को तुम में भूल जाऊँ। आओ थोड़ी देर के लिए इस प्रकृति के साथ हम भी प्यार की दुनिया में लो जाएँ।’

बेगम ने जब अपने पति की ये बातें सुनीं तो वह चकित रह गई। उसके दिल पर एक चोट लगी और वह दर्दभरे स्वर में बोली “तुम्हें तो रंगरलियाँ

सूखी हैं, यहाँ मैं चिन्ता में घुली जा रही हूँ। दिन-रात जलती रहती हूँ। सारा धन नष्ट हो गया। हाथ में कुछ भी नहीं रहा। एक-एक टके के लिए मुँह देखा करते हैं। मेरी किस्मत ही फूट गई है। जब तुम्हें रोटी के टुकड़ों के लिए मुहताज देखती हूँ तो दिल टुकड़े-टुकड़े हो जाता है। आखिर कब तक तुम अपने मित्रों को अपना रोना सुनाते रहोगे।

हमारे भी दिन थे। हमारे पास धन था, आदर था, सम्मान था। अनेक मेहमान आते-जाते रहते थे। मेहमानों को मेरे सुसर ने आसमान पर चढ़ा दिया था। तुम्हें भी अपने उन मित्रों का बड़ा भरोसा था। पर आज क्या हालत है! सभी तो हम से आँखें चुराते हैं। अगर कहीं कोई मिल जाता है तो बच कर निकल जाता है।

मैं अभी कल के सुखमय दिन नहीं भूलती जब हम सोने चाँदी और हीरों से खेला करते थे। और आज क्या दरिद्रता है। मैं अपना सारा जेवर बेच चुकी हूँ। विवाह के उपहार वाली अंगूठी बची है। कैसे गुजर होगा। मेरे विचार में हम चुपचाप यहाँ से चले चलते हैं। यहाँ रोजगार नहीं तो रहना बेकार है।

यहाँ लोगों के सामने हाथ पसार कर माँगने से तो यही अच्छा है कि हम इस स्थान को छोड़ कहीं दूर चले जाएँ। वहाँ तो मैं घास भी काट सकती हूँ। लेकिन यहाँ रह कर आँसू पीने में क्या अकलमन्दी है।”

बेगम की यह बात सुनकर गयास के दिल पर भी एक चोट सी लगती है और वह कहता है “क्या मुझे अपनी मातृभूमि को त्यागना पड़ेगा। क्या मैं ईरान छोड़कर चला जाऊँ? यहाँ की सुन्दर प्रकृति और मनोहर दृश्यों को भुला दूँ? नहीं-नहीं मैं नहीं जाऊँगा। जिन्दगी विपत्तियों में बीतती है तो बीतने दो। लेकिन मैं अपनी मातृभूमि को छोड़कर नहीं जाऊँगा।”

बेगम पति की बात काट कर बोली—‘बस अब अधिक इस तरह की बातें न करो।’ उसके जी में तो आया कि वह अपने पति को खूब खरी-खोटी सुनाए। पर क्षण भर में ही उसका क्रोध करुणा में बदल गया। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे और उसके हृदय की करुणा को प्रकट करने लगे। फिर करुणा को रोककर बोली—

“इसी प्रकार सहन करते-करते तुम्हारी क्या हालत हो गई है। कब तक तुम इस प्रकार की बातें करते रहोगे? पुरुषों को लज्जित न करो। अपनी शक्ति का भरोसा रखो। यद्यपि हम गरीब हैं लेकिन हमें अपने कर्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। हमारे पूर्वज महान थे और हमारे सामने ऊँचे आदर्श रख गए हैं। हमें उन्हीं पर चलना चाहिए।

चलो हम दोनों नाव चलाने का कार्य आरम्भ कर दें। सागर में हम मुक्त होकर विचरण करेंगे, मजदूरी करेंगे, प्रेम करेंगे और जीवन को सुखपूर्वक बिता देंगे। जब हमारी नाव अनन्त सागर में चला करेगी, आकाश में पक्षी उड़ा करेंगे, हमारी नाव परी के समान चला करेगी तो यह सब देख कर कितना आनन्द होगा।

देखो तो जो चरवाहे कल तक भूखों मरते थे, जो ऊँटवान दाने-दाने को मुहताज थे, आज बाहर जाते हैं। भारत में जाकर व्यापार करते हैं और वहाँ से ऊँटों पर दीनार लाद-लाद कर लाते हैं। सचमुच भारत सोने की चिड़िया है। चलो हम भी भारत चलें।”

गयास ने जब ये बातें सुनीं तो बोला ‘चलो रात बहुत हो गई है। अब सो रहो। कल तक इस पर निश्चय कर लूँगा।’

रात भर गयास को नींद नहीं आई। वह अपनी बेगम के कपड़ों का स्मरण करता रहा। कभी तो मन में आता था कि विदेश चलें और कभी अपनी जन्मभूमि छोड़ने की इच्छा ही नहीं होती थी। फिर उसने सोचा कि बेगम के कपड़ों को दूर करने के लिए मुझे पूरी-पूरी कोशिश करनी चाहिए। यह सोचकर उसने निश्चय कर लिया कि सवेरे ही जाने का प्रबन्ध करेंगे। जो काफिला कल जाएगा, हम भी उसके साथ भारत की ओर चल देंगे।”

सवेरे बेगम आई तो गयास ने उसे अपने निश्चय की सूचना दी। वह बहुत प्रसन्न हुई और अपने पति से जाकर लिपट गई।

फिर अपनी मातृभूमि से बोली “हे मेरे प्यारे देश, मैं कभी भी तुम्हें नहीं भूलूँगी। हे मेरे मृगछोने तुम्हें भी छोड़े जा रही हूँ। मैं तुम्हें आजाद करती हूँ। फिर कभी आई तो तेरे दर्शन करूँगी।” यह कहते-कहते उसकी आँखों से आँसू बरस पड़े।

मुख्य विशेषताएँ

१—नौरोज में प्रकृति का सुन्दर चित्रण है। इस चित्रण में ईरान के पशुओं और वनस्पतियों का वर्णन किया है।

२—गयास और उसकी बेगम के देशप्रेम का भी चित्रण किया है।

३—भारत की महानता का भी संकेत है।



पहला सर्ग

पृष्ठ १-२

“क्यों

कुसुमाकर”

शब्दार्थ—मुरझाई हुई=उदास । बुझा हुआ=निराश । विहार=घूमना । पवन दूत = वायु रूपी दूत—रूपक अलंकार । माधव = वसंत । साकार निराशा मानो=मानो निराशा की मूर्ति---उत्प्रेक्षालंकार । व्यथा = दुख । रजतपट= चाँदी का वस्त्र सफेद । अंकित=लिखी हुई । अलख=ईश्वर । दिगम्बर चारी= पत्तों से रहित । तरुवर-पेड़ । कुसुमाकर=वसंत ।

भावार्थ—भिर्जा गयास अपनी वेगम से कह रहा है—“हे प्रिये तुम क्यों उदास हो ? क्यों तुम्हारे मन में निराशा छाई हुई है ? देखो तो वसंत का त्योहार आ गया है । चलो हम दोनों भी घूम आएँ ।

पेड़ों ने वायुरूपी दूत के द्वारा वसंत के पास अपने प्यार भरे पत्र भेजे थे । वसंत के आने पर ही पेड़ों में पत्ते, फूल आदि आते हैं इसलिए वे उस से प्यार करते हैं और वायु के द्वारा उसे बुलाते हैं । वसंत को आने का निमंत्रण देकर वे पेड़ चुपचाप उसके आने की राह देख रहे थे । वे बड़े उदास थे क्योंकि उन पर न पत्ते थे और न फूल ।

वे पेड़ ऐसे दिखाई देते थे मानो निराशा की मूर्ति हों या दुख की प्रतिमा हों । उन पेड़ों के कारण ऐसा प्रतीत होता था मानो सफेद अलबुर्ज पर्वत पर उनके वियोग की कहानी लिखी हो ।

ऐसे पेड़ वसंत के आने से पहले नंगे थे—उनके पत्ते आदि सब झड़ चुके थे और ऐसा प्रतीत होता था कि वे चुपचाप न दिखाई देने वाले ईश्वर के ध्यान में लीन हों । अब वसंत आ गया है । इसके आ जाने पर ऐसे पेड़ भी आनन्द से उमंगित हो रहे हैं । फिर हम क्यों उदास रहें ।

“शाखाओं

भरता जाता है ।”

शब्दार्थ—वर-विटपो=अष्ट वृक्ष । ललित=सुन्दर । मधुपावलि=भौरों की

पंक्ति । बलि हो=न्योछावर होकर । प्रसून=फूल । हरियाली-समुद्र=हरियाली रूपी समुद्र—रूपक अलंकार । मारुत=वायु । सुरभि-सुरा=सुगन्धि की शराब, रूपक अलंकार । माता=मस्त । मधु=सुन्दर । प्रसूनचय=फूलों का समूह । हिम=बर्फ ।

भावार्थ—बहुत सुन्दर पेड़ हैं । सुन्दर लताएं उन पेड़ों से लिपटी हुई हैं । भौरों का समूह अपने आप को फूलों पर न्योछावर करता हुआ फूलों की बलाएँ ले रहा है ।

चारों ओर हरियाली ही हरियाली दिखाई देती है । ऐसा प्रतीत होता है मानो हरियाली का कालोन बिछा हुआ है । घाटियों में विविध रंगों के फूल खिले हुए हैं जिनसे सारी घाटियाँ रंगीन हो गई हैं ।

हरियाली रूपी सागर में भूम-भूम कर शान्त हो जाता है तब वायु उनकी सुगन्धि रूपी शराब से मस्त होकर भूमता हुआ सा चला आता है ।

सुन्दर फूलों के समूह से पर्वत का दामन भरता चला जा रहा है । बर्फ भी गल-गल कर पानी होती जा रही है । मानो बर्फ की अकड़ कर सारा गर्व नष्ट हो रहा है ।

“मंजुल

मोतियों से भरे हैं ।”

शब्दार्थ—मंजुल=सुन्दर । नवदल=नए पत्ते, कोपल । सुग्म्य=सुन्दर । निर्निमेष=अपलक । मोतियों से=मोतियों के समान अंगूरों से ।

भावार्थ—पेड़ों की डालियाँ नए पत्तों से लदी हुई हैं । सुन्दर मंजरियों से लदी हुई लताओं के साथ पेड़ों की डालियाँ मिल कर खेल रही हैं । शाहबलूत और आजाद के पेड़ पर्वत के ऊपर अपनी शोभा दिखा रहे हैं । शमशाद के पेड़ भी सौन्दर्य की मूर्तियों के समान बने हुए सर्वत्र सुन्दरता बिखेर रहे हैं ।

सगे का पेड़ अपने सुन्दर और सुडौल शरीर को लचका देता है । नर-गिस का फूल यह सारा दृश्य अपलक नयनों से देखा करता है ।

झाड़ियों में बेर और मकांय लटके हुए हैं । वे ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे उनमें जवाहर लटके हुए हैं । अन्दर की लताएँ भी मोतियों के समान चमकदार अंगूरों से भर गई हैं ।

“प्राची

तृण चरता ।”

शब्दार्थ—प्राची=पूर्व दिशा । आनन्द=सुख । भू-कमान=भौंह रूपी कमान-रूपक अलंकार । तृण=घास ।

भावार्थ—पूर्व दिशा भी लाल हो गई है । सारी वस्तुएँ रंगीन और खिली हुई हैं । हे प्रिये ! फिर तुम्हारे मुख का गुलाब अभी क्यों मुरझाया हुआ है ? तुम्हारा चेहरा उदास है ! भौंहों की कमानें तनी हुई हैं । तुम क्यों अपना दिल छोटा कर रही हो ? क्यों चिन्ताओं के बोझ से झुकी जा रही हो ?

देखो तो कक्क-दरी पक्षी अपनी आकर्षक चाल से घूम रहा है । दुर्रज पक्षी घास में से मिट्टी हटा-हटा कर दीमकें खा रहा है । तोहू और हुबारे पक्षियों की मीठी आवाज से सारा जंगल गूँज रहा है । खरगोश भी भाड़ी से निकल कर एक-एक तिनका चर रहा है ।

पृ० ३ “सरसोही

चौकड़ी हिरन ।”

शब्दार्थ—शावक=बच्चा, मृगछौना । विशालता नापी है=तेरी आँखें उसी की आँखों के समान बड़ी-बड़ी हैं । उत्फुल्ल-बदन=प्रसन्न मुख वाली ।

भावार्थ—देखो तो सरसोही के पेड़ पर कुकरी पक्षी की कैसी कूक सुनाई दे रही है । तुम्हारी आँखों को देखकर तो वन में आहू भी लज्जित होकर छिप जाते हैं । वह देखो वह हरिण का बच्चा है जिसे तुमने स्वयं पाला है । तुमने हमेशा उसे आँखों के सामने रखा है और उसे अपने बच्चे के समान ही पाला है । कितनी ही बार तूने उसे गोदी में बिठाकर लोरी सुनाई है । और वह जब खो जाता था तो तू उसके लिए कितना रोया करती थी ।

तू ने उसकी आँखों पर अपनी आँखें रख कर अपनी आँखों की विशालता का नाप लिया है और जब तूने यह देखा कि तेरी आँखें बड़ी हैं तो तू जीत के गर्व में मन ही मन काँप उठती थी ।

वह भी तुम्हें प्रसन्न देखने के लिए तेरी ओर देख रहा है । देख तो तुम्हें देखकर हरिण भी इतने मोहित हो गए हैं कि वे चौकड़ी मारना भूल गए हैं ।

“बुल बुल

करने चयन ।”

शब्दार्थ—प्रेम-प्रमोद=प्रेम और आनन्द । हाला=शराब । दरियादिल= उदार दिल वाली । मधुशाला=शराब की दूकान । नसीम-सहरी=रातःकालीन वायु । लय हो जाऊँ=लीन हो जाऊँ । बुत=मदहोश । मदभरे दग=मस्ती भरे नेत्र । सुमन=फूल । चयन=चुनना ।

भावार्थ अब तो बुलबुल भी आ गई है और प्रेम और आनन्द के गीत गाने लगी है । वह गुललाला के फूल से कहती है कि ला मुझे रस के पैमाने पिला दे ।

दिन चढ़ गया है । मेरा नशा उतर गया है । आलस आ रहा है । शीशे की सुराही में शराब रखी है । अब मेरी बारी है । मुझे भी शराब पिला दो ।

आज वसंत है । अपने हृदय को उदार बनाले और शराब की दूकान ही लुटा दे । तू स्वयं अपने हाथों से भर-भर कर मुझे देती जा और मैं प्याले पर प्याला चढ़ाता जाऊँ ।

इसी प्रकार हमारे हाथ एक दूसरे के गले में हों । यही नदी का किनारा हो जिसमें गुलाब के असंख्य फूल खिले हैं । बुलबुल इसी प्रकार दर्दभरी रागिनी सुनाती हो और सवेरे की मीठी हवा इसी प्रकार वनस्पतियों को लहराती हुई चलती चले ।

हे प्रिये ! इसी मधुर वातावरण में भरनों की आवाज के साथ तू भी गीत सुना दे ताकि मैं तेरी आवाज में डूब जाऊँ और सारे संसार को भूल जाऊँ ।

तू अपनी गोदी में मुझे भरे हुए आनन्द में मस्त हो जाए और मैं शराब का प्याला पाऊँ और अपनी प्यारी को पा लूँ फिर चाहे सारी दुनिया ही क्यों न सो जाए । मैं यह चाहता हूँ कि मेरी आँखें तेरी मस्ती भरी आँखों के प्याले पीती रहें । मैं हमेशा इसी प्रकार चैन की बंसी बजाता रहूँ और हम दोनों एक साथ फूल चुनने के लिए चलें ।

पृ० ४ “मैं फूलों से

निज दुखड़े को ।”

शब्दार्थ —आघात=चोट ।

भावार्थ -“मैं तुम को फूलों से सजाऊँ और तुम मुझे कलियों से सजाना । इस प्रकार हम आनन्द में भर जाएँ और रँगरेलियाँ मनाते रहें ।”

बेगम ने जब अपने पति की ये बातें सुनीं तो उसे बड़ा आश्चर्य भी हुआ और दुख भी । दिल पर यह चोट खाकर वह फिर बोली —

“तुम्हें रंगलियाँ सूझ रही हैं और इधर मेरी छाती फटी जाती है । चिन्ता के कारण सारी रात आँखों में ही कट जाती हैं, एक पल भर के लिए भी नींद नहीं आती । हर वक्त यही चिन्ता रहती है कि हमारा जीवन कैसे कटेगा । अपने पास कुछ भी नहीं बचा । सारा धन समाप्त हो गया ।

हम लोग मारे-मारे फिरते हैं । एक-एक पैसे का मुहताज हैं । मेरी किस्तम बड़ी बुरी है । मेरे भाग्य के सितारे बड़े कठोर हो गए हैं । यदि आज खाने को कुछ मिल जाता है तो कल की चिन्ता बनी रहती है । किसी जमाने में हम मोतियों से खेलते थे लेकिन अब हमारे लिए अनाज का एक-एक दाना मोती के समान हो गया है ।

जब मैं तुम को रोटी के एक टुकड़े के लिए कष्ट उठाते हुए देखती हूँ तो दिल जलने लगता है । तुम कब तक अपने दोस्तों से अपने दुखों की कहानो सुनाते फिरोगे ?

“जिनको

जरकश चिलमन ।”

शब्दार्थ -- श्वसुर = सुसर । दम भरते थे = प्रशंसा करते थे । कुतधन = एहसान भुलाने वाले । आड़े आना = सहायता देना । चिलमन = पर्दा ।

भावार्थ — मेरे पूज्य सुसर ने जिन लोगों की सहायता की थी, जिन्हें पतन से बचा लिया था, हर प्रकार की सहायता देकर उन्हें बहुत ऊँचा उठा दिया था, जो उनके सामने हमेशा उनके एहसानों की प्रशंसा किया करते थे और जो मेहमान हमेशा ही हमारे घर आते रहते थे ।

तुम्हें जिन पर बड़ा अभिमान था और जिन पर तुम्हें बड़ा विश्वास था, जिनके लिए हमारे घर के दरवाजे कभी बन्द नहीं थे, एहसानों को भूल जाने वाले वे सब कहाँ मर गए । कोई भी तो हमारी ओर नहीं आता । और यदि अचानक कहीं मिल भी जाते हैं तो भी आँखें चुरा लेते हैं ।

वास्तव में तो सारा संसार स्वार्थ का है । यहाँ कोई किसी का नहीं है । जब मनुष्य का भाग्य मद हो जाता है तो कोई भी उसकी सहायता के लिए नहीं आता । मैं वे दिन नहीं भूली । अभी कुछ दिन पहले की ही बात है कि

हमारे दिन सोने के ये और रातें चाँदी की थीं ।

मैंने कभी धरती पर पाँव भी न रखे थे । मलमल पर चलने पर भी, मेरे पाँव छिल जाते थे । जब मैं घूमने के लिए जाती थी तो मार्ग में आँखें बिछ जाती थीं । हमारा पलंग मूंगे का बना हुआ था और बर्तन सोने एवं चाँदी के थे । मोती की झालरों के पदें लगे थे और पदें जरी वाले तथा लालों से जड़े थे ।

पृष्ठ ५ 'समय फेर खाकर सो जाऊँ ।'

शब्दार्थ—विभूतियाँ=संपत्तियाँ । छली गईं=चुरा ली गईं । निधियाँ=खजाने । पानी मत खोओ=सम्मान मत नष्ट करो । प्रतीक्षा=इन्तजार । निष्फल=बेकार । कनी चाट लेना=हीरा खा लेना, हीरा जहरीला होता है, हीरा चाटने से आदमी मर जाता है । कनिक=गेहूँ । कुछ खाकर=जहर खाकर । सो जाऊँ=मर जाऊँ ।

भावार्थ—समय के फेर से ये सारी संपत्तियाँ नष्ट हो गईं । हमारे पास कैसे-कैसे खजाने थे । हाय ! सब नष्ट हो गए । मेरा सारा जेवर बिक गया । केवल विवाह की मुंदरी यह अंगूठी बची है । और तुम मेरे जीवन के आधार मेरे पास हो । और सब मिट गया ।

हे प्रिय ! अपने सम्बन्धियों में अपना आदर-मान नष्ट मत होने दो । चलो हम चुपके से यहाँ से कहीं और चल दें । यहाँ कोई सहारा नहीं है । इसलिए यहाँ सब की आशा छोड़ कर चलो विदेश चलें । यहाँ कोई कार्य नहीं । सब इन्तजार बेकार होगा । बाहर जाकर कहीं कोई नौकरी कर लेंगे या कोई और सहारा ढूँढ़ लेंगे ।

बाहर जाकर तो घास काटने में भी कोई दुख नहीं होगा । यहाँ इस प्रकार भूखों मरने के बदले बाहर मर जाने में कोई हानि नहीं है । हमारे पास पीने को भी कुछ नहीं बचा है । आओ मिलकर आँसू पिएँ । अब तो जीने की इच्छा भी मर गई है । कब तक इस प्रकार भयंकर विपत्ति में जीवित रहें ।

आटा तो अपने पास है नहीं । और न जाने हम कब से मुसीबतों में पिसते जा रहे हैं । रोज ही हम गम खाते हैं । आखिर कब तक दवा पीकर

रहें। मैं कहीं गेहूँ माँगने क्यों जाऊँ। इसके बदले तो हीरा चाट कर मर जाना अच्छा है। हे प्रिय ! तुम भूखे ही सो जाओ और मैं तो कुछ खाकर हमेशा के लिए ही सो जाऊँ।

‘यह क्या कहा

इक रेखा है।’

शब्दार्थ—मातृभू=मातृभूमि । पावन=पवित्र । उपवन=बगीचा । पावन रज=पवित्र रेत । शैशव=बचपन । उदित हुआ=जन्म हुआ । नभ=आकाश, देश । चश्मे=भरने ।

भावार्थ—बेगम की यह बात सुनकर गयास व्याकुल हो गया और बोला—“यह तुम क्या कह रही हो ? क्या तुम यह चाहती हो कि मैं अपना प्यारा घर, प्यारा ईरान छोड़ दूँ ? जहाँ हमारा जन्म हुआ है, जो हमारे लिए स्वर्ग के समान है, क्या हम उसे छोड़ दें। यह तुमने क्या कह डाला ? जरा अपनी बात पर फिर से विचार करो। अपनी पवित्र मातृभूमि, वन, बगीचे और अपना घरबार में कैसे छोड़ूँ ? मेरा यह शरीर इसी घरती की मिट्टी और जल से बना है। यहाँ की पवित्र मिट्टी न जाने हमारे कितने सुखों और दुखों के आँसुओं से भीगी है।

यह वही घर है जिस स्थान पर हमने बचपन व्यतीत किया है। यह हमारे लिए स्वर्ग के समान है। यहीं पर मेरे जीवन का नन्हा पौधा बढ़ा हुआ है। इसी घाटी में हम गेंदे के फूलों से गेंद के समान खेला करते थे। यही वह भरने के पेड़ हैं जहाँ से हम जामुन तोड़-तोड़ कर खाते थे।

वह देखो सामने ऊँचा टीला है। इसी के ऊपर चढ़कर हमने ईद का चाँद देखा था। यह इतना ऊँचा है कि ऊपर पहुँच जाने पर नीचे की नदी एक रेखा के समान दिखाई देती है।

पृ० ६

‘जल तरंग

घोर व्यथा।’

शब्दार्थ—जल तरंग=जल की लहर, जलतरङ्ग एक वाद्य भी होता है खग-कलरव=पक्षियों की मधुर आवाज । रत=मोहित । आँधी=व्याकुलता । सम=सम उसे कहते हैं जहाँ संगीत की कोई लय समाप्त हो जाती है। दोतारे= एक बाजा जिसमें दो तार होते हैं। रोदे=पत्थर, मुसीबतें। जीवन-सरि=जीवन-रूपी नदी—रूपक अलङ्कार। तमक उठी=क्रोधित होगई। रिस=क्रोध। बाम=

स्त्री । लटनागिन=बालों की लट रूपी नागिन — रूपक अलङ्कार । लख=देख-कर । ललाट=माथा । स्वेद=पसीना । ललाम=मुन्दर । वक्र=तिरछी । अन्त-स्तल=हृदय । घोर व्यथा=भारी दुख ।

भावार्थ—मेरा मन जल की लहरों के साथ आनन्द में बहता है । और मेरा दिल पक्षियों की मधुर आवाज पर मोहित होकर उसके साथ ही भूमता रहता है । इन झरनों की सरगम जैसी आवाज के साथ मैंने अपनी साँसों को बाँध दिया है—मैं इनके साथ-साथ साँस लेता हूँ । इनके छोड़ने का विचार आने पर ही मन में एक तूफान सा आ जाता है ।

जिस दिन यह समाज छूट जायगा, उसी दिन मेरे हृदय की घड़कन बन्द हो जायगी । और दो तारे के समान जो ये साँसें चलती हैं इनका चलना भी बन्द हो जाएगा । इसलिए तुम मुझ से ऐसी बातें करके मुझे परेशान न करो । मुझे शान्ति से जीवित रहने दो, मेरी जीवनरूपी नदी को मुसीबतों के रोड़ों से टकरा-टकरा कर बहने दो ।”

पति की बातें बीच में ही काट कर बेगम ने कहा बस अब और बेकार बातें मत करो । तुम्हारी बातें सुनते-सुनते तो मेरा जी भर गया । मन को सँभालो । और अधिक ऐसी बातें न करो ।”

पति की बातें सुनते-सुनते वह स्त्री सिहर उठी थी । उसके माथे पर पसीने की सफेद बूँदें झलक आईं थीं । उसकी लट रूपी नागिन पसीने रूपी ओस को चाटने के लिए आगे ही बढ़ आई थी । इसने उसे पीछे भटक दिया ।

इसके बाद तिरछी दृष्टि से पति को देखकर इसकी आँखें भर आईं । और जैसे ही इसने चाहा कि यह पति को खूब खरी-खोटी सुनाए वैसे ही इसका गला भर आया, आवाज न निकली और फिर इसने अपनी आँखों को बन्द कर लिया । उसके हृदय की तीव्र पीड़ा उसके मुख पर झलक रही थी । और उसके आँसू चुपचाप बहकर मानो उसके इस दर्द को कहने लगे ।

“दशा दलित

नाना क्लेश ।”

शब्दार्थ-- दलित=बुरी । पौरुषहीन = शक्तिहीन । घन की छाया=बादल की छाया-संपत्ति । उज्ज्वल=प्रशंसनीय । व्युत्कर्तव्य=कर्तव्य से डिगकर ।

विलासिता=ऐश । उपहास=मजाक । मरुभूमि=रेगिस्तान ।

भावार्थ—तुम्हारी दशा इतनी बिगड़ गई है मगर तुम्हें सुख और आराम दिखाई देता है । कब तक शराब पीकर, शक्तिहीन होकर तुम इस प्रकार पड़े रहोगे । जो कुछ होना था वह होगया । हमारा सब कुछ ही तो बर्बाद हो गया । लेकिन किस्मत का रोना तो यह है कि अब तक भी तुम्हारी नींद नहीं टूटी ।

दुनिया बदल रही है । समय के चक्र ने हमें नीचे ला पटका है । वह संपत्ति बादल की छाया के समान क्षण भर हमारे मन को बहला कर नष्ट हो गई । देखो अब भी तुम सँभल जाओ । मन को वश में करो । अपनी मर्यादा और पूर्वजों का सम्मान याद करो और अपने कुल के सम्मान को इस प्रकार नष्ट मत हो जाने दो ।

तुम एक महान वंश के ईरानी हो । तुम्हारे कुल का इतिहास बड़ा प्रशंसनीय है । तुम ऐश में पड़कर अपने कर्तव्य से डिग मत जाना । अपना मजाक मत उड़वाना । हमारा जीवन तो कष्टों से भरा हुआ है । और हमारा देश रेगिस्तान है । लेकिन फिर भी कठिन परिस्थितियों का सामना करके और अनेक विपत्तियों को सहन करते हुए हमारे पूर्वज अपने चरणचिह्न और अपने आदर्श छोड़ गए हैं ।

पृ० ५ “पूर्वज छोड़ गए माला जपते ।”

शब्दार्थ—पूर्वज=बुजुर्ग । उच्चादर्श=ऊँचे सिद्धान्त । पद अङ्क=चरणचिह्न । पथभ्रष्ट=मार्ग से फिसल कर, उन सिद्धान्तों का पालन न करके । संसार-समर-प्रांगण=संसार रूपी युद्ध का क्षेत्र—रूपक अलङ्कार । रंगमंच=स्टेज । नाविक=मल्लाह । जलयान=नाव । सतत=लगातार । आह्वान=निमन्त्रण देना । उदधि=सागर । मीन=मछली ।

भावार्थ—हमारे बुजुर्ग हमारे लिए अनेक महान सिद्धान्तों के चरणचिह्न छोड़ गए हैं । हमें उनका पालन करना चाहिए । कोई कायर ही होगा जो उनका पालन न करके अपने सर कलङ्क मोल लेगा । इस संसार रूपी युद्ध क्षेत्र में जीवन क्या है ? एक युद्ध ही तो है । हमें इस युद्ध से घबराना नहीं चाहिए । हमें तो यह चाहिए कि संसार के रंगमंच पर हम नायक बन कर

अपना काम दिखाएँ—प्रधान कार्य करें ।

हम आग्निर मनुष्य हैं । इसलिए क्यों हाथ पर हाथ धर निराश होकर बैठ रहें ? यदि यहाँ हमें सफलता नहीं मिली तो क्या हुआ । दूसरे देश में जाकर अपने भाग्य की परीक्षा लेंगे । चलो हम दोनों चलकर मल्लाह ही क्यों न बन जाएँ । चैन के साथ नाव चलाया करेंगे । मेरी आँखों के सामने सागर की तसवीर है । सागर की हरेक लहर हमें आने का निमंत्रण दे रही है ।

मेरी आँखों के सामने हमारे जीवन की वह तसवीर है जब हम दोनों की नाव सागर को चीरती हुई आगे बढ़ती जाएगी । हमारा पतवार सागर में उस प्रकार चलता हुआ आगे बढ़ेगा जैसे खेत में हल धरती को जोतता आगे बढ़ता है । कभी जब ऊँची लहर आएगी तो हमारी नाव भी ऊपर उठ जाएगी जिस पर से हम सारे सागर को देख सकेंगे ।

सागर में कहीं पर जल के पत्ती कहीं मछलियाँ पकड़ते होंगे । कहीं मूँगों के समूह के एकत्रित हो जाने सा छोटा सा द्वीप बन जाएगा । उस पर असंख्य पत्ती बैठे बैठे अपने अण्डे सेने होंगे । उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होगा मानो एकान्त स्थल देखकर तपस्वी चुपचाप माला जप रहे हों ।

‘पाल-केतु

मालामाल ।’

शब्दार्थ—पाल=पुराने जमाने की नाव तर जो कपड़ा टँगा रहता था ।
केतु=भंडा । मद्यप=शराबी । विहंगम=पत्ती । विहंगम दृष्टि=सामान्य दृष्टि ।
अर्धमीन=आधी मछली । दरस लालसा=देखने की इच्छा ।

भावार्थ—पत्ती जब दूर से ही मेरी नाव के पाल और अण्डे को धीरे-धीरे चलने वाली वायु में मँडराता देखेंगे, और डोंडों से लहरों को नष्ट करता हुआ उसे आगे बढ़ता देखेंगे और मेरी वह नाव शराबी के समान डगमगाती हुई चलेगी, तो पत्ती उससे भयभीत हो जाएँगे । उसके ऊपर उसे देखते हुए उड़ते रहेंगे जिस समय उनके साथ मैं हम दोनों प्यार के गीत गाते रहेंगे ।

मैं सागर में जाकर वह स्त्री खोजने की कोशिश करूँगी जो आधी तो

स्त्री है और आधी मछली है। जब से मैंने अपनी माँ से इसका वर्णन सुना है तभी से इसे देखने की इच्छा है। मैं कभी तो तुम्हारे साथ सुखपूर्वक सागर में घूमूँगी और कभी सागर के किनारे से मोती चुन-चुनकर ले आऊँगी। और अगर वहाँ मर भी जाऊँगी तो किसी को कुछ पता नहीं लगेगा।

अरे एक बात तो भूल ही गई। रोज ही तो यहाँ से काफिले जाते हैं। वे कभी तो याद ही न आए। सचमुच चिराग चले अन्धेरा होता है। कितने ही लोगों का यहाँ बुरा हाल था। वे भारत गए और थोड़े दिनों में ही वहाँ से घनवान होकर वापिस आए।

पृ० ८ 'चरवाहे

इसका उत्तर।'

शब्दार्थ—ऊँटवान=ऊँट चलाने वाले। दीनार=एक सिक्का। सर=विजय। तेज=तलवार।

भावार्थ—वे चरवाहे जो मैदानों में भेड़ों को घास चराया करते थे, ऊँट चलाने वाले जिन्हें खाने के लिए सिवाय रेत के और कुछ नहीं मिलता था, जब से वे लोग भारत में जाकर वहाँ व्यापार करने लगे हैं तभी से ऊँटों पर दीनार भर-भर कर लाते हैं।

भारत सोने की चिड़िया है। चलो हम भी वहीं का सफर करते हैं। हिम्मत करो और तैयार हो जाओ। अब हमें इस मुश्किल पर विजय प्राप्त करनी है। अब बहुत मुसीबतें सहली हैं। अब तो पैदल ही किसी काफिले के साथ चल देते हैं। तुम अपनी तलवार ले लो और मैं भी ईश्वर से प्रार्थना करती हुई तुम्हारे साथ चलूँगी।'

गयास ने जब वेगम की ये खरी बातें सुनीं तो वह लम्बी सांस लेकर बोला—'रात बढ़ गई है। ओस गिरने लगी है। चलो अब सो जाँ। कल जवाब दूँगा।'

'चलू'

चिड़िया का नाम।'

शब्दार्थ—नियत=निश्चित। गुल=बुझना। अनुरोध=आग्रह। विधाता=भाग्य। बाम=टेढ़ा, कठोर।

भावार्थ—रात भर गयास सोचता रहा है 'विदेश जाना चाहिए या घर रहना चाहिए? यह निश्चय करना बड़ा कठिन है; रात भर नींद नहीं आई

और यह सयस्या भी हल नहीं हुई। कल ही काफिला भारत जाने वाला है। समय निश्चित हो चुका है। लेकिन मैं अभी तक कुछ भी निश्चय नहीं कर पाया।

एक विचार तो यह आता है कि घर घर ही है। विदेश में बड़ी कठिनाइयाँ हैं। अपने देश में मरना भी अच्छा है। यह ठीक है कि यहाँ कुछ कष्ट है लेकिन जहाँ इतने दिन बीत गए हैं वहाँ ये भी बीत ही जाएँगे। पता नहीं विदेश में जाकर क्या मुसीबत सर पर आए। पता नहीं फिर अपना देश देखने की भी इच्छा होगी या नहीं।

आशा मंद होती जाती है। बुझना ही चाहती है। किस विदेश में जाकर हमें अपने फूल और यह बुलबुल मिलेंगे? लेकिन फिर भी पत्नी का आग्रह है। उसे टालूँ भी कैसे। मैं स्वयं ही दुख में डूब रहा हूँ। उसे कैसे घोरज बधाऊँ?

यदि मेरे जीते जी उसे दुख हो तो यह तो मेरे लिए मर जाने की बात है। और कोई उपाय भी तो नहीं सूझता। अच्छा मैं अपनी हार मानता हूँ और कल काफिले के साथ जाने की तैयारी करता हूँ। मेरी पत्नी ने सचमुच ही बहुत कष्ट सहन किए हैं। भाग्य बड़ा कठोर है। पहले तो वह जानती ही न थी कि दुख किस चिड़िया का नाम है।

पृष्ठ ६ 'उसे

मुहर।'

शब्दार्थ—पवन प्रतिकूल=उलटी हवा, दुख के दिन। प्रस्थान=यात्रा। अरुणशिखा=लालिमा। नयन-गगन=नेत्ररूपी आकाश। भामिनि=स्त्री, पत्नी। आभा=प्रकाश। दौर=शराब का दौर।

भावार्थ—यहाँ जब दुख के दिन हैं तो उसे यहीं रहने के लिए विवश करना और एक क्षण भर के लिए भी यहाँ रुकना मेरी भूल ही होगी। बस अब हिचकने का कोई सवाल नहीं। मैंने निश्चय कर लिया कल सवेरे ही हम हम लोग चल देंगे। हे मेरे प्यारे देश तुझे सलाम है।

आकाश में लालिका छाने लगी। इससे प्रातःकाल होने वाला है। पौ फटने ही वाली है। इधर मेरी प्यारी ने भी करवट बदली है। शायद जागने वाली है। चारों ओर प्रकाश हो रहा है। इतने में बेगम जाग गई। उसके

वस्त्र और बाल बिखरे हुए थे। वह आँखें मलती हुई उठी और बोली 'आप कब से जाग रहे हैं ? आप बार-बार अँगड़ाइयाँ क्यों ले रहे हैं ? क्या रात भर नहीं सोए। और आपकी आँखों रूपी आकाश में लालिमा क्यों छाई हुई है ?

गयास ने उत्तर दिया 'हाँ मुझे रात भर नींद नहीं आई। सारी रात जागते-जागते ही कट गई है। लेकिन मैंने एक बहुत बड़ी बात का निश्चय कर लिया है। मैंने यह निश्चय कर लिया है कि हम विदेश चलेंगे। चाहे जो भी हो सब देखा जाएगा। इसलिए तुम बठ कर तैयारी करो आज ही अभी चलो।

हे प्रिये ! भारत में जाकर मैं अपनी सोई हुई किस्मत जगाऊँगा और जब तुम्हारे मुख पर प्रसन्नता का प्रकाश देखूँगा तो सचमुच ही निहाल हो जाऊँगा। मेरी आँखों में दर्द हो रहा है क्योंकि अब शराब का दौर खूट जाएगा। हे प्रिये ! तुम अपने हाथों से दो प्याले पिला दो।'

यह सुनकर बेगम बहुत प्रसन्न हुई और अपने पति से जाकर लिपट गई। जैसे ही उसने कुछ कहना चाहा उसके पति ने उसके होठों को चूम लिया।

‘मातृभूमि

तोड़ती जाती है।

शब्दार्थ—केलिकुंज=वह कुंज जहाँ क्रीड़ा की थी। मृगछीना=हरिण का बच्चा। रुचिर=सुन्दर।

भावार्थ - बेगम ने कहा 'हे मातृभूमि मैं तेरे इस रूप को कभी भी न भुलाऊँगी। नित्य ही तुम्हारे गुलाब का सौन्दर्य मेरी आँखों में धिर आया करेगा। हे बुलबुल नित्य सवेरे उठ कर मैं तेरे प्रेम का गीत गाया करूँगी। और वह कुंज जिसमें हमने क्रीड़ाई की थी उसके एक-एक पत्ते को मैं याद रखूँगी।

हे मृगछीने ! तू मेरी ओर क्या देख रहा है। क्या तू भी जाना चाहता है ? लेकिन नहीं तुझे साथ नहीं ले जा सकती। मार्ग बहुत लम्बा है, रास्ता बड़ा कठिन है इसलिए मैं तुझे परेशान नहीं करूँगी। तू मेरा छोटा खिलौना है। तुझे छोड़ कर जा रही हूँ। केवल तुझे ही नहीं और भी बहुत सी वस्तुओं से अपना सम्बन्ध तोड़ कर जा रही हूँ।

‘तेरा पट्टा

उसको भर ।’

शब्दार्थ—पट्टा=जो गले में बाँधा जाता है ।

भावार्थ—आज मैं तेरे गले का पट्टा तोड़ कर तुझे स्वतन्त्र कर रही हूँ । तू वन में स्वतन्त्र घूमना लेकिन हों कभी-कभी मेरी भी याद कर लेना । कभी-कभी मेरी इस प्यारी भोंपड़ी में भी हो जाया करना । समय का परिवर्तन देख कर मेरी कठोरता मन में न लाना ।

यदि जीवित रही तो फिर वापिस आऊँगी और तुझे गले से लगा लूँगी । तुझे देखकर आँखें शीतल करूँगी और अपना जीवन सफल करूँगी ।’

यह कहते-कहते वेगम की आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई । गयास ने उसके आँसू पोंछे और छाती से लगा लिया ।



दूसरा सर्ग

कथासार—दूसरे दिन बेगम और गयास काफिले के साथ चल दिए। काफिला पहाड़ों, नदी-नालों और जंगलों से होता हुआ बढ़ता जा रहा था। जितने पैदल चलने वाले थे सब परेशान थे। चुपचाप ऊँटों की कतारें बढ़ती जाती थीं। थोड़ी देर बाद मंजिल आई। इसे देखकर सब आनन्द से भर गए।

सबने कमर खोल दीं और संध्या की शीतल छाया में विश्राम करने लगे। ऊँटों को भी हरियाली में छोड़ दिया। वे भी पत्ते आदि खाने लगे। सब लोग भोजन करने के बाद सो गए। खूब गाढ़ी निद्रा आई। दूसरे दिन तड़के ही एक वृद्ध ने अर्जों दी। सब जाग उठे। नित्यकर्म से निवृत्त होकर चलने की तैयारी करने लगे। ऊँटों पर जब सामान लादने लगे तो वे पहले उठते ही न थे। बड़ी मुश्किल से उन्हें उठाया गया। सारा काफिला आगे बढ़ गया।

काफिले के सब लोग अपनी धुन में मस्त थे। केवल एक स्त्री और एक पुरुष उदास थे। ये गयास और उसकी बेगम थी। बेगम बार-बार कहती कि “हिन्द कहाँ हैं? कितना और चलना है?” उस बेचारी ने पहले कभी कष्ट नहीं उठाया था इसी लिए उसे बहुत अधिक परेशानी हो रही थी।

सारा काफिला क्षितिज की ओर बढ़ने लगा। अब ये रेगिस्तान पार कर रहे थे। चारों ओर रेत बिखरी थी। उसे देखकर सब की हिम्मत पस्त होती जाती थी, जितना ही वे तेज चलने की कोशिश करते, उनके पाँव उतने ही रेत में धँस जाते थे। धूप से रेत जल रही थी। कहीं छाया का निशान भी नहीं था। कहीं कोई पत्ती तक दिखाई नहीं देता था। इतने में वे सब एक नखलिस्तान में पहुँचे। सब वहाँ विश्राम करने लगे। काफिला फिर चल दिया। रेगिस्तान पार कर फिर पहाड़ और नदियाँ पार करने पड़े।

एक दिन सवेरे ही काफिला चल दिया । एक पहाड़ पार करना था । सब को शत हो गया कि उनके देश की सीमा आ गई है । इसलिए सबका जी भर आया । गयास और बेगम की आँखों से आँसू निकलने लगे । फिर वे सब दिल पर पत्थर रख कर पहाड़ पर चढ़ने लगे । पहाड़ के ऊपर एक किला था । जो खाली सा लगता था । अचानक ही वहाँ से जोर का शोर होने लगा । अफगानों के समूह हथियार लिए काफिला लूटने के लिए भपटे ।

काफिले वालों ने हिम्मत की । व्यूह बना लिया । वृद्धों, स्त्रियों और बच्चों को बीच में कर लिया । युवक चारों ओर नंगी तलवार लिए युद्ध के लिए तैयार हो गए । अफगानों ने हमला किया । दोनों ओर से तीर-तलवार चलने लगी । गयास ने बड़ी बहादुरी दिखाई । उसे भी थोड़ी चोट आई । लेकिन आखिर अफगान अधिक देर न ठहर सके । उनके बहुत से साथी वहाँ काम आए । बाकी भाग गए । उनके भागने के बाद काफिले वालों ने अपने मरे साथियों को दफन किया ।

इसी समय गयास के ऊपर दूसरी मुसीबत आई । बेगम को प्रसव-पीड़ा होने लगी । उसके लिए चलना असंभव हो गया । ये दोनों रुक गए । काफिला इन दोनों को छोड़कर आगे बढ़ गया । दूसरे दिन सवेरे ही कन्या का जन्म हुआ लेकिन गयास और बेगम को विवश होकर उसे वहीं छोड़ जाना पड़ा ।

वह कन्या प्रकृति की गोद में पड़ी रही । चारों ओर बड़ा सुन्दर वातावरण था । कवि ने इसका बड़ा सुन्दर चित्रण किया है । इसके बाद उधर से एक दूसरा काफिला आया । इसका सरदार बड़ा दयालु था । उसने इस लड़की को उठा लिया और कंधार में जाकर उसने उसे एक धाय के हवाले किया । वहाँ एक स्त्री मिली जिसके कोई सन्तान नहीं थी । उसने उस कन्या को पाल लिया ।

इसके बाद कवि ने कन्या के बड़े होने का वर्णन किया है । इसके लुटपन का, फिर बचपन का और फिर बालापन का । वह बहुत ही सुन्दर और चंचल थी । सभी उसे प्यार करते थे । वह दिन भर खेला करती थी । कभी बगीचों में घूमती थी, कभी तालाब में तैरती थी और कभी पक्षियों को पकड़ने

की कोशिश करती थी ।

इस छंद की मुख्य विशेषता है । प्रकृति-वर्णन की रेगिस्तान का, पहाड़ का और मधुर प्रकृति का बड़ा सुन्दर वर्णन हुआ है । गयास की कन्या का वर्णन तथा उसके साथ ही प्रकृति का जो वर्णन किया गया है वह बड़ा कलात्मक है ।

पृ० ११ “कभी काफिला जुगाली में ।”

शब्दार्थ—नीरवता=शान्ति । लख=देख कर । आनन=मुख । आभा = प्रकाश ।

भावार्थ—काफिला ऊँचे सूखे पहाड़ों से होता हुआ, कभी समतल मैदानों से होता हुआ और कभी काँटेदार झाड़ियों से होता हुआ निकलता रहा । ऊँटों की पंक्ति चुपचाप आगे बढ़ती जा रही थी । उनमें से कोई एक कभी किसी झाड़ी को देखकर उसमें से कुछ खा लेता था ।

उन ऊँटों के पीछे, बाएँ और तथा दाहिने ओर पैदल चलने वाले जा रहे हैं । चलते चलते वे थक गए हैं और उनके पाँव में छाले पड़ गए हैं । बड़ी मुश्किल से मंजिल आई । मंजिल को देखकर सब के मुख पर आनन्द का प्रकाश छा गया ।

संध्या की ललिमा देखकर सबने कमर खोल दी और नीचे धरती पर लेट कर अपनी कमर सीधी करने लगे । ऊँटों को पानी पिलाकर हरियाली में छोड़ दिया । कुछ तो पत्ते आदि खाने लगे और कुछ जुगाली करने लगे ।

‘भोजन हरे हुए ।’

शब्दार्थ—अम=थकावट । बटोही = मुसाफिर । हरे हुए=प्रसन्न हुए ।

भावार्थ—सब भोजन करके सो गए । इस प्रकार सब अपनी थकावट मिटाने लगे । थके होने की वजह से सभी गाड़ी निद्रा में सोए थे, मानो घोड़े बेचकर सोए हों । एक वृद्ध ने तारों को देखकर समय का अन्दाजा लगाकर अर्जों दी । इसे सुनकर सब जाग उठे । सबने नमाज पढ़ी और ईश्वर का ध्यान किया ।

सब लोग ठंडे-ठंडे चल देने के लिए तैयारी करने में लग गए। इसके बाद ऊँटों पर बोझ लादने की बारी आई। तब वे ऊँट उस बोझ से घबरा गए और उठने को तैयार ही न हुए। उस पर उनके मालिकों ने उन्हें मारा जिससे वे बड़े दीन होकर चिल्लाने लगे।

किन्तु अन्त में वे मजबूर हो गए और गर्दन फेरकर उठ खड़े हुए। वे सब मानो रो-रोकर यह कह रहे थे कि नकेल के कारण हमारा दम नाकों में है। इस प्रकार काफिला मंजिल पर मंजिल तै करता हुआ अपने देश से दूर जंगलों और पहाड़ों को लौघता हुआ आगे बढ़ने लगा।

उस काफिले में जितने लोग थे सभी अपनी-अपनी धुन में मस्त आगे बढ़ते जा रहे थे। लेकिन दो व्यक्ति ऐसे थे जो कहीं भी मसन्न नहीं दिखाई देते थे।

‘एक सुन्दरी

नजर आता ॥’

शब्दार्थ—नागर=नगर का रहने वाला, पुरुष। मरुस्थली=रेगिस्तान। विकट महा=अत्यन्त भयंकर। शैल-शिखर=पर्वत की चोटियाँ। बीहड़=सघन जंगल। ऊसर-बंजर=वह धरती जहाँ कुछ न उगता हो।

भावार्थ—उन दोनों उदास व्यक्तियों में एक स्त्री था और एक पुरुष। दोनों के नेत्र बड़े-बड़े थे लेकिन उनमें चिंता का सागर लहराता दिखाई देता था। कभी-कभी स्त्री के मुँह से आह निकल जाती थी। चलने की थकान के कारण उसकी छाती धक धक करती उछल रही थी।

वह स्त्री बार-बार लम्बी साँस लेकर पति से यह कहती थी कि अब कितना और चलना है? अब तो चलते चलते मेरे पाँव छलनी हो गए हैं। नित्य ही तुम कह देते हो कि थोड़ा सफर और है। पता नहीं वह हिन्दुस्तान कितना दूर है? अभी तो चारों ओर भयंकर रेगिस्तान दिखाई देता है।

कितने दिन हुए; घर, बाग, बगीचे, वन, पर्वतों की चोटियाँ आँखों से ओझल हो गए हैं। हमने कितने ही नाते, बन्धियाँ, बजर भूमियाँ और नदियाँ पार कर ली हैं। काँटे पाँव में छिद जाते हैं। वे भी प्यासे हैं और जल माँगते हैं। मैं उन्हें पसीने के जल से शान्त करती हूँ।

प्यास के कारण जबान सूख कर काँटा हो गई है। साँस फूल रही है।

चारों ओर भयंकर रेगिस्तान का दृश्य दिखाई देता है ।

‘जहाँ चिड़िया की भी छाया ।’

शब्दार्थ—भू=धरती । नभ = आकाश । चतुर्दिक् = चारों दिशाओं में । तापा=तपा हुआ ।

भावार्थ—सब लोग शीघ्रता से उधर चल दिए जिधर धरती और आकाश मिलते हैं । लेकिन वे जितना ही आगे बढ़ते हैं क्षितिज उतना ही दूर हो जाता है । सब थक कर चूर हो रहे हैं ।

चारों ओर रेत की दुनियाँ दिखाई देती है । उसे देखकर सब की हिम्मत नष्ट हुई जाती है । वे लोग जितना ही तेजी से पाँव रखते हैं, वे उतने ही रेत में धंस जाते हैं और उनका चलना और भी कठिन हो जाता है ।

सूखा हुआ रेगिस्तान बड़ा भयंकर है । कहीं भी कोई पेड़-पौधा दिखाई नहीं देता । धरती पर सूरज की किरणें बिखरी हुई हैं । चारों ओर एक आग सी लगी है ।

जुँटों ने भी अपने मुँह बाँध रखे हैं और वे भी भय से चारों ओर देख रहे हैं । धरती इतनी जल रही है कि वे भी फूँक-फूँककर पाँव रखते हैं । धूप के कारण धरती जल रही है । कहीं कोई पच्ची भी दिखाई नहीं देता ।

‘चमकते उसी पर जुट ॥’

शब्दार्थ—नखलिस्तान=रेगिस्तान के बीच वह भाग जहाँ जल होता है और थोड़े पेड़-पौधे भी होते हैं । जलयान=नाव, जहाज । मस्तूल=जहाज के बांस ।

भावार्थ—धूप के कारण रेत के कण चमचमा रहे हैं । सब के सब थके हुए आगे बढ़े जाते हैं । अचानक ही नखलिस्तान आ गया । उसे देखकर सब को ऐसा सुख मिला जैसे डूबते हुए व्यक्ति को जहाज मिल जाने पर होता है ।

नखलिस्तान में खजूर के पेड़ ऐसे दिखाई देते थे जैसे जहाज के बाँस हों । मुसाफिरों ने जब दूर से उन्हें देखा तो आनन्द से भर गए । खजूर के पत्ते हवा में जहाज के पाल के समान दिखाई देते थे ।

वहाँ पहुँच कर सबने पानी पिया और मीठे-मीठे फल खाए । वे सब

गर्मी के सताए हुए थे। छाया पाकर सबने कमर खोल दी और विश्राम करने लगे। ऊँटों ने जब हरे पेड़ देखे तो वे भी उन्हें चरने में लग गए।

पृ० १४ 'किया पर भार ॥'

शब्दार्थ—वीरान=उजाड़ क्षेत्र। मुंड=जिसमें पत्ते नहीं। कुंड=तालाब। हिनवाना=तरबूज। शुतुर-सवार=ऊंट-सवार।

भावार्थ—जब इन्होंने वह सुनसान भाग पार किया तो फिर रेतीला मैदान आया। उस मैदान में कहीं झाड़ियों के कुंड खड़े थे और कहीं पत्तों से रहित पेड़ खड़े थे।

कहीं तरबूज बिलेरे हुए थे जो अमृत के तालाब के समान दिखाई देते थे। क्योंकि धूप में तपे हुए व्यक्ति को वह शान्त करता है। तरबूजों को देखकर सब की आँखें शीतल हुईं। उन्हें खाकर सब को सन्तोष हुआ।

सब लोग बबूलों के नीचे आराम करने लगे और पाँवों में चुभे काँटे निकालने लगे। फिर जब नक्कारे की आवाज आई तो पैदल और ऊंट-सवार सभी चल दिए।

‘तड़के ही सिंहासन ॥’

शब्दार्थ—सरहद=सीमा। वक्ष=छाती। पुलक कर=आनन्द में भर कर। निर्भरिणी=नदी। आकार=शक्लें। शिलाकार=मूर्ति बनाने वाला। कंदरा-गृह=गुफाएँ। स्फटिक=सफेद।

भावार्थ—सवेरा होते ही काफिला फिर चल पड़ा। नाले, नदियाँ, जंगल, पहाड़ सब को पार करता काफिला बढ़ा जा रहा था। आखिर वह काफिला ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ अनेक पर्वत थे। पर्वतों की चोटियों को देखकर सब समझ गए कि उनके देश की सीमा आ गई है। सब की आँखें निकल गईं।

किन्तु गयास और उसकी पत्नी को बड़ी व्याकुलता हुई। वे रुक गए। उनकी आँखों से आँसू बरसने लगे। मन ही मन में अपनी मातृभूमि को प्रणाम करके वे पर्वत पर चढ़ने लगे। उनका दिल भर आया था, आँखें भी भरी थीं और पाँव भी थकावट से बोझिल हो रहे थे।

पर्वतों की माला धरती की छाती पर आनन्दपूर्वक लेटी हुई थी। कहीं

उस पर्वत के ऊपर से कोई नदी भी बह रही थी। पर्वत की चट्टानों पर अनेक प्राकृतिक शकलें बनी थीं जिन्हें देखकर मूर्तिकार भी विस्मित हो जाता था। कहीं गुफाओं के घर थे जिनमें पञ्चानन रहते थे। और सफेद पत्थर के बहुत से चिकने सिंहासन भी बिछे थे।

पृ० ६५ 'चक्करदार मोर्चा खाए थे ॥'

शब्दार्थ—पग-मालाएँ=पगडंडियाँ। अश्वकान=शाल की लता। दरक जाता=टूट जाता। कोट=किला।

भावार्थ—पर्वत के ऊपर अनेक टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियाँ थीं जिन पर चढ़ कर शाललताएँ फूल बिखेर रही थीं। जो कोमल अंगों वाली हो उसके लिए उस पर्वत पर चढ़ना बड़ा कठिन था और विशेष रूप से उसके लिए जो थकी हुई हो और दुखों से परेशान हो।

जिसका पति भी दुख के सागर में डूबता हुआ छाती पर पत्थर रखे पत्नी के साथ चला जा रहा हो। यदि पति स्वस्थ हो तो वह पत्नी को सँभाल लेता। गयास की ठंडी साँसों में इतना दुख था जिसे देखकर पत्थर का दिल भी टूटा जाता था। उसकी भयंकर निराशा देखकर स्वयं धीरज भी विचलित हो रहा था। यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है क्योंकि गयास के दुख का बहुत अधिक वर्णन किया गया है।

गयास सोच रहा था कि जब घर छोड़ दिया है तो फिर वापिस लौटने का सवाल ही नहीं पैदा होता। जब एक बार देश से मुँह मोड़ लिया तो फिर क्या लेकर वहाँ जाऊँ। इस पहाड़ पर चढ़ते चढ़ते बेगम का चेहरा उदास हो गया। (यहाँ विरोधाभास अलंकार है) जैसे-जैसे वह चढ़ाई चढ़ती थी वैसे वैसे उसका दिल दुख से बैठता जाता था।

उस पहाड़ की चाँटी पर मुकुट के समान एक बहुत बड़ा किला था। अनेक लताएँ उस पर बेल बूटो के समान फैली थीं और पेड़ों के फल लालों के समान दिखाई देते थे। (उपमालंकार) उसकी दीवारें बड़ी मजबूत थीं। उनमें लोहे के बड़े-बड़े फाटक लगे थे जो अनेक हमले देख चुके थे लेकिन आज जो खस्ता-हाल थे।

“नहीं बुजियाँ

बगल लटका ।”

शब्दार्थ—आगन्तुक=आने वाला । गृद्धराज=बड़े-बड़े गिद्ध । । केतु-दंड=भंडे का बाँस । पंख पताका=पंख रूपी भंडा-रूपक अलंकार । रिक्त=खाली । विस्मृति-मकड़ी=विस्मृतिरूपी मकड़ी । आशा जाला=आशा रूपी जाला-सांग-रूपक अलंकार । क्षत=घाव । खंजर=तलवार ।

भावार्थ—उस किले की बुजियों पर किसी भी संतरी का पहरा नहीं था जो ‘कौन’ कह कर आने वालों को रोके और जिसे सुनकर आने वाले रुक जाएँ । उन दीवारों में बनबिलाव घूम रहे थे और उन पर बड़े-बड़े गिद्ध बैठे हुए इधर उधर देख रहे थे ।

भंडे वाला बाँस टूट गया है । उस पर पंख फैलाए गरुड़ बैठा है । ऐसा प्रतीत होता है मानो वह वहाँ अपने पंखों का भंडा लहरा रहा है—उत्प्रेक्षा-लंकार । युद्धों के कारण किले की जो दीवारें टूट गई थीं उनके खाली स्थानों पर आज हजारों भाड़ियाँ उगी हुई दिखाई देती हैं । कुछ दरारें पड़ी हैं जो घावों के समान दिखाई देती हैं । विस्मृति रूपी मकड़ी आशा रूपी जाल फैलाकर उन घावों में मरहम लगा रही थी । भाव यह है कि अगर किसी मनुष्य को घाव लग जाए तो वह उसमें मरहम लगाए उससे घाव भर जाता है ।

अचानक किले की ओर से जोर का शोर आने लगा । सब हैरान हो गए कि यह कैसा शोर ? अचानक किले का दरवाजा खुला और उसमें से अफगानों के समूह हथियार लिए हुए निकल पड़े । उनकी भौंहें क्रोध से चढ़ी थीं, उनकी आँखें लाल थीं और सबने लाल पटके बांध रखे थे । उनकी पीठों पर ढालें थीं, हाथों में भाले और बगल में तलवार और छुरे लटके हुए थे ।

पृ० १६

‘काबुल

कहीं चोट आई ?’

शब्दार्थ - काकुल=जुल्फ, बाल । द्रुत गति=तेज चाल । शोणित=खून ।

भावार्थ—उनकी गर्दन पर जुल्फों का पट्टा था । उनका शरीर गंदा हुआ था । वह अफगानों का समूह बढ़ी तेजी से नीचे की ओर उतरा । वे तेजी से काफिले की ओर बढ़ने लगे । लुटेरों को आते देखकर काफिले में भी शोर मच गया ।

काफिले में खतरे का ढोल बजाया गया। इसकी आवाज सुनकर सब तैयार हो गए। सब भालों को सावधानी से हाथों में लेने लगे और सवने तलवारें नंगी करलीं। वीर युवकों ने तुरन्त ही चक्र-व्यूह की रचना कर ली, वृद्धों, स्त्रियों और बच्चों को भीतर ले लिया और स्वयं चारों ओर डट कर खड़े हो गए।

वे लुटेरे आते ही इन पर टूट पड़े। इससे तलवारें, तीर, भाले और तीर आदि हथियार चलने लगे। काफिले की ओर के योद्धाओं ने ऊँटों पर से तीर चलाए जिससे लुटेरों के सर कट-कट कर गिरने लगे। तलवारें भी तेजी से चल रही थीं और खून की प्यासी थीं। इससे वहाँ खून की नहर बह निकली।

वे लुटेरे जम नहीं सके। हजारों के सर कट कर वहीं गिर गए। जो तलवारों के घाट उतार दिए गए उन्होंने पानी भी नहीं मँगा। यद्यपि वीर गयास को लड़ते समय थोड़ी चोट आई थी फिर भी उसने बड़ी वीरता से युद्ध किया।

‘अफगानों के दाँत गयास कर पाया हल।’

शब्दार्थ—जूक गए=युद्ध में मारे गए। शव=लाशें। स्वजन=सम्बन्धी। हृदय-स्रोत=दिल का भरना। प्रसवपीर=सन्तान के जन्म के समय की पीड़ा।

भावार्थ—इन वीरों के साथ युद्ध करके अफगानों के दाँत खट्टे हो गए। आज तक कभी भी उन्हें ऐसे योद्धाओं से सामना करने का अवसर नहीं मिला था। कुछ अफगान तो वहीं मर गए और कुछ लूटमार करके भाग निकले। देखते ही देखते पहाड़ों के बीच वे आँखों से ओझल हो गए।

काफिले की ओर से जो काम आये थे सब ने बड़े दुख के साथ, ठंडी सांसें भरते हुए उन्हें दफन किया। अपने सम्बन्धियों को, धन को और साथियों को खोकर सभी बहुत चिन्तित हुए। इसके बाद फिर काफिला तेजी से कन्धार शहर की ओर चल दिया।

बेगम के सिर पर तो सारी मुसीबतें एक साथ आ पड़ीं। वह बहुत अधिक रोने लगी। ऐसा प्रतीत होता था मानो उसके दिल का भरना बाँध तोड़ कर आँखों से बह निकला हो। उसकी सन्तान का जन्म होने वाला था।

इसलिए उसे बहुत अधिक पीड़ा हो रही थी। इस प्रकार उन बेचारों पर इस जंगल में एक नई मुसीबत आ पड़ी।

इन्हें रुकना पड़ा क्योंकि बेगम आगे नहीं चल सकती थी। मगर सारा काफिला इन्हें वहीं छोड़ कर आगे बढ़ गया। गयास को समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या करे और कैसे करे ?

पृष्ठ १७ 'क्षितिज गर्भ' अपने भर ।'

शब्दार्थ—क्षितिज गर्भ=जहाँ धरती और आकाश मिलते दिखाई देते हैं वह क्षितिज कहलाता है, सूर्य का उदय क्षितिज से ही होता है। तृणदल=घास। अंक=गोद।

भावार्थ—जैसे ही आकाश में क्षितिज में सूर्य का जन्म हुआ वैसे ही बेगम ने भी एक कन्या को जन्म दिया। वह ओस के समान सुन्दर थी और घास पर लेटी थी। उसका सौन्दर्य अनुपम था। उसे देख कर नजर उस पर नहीं टहरती थी। मां ने इस कन्या को अपनी गोदी में भर लिया।

'इन घासों' यह बाँकी है।

शब्दार्थ—गिरि-शिखर=पर्वत की चोटी। अंक=गोदी। मारुत=वायु। पुष्पो-भूम रहा=फूलों के रस को पीकर मस्त हो रहा है। पाटी=भरी हुई। सुरभ्य=सुन्दर। नई कली=नई कली के समान बच्ची, नूरजहाँ। पट=वस्त्र। हिमबालाएँ=पर्वत की पक्षियाँ। तारकमालाएँ=तारों का समूह। नवम-यंक=नया चन्द्रमा। मोती=ओस के मोती। जननी वीणा=जन्म देने वाली वीणा, माँ। मुंदरी=अंगूठी। सुधर=सुन्दर। मृदु=कोमल। हिमकण=ओस की बूँद। भावी=होनी। रहस्यमय अभिनय=गुप्त प्रदर्शन। सुभग=सुन्दर।

भावार्थ—जो वायु रेशम के समान घास के मैदानों में तथा वनस्पतियों में, पर्वत-चोटियों की गोदी में तथा नदियों के किनारे रातभर प्यासा ही घूमता रहा, इस समय वह रसभरे फूलों के प्यालों का रस पी-पी कर मस्त हो रहा है।

सवेरा होते ही नए फूल खिलते हैं जो रस से भरे हुए हैं। उनका रस पी कर वायु अपनी प्यास बुझाता है। यह प्रातःकाल का वर्णन है जो बहुत सुन्दर और मधुर है। साथ ही वर्णन में नाटकीयता भी है।

सामने पर्वत के नीचे हरी भरी घाटी दिखाई दे रही है। उसमें अनेक भरने भर-भर करते बह रहे हैं और वह फूलों से लदी हुई है। उसके किनारे की सुन्दर धरती पर झाड़ी के पर्दे के पीछे छिपी हुई नई कली के समान एक बालिका दिखाई देती है ! उस पर कोई वस्त्र नहीं है। वह घास से ही लिपटी दिखाई देती है।

यह कली कितनी सुन्दर है। यह हाल में ही उत्पन्न एक बालिका है। यह अकेली पड़ी हुई इधर-उधर देख रही है। इसका कोई भी सम्बन्धी इसके पास नहीं है। पर्वत की सुन्दर पक्षियाँ उससे खेल रही हैं। सारे तारे भी अपने आप को उस पर न्यौछावर कर रहे हैं। इससे उसके सौन्दर्य का प्रकाशन होता है।

ऊषा भी इसकी सुन्दरता पर मोहित है। इसी लिए उसने ओस की बूँदों के रूप में इस पर मोती न्यौछावर किये हैं। बीच में वह पड़ी है आस-पास मोती सी ओस की बूँदें हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानों वह बालिका तो चन्द्रमा है और ओस के मोती उसके चारों ओर बिखरे तारे हैं। उत्प्रेक्षा अलंकार। किन्तु उस बालिका की माँ कहीं छिपी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है मानो जन्म देने वाली वीणा तो छिपी हुई है लेकिन वह बालिका स्वर-लहरी के समान खेल रही है। अथवा वह बालिका इस धरती रूपी अँगूठी का सुन्दर नगीना प्रतीत होती है—सांगरूपक अलंकार।

मधुर कलियाँ चटक कर खिलती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वह तालियाँ बजा कर बच्ची को बहला रही हैं। सूर्य की किरणें भी स्वयं ओस की बूँदों में नहा नहा कर उसे नहला रही है—उस पर बिखर रही हैं। यह बालिका होनी के गुप्त प्रदर्शन का पहला दृश्य है। अभी तो भविष्य में इस बालिका को लेकर होनी बड़े अनोखे-अनोखे खेल दिखायेगी। किसने यह सुन्दर चित्र खींचा है ? किसने इस अनोखी मूर्ति का निर्माण किया है ?

‘सुरभित

विधि निपुणाई।’

शब्दार्थ—सुरभित=सुगन्धित। रज=फूलों का पराग, मिट्टी—श्लेष अलंकार। सानी = मिलाई गई। दिनकर=सूर्य। मुघराई = सुन्दरता। कर से= किरण से, हाथ से—श्लेष। विहंग=पद्मी। सांध्य जलद=संध्या का बादल।

निकाई=उज्ज्वलता । विधि-निपुणई=ब्रह्मा की कुशलता—सांगरूपक अलङ्कार ।

भावार्थ—उस बालिका रूपी मूर्ति का निर्माण कैसे हुआ इसका वर्णन कवि ने किया है ।

सुगन्धित फूलों के पराग की मिट्टी ली है, मोती का पानी लिया है और पर्वत बालाओं ने अपने हाथों से मोती के पानी में फूलों के पराग को मिलाया है । यह इसी प्रकार है जैसे कुम्हार मूर्ति बनाने से पहले मिट्टी सानता है । इसके बाद वह उसे चाक पर चढ़ाता है । उसी प्रकार सूर्य रूपी कुम्हार ने इस मिट्टी को घर्ती रूपी चाक पर रख कर चलाया है और इस प्रकार इस प्रतिमा को बनाया है । और फिर वसंत की शोभा लेकर उसे सुन्दर बनाया ।

अब कवि एक अन्य प्रकार से बालिका का वर्णन चित्र के समान करता है । चित्र बनाने के लिए एक पट या वस्त्र चाहिये जो सूत का बुना है और रंगीन है ।

चित्र वस्त्र पर यह बालिका रूपी चित्र शोभित था उसके लिये तारे रूपी चरखों ने सूत काता था, जिस सूत को लेकर सूर्य अपने किरण रूपी हाथों से ताना सा फैला देता था, फिर सुन्दर पद्मी उसमें बाना बुनते थे और फिर संध्या के रङ्गीन बादल उसमें सुन्दर रङ्ग भर जाते थे जो तितली के रङ्गों से सुन्दर था । ऐसा अनुपम वस्त्र था जिस पर वह बालिका रूपी उज्ज्वल चित्र शोभा पा रहा था । इसे देख कर तो स्वयं ब्रह्मा की कुशलता भी मोहित हो जाती थी—अतिशयोक्ति अलङ्कार ।

‘नवल हृदय

भली प्रकार ।’

शब्दार्थ—मूर्छित=बेहोश । वारि-वीचियों की=जल की लहरों की । सरोजिनी=कमलिनी । मरालिनी=हंसिनी । मरुप्रदेश=रेगिस्तान । सरितावर=श्रेष्ठ नदी । तरुणी अंचल=स्त्री का आंचल । क्रीड़ा=हिलना । मारुत=वायु । अभिलाषा=इच्छा । धर्मपरायण=धर्मात्मा । धाय=दाई, बच्चे का पालन करने वाली । शोध लगाया=ढूँढ़ा ।

भावार्थ—एक अन्य काफिला उसी मार्ग से होकर निकला । उसका

सरदार एक दयालु वृद्ध था। उसने जब उस बालिका को देखा तो बोला— तुम किसी अप्सरा की लड़की मालूम होती हो। लेकिन प्रकाश के समान सुन्दर कौन अप्सरा सी सुन्दर स्त्री अपने हृदय की कमजोरी के पश्चात्ताप के रूप में तुम को यहाँ छोड़ गई है। तुम घरती पर किस दुखी स्त्री के बेसुध मन के समान पड़ी हुई हो ! हे बालिके जिस प्रकार आँखों से आँसू भर कर घरती पर गिर पड़ता है उसी प्रकार तुम्हें भी कौन घरती पर छोड़ गया है ? उपमा अलंकार ।

तुम जल की लहरों में खेलने वाली कमलिनी के समान दिखाई देती हो ! तुम कविता से प्राप्त होने वाले आनन्द की तरङ्ग के समान पवित्र हो। तुम मानसरोवर की हंसिनी के समान उज्ज्वल हो। तुम रेगिस्तान को भी शीतल करने वाली नदी के समान सबको आनन्द देने वाली हो। तुम किसी स्त्री के आँचल के कम्पन के समान खेल रही हो जिसे हवा हिलाती हो। तुम चुपचाप रहने वाली आँखों की भाषा के समान चुप रहने पर भी अपना हाल बता रही हो। तुम आलस भरी आँखों के समान मस्त पड़ी हो। उपमा अलंकार ।

जिस प्रकार कोई साधक हमेशा अनन्त ब्रह्म का ध्यान करता रहता हो उसी प्रकार तुम भी किस भविष्य की ओर देख रही हो ? जिस प्रकार नई दुल्हिन की कोमल मधुर आशा होती है उसी प्रकार तुम भी कोमल और मधुर हो— उपमा अलंकार । यह बातें कह कर सरदार ने उस बालिका को गोदी में उठा लिया और उसे प्यार किया। वह इसे देखकर आश्चर्य से भर गया।

वह वृद्ध सरदार बड़ा धर्मात्मा और दयालु था। उस अनाथ बच्ची को देख कर उसे बहुत अधिक दुख हुआ। वह उसे बड़ी मुश्किल से रुई में लपेट कर कंधार तक लाया। और सराय में धाय को खोजा।

पृष्ठ १६ 'मिल ही गई नव जीवन दे सरसाया ।'

शब्दार्थ—शिशुवियोग=पुत्र का विरह। प्रेम चिह्न=चुम्बन। टकसाल=सिक्का, बच्चा। अङ्क=गोदी। रंक=भित्तारी। अंकुरित बीज=वह बीज जिससे अंकुर पैदा हो गया हो=बढ़ती हुई नूरजहाँ। पल्लव=कौपल, हाथ। वसुधा=घरती। विहंग=पक्षी। दिनकर=सूरज। हिमकर=चाँदी। सुधा=अमृत, चाँदनी।

भावार्थ—उस घाय के पास नूरजहाँ बढ़ने लगी । इसका वर्णन कवि ने संकेतात्मकता के साथ किया है । जब बीज खींचा गया तो उसमें अंकुर पैदा हो गया और इस प्रकार उसके सुनसान जीवन में वृद्धि और विकास की आशा होने लगी । उसी प्रकार नूरजहाँ भी धीरे-धीरे बढ़ी होने लगी और उसके विकास की आशा बढ़ने लगी । जिस प्रकार अंडे से पक्षी निकल कर अपने दो पर फैलाता है जो कोंपल के समान कोमल होते हैं और चिकने होते हैं उसी प्रकार नूरजहाँ भी अपने कोमल हाथों को फैलाने लगी तथा हाथ-पाँव चलाने लगी ।

छोटे पक्षी अपने पंखों को बहुत मारते हैं लेकिन उड़ नहीं सकते और पक्षियों को देख देख कर लज्जित होकर रह जाते हैं । उसी प्रकार नूरजहाँ ने भी अपने हाथ पाँव बहुत मारे लेकिन वह धरती से उठ न पाई, लेटी-लेटी हाथ-पाँव मारती रहती थी । सूरज ने अपनी किरणों द्वारा उसे ताकतवर बनाया । जैसे-जैसे दिन बीतते जाते थे वैसे-वैसे बालिका की शक्ति बढ़ती जाती थी । चन्द्रमा भी अमृत जैसी चाँदनी बरसा कर उस बालिका को बढ़ाने लगा ।

‘आ आकर

छलकाया ।’

शब्दार्थ—जीवन=सुख, पानी—श्लेष । निर्भर छाती=भरने रूपी छाती—रूपक अलङ्कार । निश्चल आभा=शान्त प्रकाश । मानस=मन । उद्गम=उत्पत्ति का स्थान । सरसी=तालाब । नवसलिला=नये जल वाली नदी । जल-यान=जहाज ।

भावार्थ—सब ऋतुएँ आती रहीं और अपना मधुर दृश्य फैलाती रहीं । बालिका को भी सुन्दर बनाती रहीं ! संध्या स्वयं लोरी गाकर उसे सुलाती थी और उषा स्वयं उसे जगाती थी । वह बालिका अंकुर के समान ही बढ़ती जा रही थी । और अपने माँ की भरने रूपी छाती को जीवन का जल देकर सींचती रहती थी ।

वह बाला दीपक की लौ के समान शीशे में शान्त प्रकाश फैला देती थी । वह आँखों की पुतली के समान प्यारी थी और जो उसे देखता उसी के हृदय में घर कर जाती थी । पहले वह बच्ची थी, हँसती रहती थी और पलने

में लोरी गा-गाकर उसे सुलाया जाता था। इसके बाद वह घुटनों के बल चलने लगी और चोरी-चोरी मिट्टी खाने लगी।

वह एक नदी के समान थी जो पहाड़ों से जन्म लेकर बढ़ती चली जाती है। वह कभी तो आनन्द में हंसा करती थी और कभी रो दिया करती थी। जिस प्रकार जहाज जैसे-जैसे सागर में बढ़ता जाता है, उसका किनारा दूर होता जाता है और फिर कभी वह मार्ग भटक कर सागर में चकर लगाने लगता है उसी प्रकार नूरजहाँ जैसे-जैसे बढ़ती जाती थी वैसे-वैसे अपने कुल से भी दूर होती जाती थी।

जब उसके दूध के दाँत टूट गए तो बचपन आया और वह बच्चों के खेल खेल कर आनन्दित होने लगी।

पृ० २० 'गुड़ियों

गिराकर।'

शब्दार्थ—व्यंजन=भोजन। रज-तृण=मिट्टी और घास। पात्र=वर्तन।

भावार्थ—अब कवि बालिका की क्रीड़ाओं का वर्णन करता है। वह गुड़ियों के ब्याह रचाती थी, मिट्टी के घरोंदे बनाती थी और कई मूर्तियाँ बना-बना कर पाँव से रौंद डालती थी। वह टूटे हुए प्यालों में मिट्टी और घास के भोजन बनाती थी तथा पत्तों के बर्तनों में परोस कर सब को ला-ला कर देती थी।

वह बात-बात में हठ करती थी, हठ कर इठला जाती थी, धरती पर लेट कर रोने और चिल्लाने लगती थी, कभी गाने लगती थी। उँगली से इशारे समझाती थी। पानी को 'मम' कहती थी। उसका प्यारा तुतलाना सुन-सुन-कर सब उसका मुख चूम लेते थे।

माँ ने थोड़ी देर पहले ही उसे नहला कर उजले कपड़े पहनाये थे और माथे पर नीली बिंदी लगाई थी। लेकिन जैसे ही माँ का ध्यान किसी दूसरी ओर गया वैसे ही वह बाहर निकल आई और गागर गिरा कर पानी में खेलने लगी। इस प्रकार सारे कपड़े बिगाड़ लिए।

'अब हाथ

छिप जाती।'

शब्दार्थ—बवंडर=तूफान। तड़ित=बिजली।

भावार्थ—अब वह और भी बड़ी होगई है। लता से स्वयं फूल तोड़

लाती है। हँसती हुई धुमड़ी खेलती है और चक्कर खाकर गिर जाती है। जब कभी तूफान आता है तो वह उसके बीच दौड़ कर चली आती। इस पर उसकी माँ घबरा जाती। और वह हँसती हुई लोट-पोट हो जाती। वर्षाश्रुतु में बादलों को देख कर वह बहुत प्रसन्न होती। और जब बिजली चमकती तो वह उठ कर माँ के आंचल में छिप जाती थी।

‘वह कुँवर बाग

थे जाते।’

शब्दार्थ—तरुओं पर=वृक्षों पर। बत=बतख।

भावार्थ—वह कुँवर बाग में जाकर पेड़ों का झूला झूलती थी। और रंगीन बुलबुले के समान नदी की लहरों में तैरा करती थी। वह जब दौड़कर बतख के बच्चों को पकड़ने जाती थी तो उनकी माँ कें-कें करके इस पर चोंच चलाती थी। इतने में ही छोटे बच्चे कूदकर पानी में चले जाते और तेजी से बहुत दूर जाकर नहाने लगते।

पृ० २१

‘वह भी

सुख पाती।’

शब्दार्थ—मीन=मछली, बालिका। बोचि-जाल=लहरों का जाल। हाला=शराब। अलियों में=सखियों में।

भावार्थ—वह भी पानी में उतर जाती लेकिन बतख तक न पहुँच पाती थी। और बतख की आवाज के समान ही वह जल में लहरे उठा देती थी। उस के तैरने से लहरों की लड़ियाँ टूट जाती थीं और जल के कण मोतियों के समान बिखर-बिखर कर उस पर न्यूँछावर हो जाते थे।

वह मछली के समान लहरों के जाल को तोड़कर निकल जाती थी। और वह लहरों के प्याले में शराब सी बढ़ती थी अर्थात् उन्हें भी मस्त बना देती थी। जल-पक्षी हमेशा इससे आगे रहते थे और यह उन तक न पहुँच पाती थी। वह पानी पर उड़ जाते थे और उसे इस प्रकार असफल बना देते थे।

यह हाथ बढ़ाकर उन पक्षियों की छाया को छू लेती थी जिसे प्रातःकालीन सूर्य ने इस तक पहुँचाया था। वह जितना ही साहस करती उतना ही उस का

बल कम होता जाता था । लेकिन वह फिर भी अपने शरीर को आगे बढ़ाती और नाया के समान ही धोका देकर उन को पकड़ने की कोशिश करती थी । अन्त में वह बेचारी हार मानकर किनारे पर आ जाती थी इस प्रकार वह अपने जैसी सखियों में खेल-खेलकर आनन्दपूर्वक समय व्यतीत करती थी ।



तीसरा सर्ग

कथासार—इस सर्ग में कवि ने सलीम का वर्णन आरम्भ किया है। रात का समय है। यमुना की धारा शान्त है। सारा संसार अन्धकार से घिरा हुआ है। आकाश में तारे जगमगा रहे हैं। यमुना के किनारे के महलों की परछाइयां यमुना में पड़कर ऐसी प्रतीत हो रही हैं जैसे पुत्र अपनी मां के वक्षस्थल पर सो रहे हैं।

किले के अन्दर एक बहुत सुन्दर महल था जो संगमरमर का बना था और जिसमें अपूर्व शोभा थी। सलीम उसमें क्रीड़ा कर रहा था। उस क्रीड़ा-गृह में अनेक सुन्दर चित्र थे। फानूस जल रहे थे। चारों ओर प्रकाश फैला हुआ था। सुन्दरियों का समूह नाच रहा था। सलीम लोटा हुआ उन्हें देख रहा था। बीच बीच में मुग्ध हो कर 'वाह-वाह' कह देता था।

उन नर्तकियों की रानी अनारकली थी जो बहुत सुन्दर थी। आकर्षण की साक्षात् मूर्ति सी दिखाई देती थी। वह अनेक प्रकार के नृत्य करती हुई सलीम को रिक्ता रही थी। सलीम भी एकटक उसी की ओर देख रहा था। वह फिर सिर पर घड़ा लेकर और हाथ में दीपक लेकर मनोहर नाच करती रही। उसकी कला और सौंदर्य देखकर सलीम प्रेम में मतवाला हो गया।

अचानक प्रकाश बुझ गए। कुमार अनारकली से कहने लगा कि तू ने आज मुझे मोहित कर दिया है। मेरा दिल तेरी कला ने चुरा लिया है। आ मेरे हृदय से लगकर सो जा। बड़ी मुश्किल से मैंने तुझे प्राप्त किया है। यह कहते-कहते कुमार ने उसे गोदी में भर लिया। अनारकली ने लज्जित होकर आँखें झुका लीं।

उसी समय उन्होंने ऊपर देखा तो सामने अकबर खड़ा था। सलीम थरा गया। अनारकली का भी भय के मारे बुरा हाल था। अकबर क्रोध से भरकर बोला—“अनारकली तेरी यह मजाल! बस आखिरी प्रार्थना कर ले।” यह

सुनते ही अनारकली चीख मार कर बेहोश हो गई ।

इस सर्ग में सलीम की विलासिता का और अनारकली की सुन्दरता और उसकी कला का वर्णन है ।

पृ० २२ 'था निशीथ कहीं है दौड़ता ॥'

शब्दार्थ—निशीथ=आधी रात । कालिन्दी=यमुना । मारुत=वायु । श्रान्त=थकी । सुप्त धरा=सोई हुई धरती । रजनी तम=रात का अँधेरा । मलिन=मैला । नभ-दीप=तारे । तटवर्ती=किनारे वाले । प्रासाद=महल । प्रतिबिम्ब-शिशु=छाया रूपी बालक-रूपक अलंकार । वक्ष=छाती । व्योम विचुम्बी=आकाश को चूमने वाली । अट्टालिका=कोठे, छत । व्योम मीन=आकाश रूपी मछली—रूपक अलंकार । लक्ष्य कर=निशाना लगाकर । नभ-कानन-चारी=आकाश रूपी वन में घूमने वाला—रूपक अलंकार । मृगशिरा=एक नक्षत्र—मृग का अर्थ हरिण भी है । व्याघ्र=शिकारी । पथसा=आकाशगंगा ।

भावार्थ—आधी रात का समय था । यमुना की कलकल शान्त थी, हवा भी थक कर कहीं सो रही थी । सारी धरती सो रही है । उसका मुख रात के अँधेरे से काला हो रहा है । आकाश में तारे टिमटिमा रहे हैं । उन्हीं से कुछ प्रकाश फैला है ।

यमुना के किनारे वाले महलों की छाया रूपी बालक यमुना रूपी माँ की छाती पर शान्त भाव से सो रहे थे । उन महलों की छतें आकाश तक पहुँच रही थीं । ऐसा प्रतीत होता था मानो वे आकाश रूपी मछली का निशाना लगा उन्हें बेध रही हों—उत्प्रेक्षा अलंकार ।

आकाश रूपी वन में घूमने वाला मृगशिरा नक्षत्र रूपी हरिण बड़ी व्याकुलता से भागा आ रहा था क्योंकि व्याघ्र रूपी शिकारी उसका पीछा कर रहा था । आकाश में कई नक्षत्र होते हैं । मृगशिरा एक का नाम है । आकाश गंगा को देखकर कवि कहता है कि क्या धूल उड़ रही है जो यह मार्ग सा बन गया है ? क्या ऐरावत हाथों कहीं दौड़ता हुआ गया है जिसके कारण आकाश में यह धूल सा आकाशगंगा का मार्ग बन गया है ।

पृ० २३ 'साक्षी छतें सुनहली सारी ॥'

शब्दार्थ—साक्षी=गवाह । सती हृदय सा=विविध हृदय के समान-उपमा

अलंकार । मार्ग प्रदर्शक=रास्ता दिखाने वाला । भ्रांत पोत=मार्ग से भटका हुआ जहाज । उत्तर=उत्तर दिशा । उत्तर=जवाब—यमक अलंकार । स्थिर=स्थिर । हिमगिर=हिमालय । वास्तु कला=भवन-निर्माण-कला । मराल=हंस । सर=तालाब । मद्यप=शराबी । मलिन्द=भँवरा । मंजुल=सुन्दर । क्रीड़ा-कद=क्रीड़ा करने का कमरा । अंकित=चित्रित ।

भावार्थ—सदैव उत्तर दिशा में स्थिर रहने वाला ध्रुव तारा दिखाई दे रहा था । वह शान्त था और सब के लिए पवित्र हृदय वाले साक्षी के समान था । वह सदैव मार्ग भटके हुए जहाजों को रास्ता दिखाया करता था । वह तूफानी सागर के निरन्तर प्रश्न का उत्तर था क्योंकि तूफानी सागर में भटके हुए जहाजों को वही सही रास्ता दिखाता था ।

उस मजबूत बिले के अन्दर एक बहुत सुन्दर महल था—मानो हिमालय के अन्दर मानसरोवर शोभित हो । किला हिमालय के समान था और वह महल मानसरोवर के समान संगमरमर का बना हुआ था । वह महल भवन-निर्माण कला का सर्व श्रेष्ठ नमूना था । सलीम उस महल रूपी तालाब का हंस बनकर उसमें क्रीड़ा कर रहा था ।

उस महल में मणियों के पेड़ और लताएँ चित्रित थीं जो फूलों के भार से लदी थीं । रस पीने वाले भँवरे उन लताओं पर मँडरा रहे थे जिससे वे लताएँ प्रसन्न हो रही थीं । वह कीड़ा-गृह अनेक प्रकार के चित्रों से सुशोभित था । उसमें अनेक अनुपम दृश्य दिखाई देते थे । नृत्य की भंगिमाओं के चित्र भी बने थे । मणि से पच्चीकारी कर उसमें सुन्दर फूल बनाए गए थे । फर्श मखमल का बना था और सारी छतें सोने से सुनहली थीं ।

‘लाल

मनोहर ॥’

शब्दार्थ—लाल, जमुरद=कीमती पत्थर । केलिशाला=क्रीड़ा-गृह । सहस-शाखा=हजारों शाखा वाले । श्वेताभ प्रस्तर=सफेद पत्थर । अन्तःपुर=महल के भीतर का भाग जहाँ स्त्रियाँ रहती हैं । प्रांगण = आँगन । नर्तन=नाच । शिशु की निशा=बचपन की रात—रूपक अलंकार । सिरानी=दूर हो गई । गौवन-दिनकर=जवानी रूपी सूर्य-सौंगरूपक । छवि विलसित=शोभा से युक्त । तन-सरवर=शरीर रूपी तालाब । दो सरसिज=दो कमल, दो कुच ।

भावार्थ—उस क्रीड़ागृह में चारों ओर लाल, जमुर्द, हीरे, मोती, मूंगे और नीलम जड़े हुए अपना प्रकाश फैला रहे थे। उसमें हजारों भागों वाले रंग-रंगीले फानूस जल रहे थे जो सुगन्धि फैलाकर रात को भी दिन बना रहे थे।

सफेद पत्थर के बने हुए हरम के आँगन में सुन्दरियों का एक समूह नाच रहा था। सलीम लेटा हुआ यह सुन्दर नृत्य-कला देख रहा था। बीच-बीच में प्रसन्न होकर वाह-वाह कर देता था।

उन नाचने वालों की रानी का नाम अनारकली था। उसका शरीर बड़ा आकर्षक था। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह साँचे में ढली हुई थी। बचपन से ही रात बीत गई थी, जवानी का सूर्य चमक रहा था और शोभा से युक्त शरीर रूपी तालाब में कुच रूपी दो कमल खिले हुए थे।

पृ० २४ 'उस सरस शिखी हो जाती ॥'

शब्दार्थ—यौवन हाला=जवानी की शराब। विनमित=भुक्कर। क्षीण लंक=पतली कमर। वीचिविलास=सरित की=नदी की लहरों का नाच। भ्रूलकेतु ध्वजा=कामदेव का झंडा। विधिवत=नियमानुसार। नटी=नर्तकी। रस का सरवर=आनन्द का तालाब। कपोती=कबूतरी। शिखी=मोर।

भावार्थ—उस सुगन्धि की लहर में तथा जवानी की शराब में मस्त होकर वह आँखों में जादू भर कर पुतली के समान नाच रही थी। जवानी के नए फूलों के भार से भुक्कर वह अपनी पतली कमर लचकाती थी और अपनी आँखों से सलीम का हृदय चुरा रही थी।

वह नदी की लहरो के नाच के समान आनन्द की वर्षा कर रही थी। अपनी आँखों को नचाकर वह कामदेव की ध्वजा फहरा रही थी। क्योंकि कामदेव की ध्वजा पर मल्लुकी का चिह्न होता है। मल्लुकी की उपमा आँखों से दी जाती है। वह अपने मुख की मुद्राओं में आनन्द भरकर भावों को प्रकट करती है और नियमों के अनुसार शरीर को नचाती हुई बड़ी कुशल नर्तकी बन रही थी।

वह स्वर को खींच-खींचकर मधुर गाना गा रही थी और कमर को झुका कर कमान बना लेती थी। तथा सलीम के हृदय को निशाना बनाकर आँखों

से तीर चलाती थी। समतल पर वह छम-छम करती हुई नाचने लगी। रंगीले सलीम के दिल पर उसका प्रभाव जम गया।

अनारकली अपने नूपुरों को बजाती हुई, भावों को अंगों की गतियों से प्रकट करती हुई वह लहरों के समान कभी उठती थी और कभी गिर जाती थी। इस प्रकार वह आनन्द के तालाब सी दिखाई देती थी। कभी वह शरीर को मोड़ कर डमरू बना लेती, कभी कबूतरी बन जाती और कभी मोरनी बन जाती।

‘घट लिए

मतवाला ॥’

शब्दार्थ—घट=घड़ा। बाले=जला लिए। रसा=घरती। वारिद-पट=मेघ का वस्त्र। विधु-मुख=चन्द्रमा रूपी मुख-रूपक अलंकार। लावण्य-सिंधु=आकर्षण का सागर। हृदय-पोत=दिल का जहाज। साकी=शराब पिलाने वाले।

भावार्थ—फिर वह सिर पर घड़ा लेकर और हाथ में जलते दीपक लेकर नाचने लगी। ऐसी नाची कि न तो एक बूंद पानी का छलका और न ही हाथ का दीपक हिला। घड़ा और दीपक लिए हुए वह दुहरी हो जाती थी और फिर सीधी होकर घरती पर घुंघरू बजाने लगती थी।

जिस प्रकार आकाश में हल्का बादल का टुकड़ा हवा में उड़ता हुआ आता है और कभी चन्द्रमा को छिपा लेता है और कभी उससे दृष्ट जाता, उसी प्रकार अनारकली कभी अपने मुख को वस्त्र में छिपा लेती थी और कभी वह हटाकर अपना पूरा मुख दिखला देती थी।

उसका मुख रूपी चन्द्रमा देखकर आकर्षण रूपी सागर में तूफान आ जाता और सलीम का हृदय रूपी जहाज उस तूफान की लहरों में पड़कर संकट में घिर जाता। पूरे चाँद के निकलने पर सागर में तूफान आ जाता है यह प्रसिद्ध ही है।

उस रमणी की जवानी शराब के समान थी, उसके मस्ती भरे नेत्र शराब पिलाने वाले साकी थे जो प्याले दे-देकर सलीम को बदमस्त बनाए दे रहे थे। उसकी कला की सुन्दरता देखकर तथा उसका अनुपम सौंदर्य देखकर सलीम अपने आप को भूल गया और प्रेम में मतवाला हो गया।

‘प्रकाश

रत्न पाया ॥’

शब्दार्थ—नक्षत्र श्रवली=नक्षत्रों की पंक्ति, अन्य नाचने वालियाँ । चाँद= अनारकली । अरुण=लालिमा । वक्ष सर = छाती रूपी तालाब ।

भावार्थ—सलीम के इशारे से सारी बत्तियाँ बुझ गईं । अन्य नाचने वालियाँ चली गईं । अनारकली ने भी नाचना बन्द कर दिया ।

उसकी कला देखकर तथा उसकी शोभा देखकर सलीम मुग्ध हो गया और उससे बोला—आज तू ने अपना कमाल दिखाकर मेरा हृदय चुरा लिया है ।

तू मेरे गले का हार ले ले और स्वयं मेरे गले का हार बन जा । नाच-नाच कर तू थक गई है । आ मेरे हृदय से लग कर अब सो जा ।

तेरे नयनों के डोरे लाल हो गए हैं और तेरे गाल भी प्रातःकालीन लालिमा से भर गए हैं । तेरी छाती में प्रातःकाल रूपी जवानी है और उसमें कैसे कमल खिले हैं । मैंने बहुत खोज के बाद यह रत्न पाया है । अब मैं तुझ पर तन-मन से निछावर हो गया हूँ ।

‘अमूल्य मोती

लजा के मोचा ॥’

शब्दार्थ—उदधि हृदय=सागर में से । कृतज्ञता=पेहसान ।

भावार्थ—आज किस्मत से मैंने सागर का यह अमूल्य मोती प्राप्त किया है । तू मुझ से आँखें मिला । मेरे हाथ में अपना हाथ दे दे और प्रेम प्याला छक कर पिला दे ।

मैं तेरी सुन्दर गर्दन में अपनी भुजाओं की माला पहना दूँ । यह सुनकर अनारकली ने पेहसान से दबकर प्रणाम किया और शरम से आँखें नीचे झुका लीं । जैसे ही उसने पाँव पीछे हटाए सलीम ने उसे आलिंगन में बाँध लिया । उसने सर झुका कर घूँघट निकाल लिया और लज्जा से अपनी आँखें बन्द कर लीं ।

‘कपोल

होश खोकर ॥’

शब्दार्थ—कपोल=गाल ।

भावार्थ—सलीम ने अनारकली के गाल चूम-चूम कर उसे अपने पास खींचा । उसी समय एक खटाका हुआ । उन्होंने देखा कि सामने अकबर खड़ा है । वह गरज कर बोला—

“सलीम यह क्या है ! तू इतना निडर हो गया है ।” फिर एक ठंडी साँस लेकर बोला—“और अनार तू यह क्या कर रही है, देख यह तलवार है और तू है । खुदा से आखिरी दुआ माँग ले ।”

सलीम काँपता हुआ सिर झुकाए उठ खड़ा हुआ और अनारकली एक चीख मार कर बेहोश होकर धरती पर गिर पड़ी ।



चौथा सर्ग

कथासार--अकबर ने अनारकली को कैदखाने में डाल दिया । कैदखाने में अनारकली के वर्णन से इस सर्ग का आरम्भ होता है । अनारकली बन्दीगृह में धरती पर पड़ी है । कल तक तो वह शाही महलों में रहती थी और आज उसकी यह हालत हो गई है । चिन्ता में डूबी हुई थी । वह अपनी बाँह पर हाथ धरे हुए रो रही थी । उसके बाल बिखरे हुए थे । सारा संसार शान्त था । उसे रह रह कर सलीम की याद आ रही थी । उसे वह क्षण याद आ रहा था जब सलीम ने उसकी बाँह पकड़ी थी और जब उससे उसकी आँखें चार हुई थीं ।

वह सोच रही थी कि भाग्य से मेरी वह खुशी नहीं देखी गई । एक क्षण भर के लिए मेरे जीवन में भी प्रेम की बहार आई थी लेकिन दूसरे क्षण ही सब उजड़ गया । और अब सिवाय आँसुओं के पास कुछ भी नहीं ।

उसे इस बात का दुःख हो रहा था कि वह सलीम को जी भर कर देख भी न सकी । जब वह उसके पास खड़ा था तो उसकी आँखों में दुनियाँ भर की लाज भर गई थी । उसकी आँखें ऊपर उठती ही नहीं थीं । अब केवल एक इच्छा बाकी है । वह यह कि मरने से पहले प्यारे सलीम को एकबार देख लूँ । मरने से मैं नहीं डरती । मृत्यु तो मुझे आजाद करदेगी । लेकिन हे प्रिय सलीम तुम चाहे एक क्षण भर के लिए ही मेरे सामने आना मगर अवश्य आना । तुम्हें देखने के बाद मैं हँसती-हँसती मृत्यु का आलिङ्गन कर सकूँगी ।

हे प्रिय मरने से पहले तुम्हें देखलेने पर आँखें न खोलूँगी । तुम्हारी मूर्त आँखों में लेकर ही मर जाऊँगी । और अगर तुम न आ पाए तो मैं आँखें बन्द करके तुम्हारे ध्यान में लीन हो जाऊँगी । लेकिन हे प्रिय ! मेरे बाद तुम मुझे भुला देना । मेरी कसम रोना नहीं । तुम्हारा जीवन सुख और

आनन्द से भरा रहे, बस यही मेरी अभिलाषा है ।

वह इसी प्रकार सोच रही थी कि अचानक दरवाजा खुला और अकबर ने भीतर प्रवेश किया । लेकिन अनारकली की आँखों में तो सलीम का रूप समाया हुआ था । वह उसमें इतनी खो गई थी कि वह अकबर को पहचान भी न सकी । उसने समझा कि सलीम आ गया है और वह बोली “आओ प्रिय सलीम आओ । तुम्हारा अन्तिम दर्शन पाकर मैं अपना जीवन सफल कर लूँगी । मैं तुम्हें याद ही कर रही थी । सच्चे प्यार का फल अवश्य मिलता है ।”

यह सुनकर अकबर कड़क उठा—“क्या तुम्हारी आँखों में चरबी छा गई है जो तुम्हें कुछ भी नहीं दिखाई देता । उस लड़के के फंदे में फँस कर तू इतनी पागल हो गई है ? क्या सारी शर्मोहया नष्ट हो गई है ?” क्रोध में भर कर वह बोला । तुम्हारी इस गुस्ताखी के लिए मैं तुम्हें प्राणदंड देता हूँ ।

यह सुन अनार ने कहा “लीजिए मेरा सर हाजिर है । आप इसे काट डालें ।”

यह सुनकर अकबर कुछ शान्त हुआ और बोला “अगर चाहो तो तुम बच भी सकती हो । मैं तुम्हें एक मौका देने आया हूँ । तू राजमुकट की मणि है, बच्चों का खिलौना नहीं । यदि तुम राज्य का भोग करना चाहो तो आज मेरी रानी बन जाओ । यदि तुम स्वीकार करोगी तो सारी दुनिया का शासन तुम्हारे इशारों से होगा । जिसे तुम चाहोगी वह राजा हो जाएगा और जिस पर नाराज होगी वह भिखारी बना दिया जाएगा ।

तुम्हारा यह रूप देखकर मेरी तलवार हाथ से गिर गई है । इसी रूप पर तरस खाओ । यदि तुम्हें जरा भी अक्ल हो तो सोच लो तुम्हारे लिए क्या अच्छा है । मूर्ख बन कर राज्य के सुख को न ठुकराओ । आओ मेरी छाती से लग जाओ ।”

अनारकली क्रोध में बोली “ओ अकबर आगे मत बढ़ना । तुमने स्त्रियों को क्या समझ रखा है ? तुमने झूठे भाँसों में फँसाकर कितनी ही स्त्रियों का जीवन बर्बाद कर रखा है जरा आँख खोल कर उसे देखो । वे पिंजरे में बन्द चिड़ियाँ हैं जो रोया करती हैं । तुमने अपने बल और वैभव का सहारा लेकर उनका

जीवन नष्ट कर दिया है।”

‘लेकिन तुम्हारी यह चाल मुझ पर नहीं चलेगी। मैं तुम्हें प्यार नहीं कर सकती। मैंने सलीम को प्यार किया है और उसी के प्यार में मैं मरना भी कबूल करूँगी। हे अकबर ! मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ। मुझे परेशान न करो। मुझे क्षमा करो। तू सारी दुनिया का स्वामी है। क्यों ईर्ष्या करता है ? मेरी छोटी दुनिया को मुझसे मत छीनो। मेरा जीवन तो सलीम को ही समर्पित है। अगर इसके लिए तुम मुझे प्राणदंड देना चाहो तो मेरा सर हाजिर है।”

अकबर क्रोधित होकर बोला, “यह उपदेश तुम किसी और को देना। मैं बच्चा नहीं हूँ। तुम्हारी चालें खूब समझता हूँ। यदि मेरा नाम अकबर है तो तुम्हें इस गुस्ताखी का तमाशा दिखा दूँगा। जब दर-दर ठोकर खाएगी तब मेरी बातें याद करेगी। एक बार फिर सोच लो तुम्हें मेरा प्रस्ताव स्वीकार है या नहीं ?”

अनारकली ने दृढ़ता से उत्तर दिया—“ऐसा कभी नहीं होगा। मैं वैसे ही मरी बैठी हूँ। तुम क्यों मुझे प्राणदंड नहीं दे देते।”

अकबर ने उत्तर दिया “तुम्हें मारकर मैं तुम्हारे दुखों का अन्त नहीं कर देना चाहता। कल ही तुम्हें यह देश छोड़ देना होगा और दर-दर भटकना पड़ेगा। सलीम तेरी छाया भी न देख सकेगा। जा मैं अपने दिल को भी समझा लूँगा” यह कह कर अकबर ठंडी साँस लेकर बन्दीगृह से बाहर हो गया।

इस सर्ग में अनारकली और अकबर के चरित्र का वर्णन है। अनारकली सच्चे प्रेम की प्रतीक है और अकबर वासना का। लेकिन अकबर के चरित्र का जो पतन दिखाया है वह बहुत अधिक है।

पृ० २७ ‘थी पड़ी बीमार हुई थी ॥’

शब्दार्थ--अबला = स्त्री। शयनागार = सोने का कमरा। चपल = चंचल। शर = वाण, किरणें। बेध = छेदकर। तम-निश्चर = अंधकार रूपी राक्षस—रूपक अलंकार। तारक = तारों से हीरे। नीरवता = शान्ति। रव = आवाज। मानस = हृदय। बीमार हुई = प्रेम का रोग लगा।

भावार्थ—अनारकली जो कल तक शाही सोने के कमरों में विलास करती थी वही आज कैदखाने में घरती पर पड़ी हुई है। वह उस अंधकार रूपी सागर में पड़ी हुई दुख में डूब-उतरा रही थी। वह अकेली थी और चिन्ता में बहती चली जा रही थी।

उसने जो मणियों के गहने पहन रखे थे उन से जो किरणें निकल रही थीं वे तीरों के समान थीं और अन्धकार रूपी राक्षस की छाती छेद कर दीपक के समान जल रही थी—उपमा अलङ्कार। वह अपने सर को बाँह पर घरे हुए धीरे-धीरे रो रही थी। उसके केशों में कंगन के मोती और हीरे चमक रहे थे।

दुनिया का सारा शोर शान्ति में सो गया था। लेकिन उसका हृदय बालक के समान और भी जिद्दी हो गया था और वह केवल उसी सलीम के ध्यान में लगी थी। सिवाय दिल की धड़कन के और कोई आवाज सुनाई नहीं देती थी। जिस प्रकार कैद में पड़े पक्षी के पंखों में उड़ जाने की इच्छा होती है उसी प्रकार वह भी उस कैदखाने से कहीं दूर चली जाना चाहती थी।

जिसने अनारकली की बाँह पकड़ी थी वह उसी का मनोहर चित्र अपने हृदय रूपी वस्त्र पर बार-बार बना रही थी। सलीम को याद कर रही थी। वह सोच रही थी कब पहले पहल उसकी और सलीम की आँखें चार हुई थीं कब जीवन में पहिली बार उसे प्रेम का रोग लगा था ?

पृ० २८ 'उस

निद्रा टूटी ॥'

शब्दार्थ—कुसुमग्रंथ = फूल की गोदी। हिमकण = ओस की बूँद। दिनकर = सूर्य, अकबर। धूमकेतु = पूँछ वाला सितारा जो थोड़ी देर के लिए ही आकाश में उदित होता है। साध = इच्छा। उपचार = उपाय। उपहार = भेंट। परिमल-बोली = सुगन्धि रूपी वचन—रूपक अलङ्कार। काल = मृत्यु।

भावार्थ—मैं सलीम रूपी फूल की गोदी में ओस की बूँद के समान सुशोभित थी लेकिन जब अकबर रूपी सूरज चमका तो एक क्षण भर के लिए

भी वहाँ नहीं ठहर पाई। अब मैंने यह सीखा है कि चलने में सुख है; रुकने में तो दुख ही दुख है। पुच्छलतारे के समान एक क्षण भर चमक कर छिप जाने में ही सुख है।

मेरे मन में वासना जरा भी नहीं है। केवल एक इच्छा है और वह यह कि मेरे प्यासे नयन एक बार प्रिय सलीम के दर्शन कर लेते। उस समय वे मुझे गोदी में लिए हुए थे इसलिए मैं उन्हें देख भी न पाई थी। मेरी आँखों में दुनिया भर की लज्जा समा गई थी और मैं ऊपर देख भी न पाई।

वे मुझ को आलिंगन के उपायों से लुभाते रहे लेकिन मैं उन्हें अपने यौवन की भेंट देकर उनकी पूजा न कर पाई। वे बार-बार मुझसे कहते रहे कि कुछ तो बोलो, चन्द्ररूपी मुख से रेशमी घूँघट हटा दो। लेकिन मेरे मुख रूपी फूल से सुगन्धि रूपी आवाज नहीं निकली। जब मृत्यु सामने नाचने लगी तभी मेरी नौद टूटी।

‘अब कल

दी गोली ॥’

शब्दार्थ—करवाल किनारा=तलवार रूपी किनारा—रूपक अलङ्कार। अरुणोदय=सूर्योदय। विहार करूँगी=घूमूँगी। अंधकार-अम्बुधि=अंधकार रूपी सागर—रूपक। दिनकर=दिन करने वाला, सूर्य। दुर्देव=दुर्भाग्य। अनिष्ट=बुरा।

भावार्थ—कल मेरा निश्चय होगा और जीवन का ही फैसला हो जायगा। तलवार रूपी किनारा पाकर मैं अपने लक्ष्य पर पहुँच जाऊँगी। रात का अंधकार संसार से विदा माँग रहा है। सवेरा होने वाला है। सूर्योदय की लालिमा मुझे आजाद कर देगी।

कल मैं शरीर रूपी बंधन को त्याग कर आजाद हो जाऊँगी। जेल की दीवारों से बाहर स्वतन्त्रता से घूमूँगी। मेरे जीवन के अंधकार रूपी सागर का जहाज सूर्य बनेगा क्योंकि वही आकर मेरी निराशा के अंधकार से मुझे बाहर निकालेगा। पता नहीं इसके बाद जीव को शान्ति प्राप्त होगी या फिर से जीवन का कोई संघर्ष चलेगा।

हे प्रिय ! तुम्हें कोई कष्ट न हो चाहे मैं मर जाऊँ। दुर्भाग्य क्यों तुम्हारे ऊपर बुराई लाए ? मैं अपना बलिदान देकर उसे प्रसन्न करूँगी। तुम मुझ

पर संदेह न करना । मैं तुम्हीं से प्यार करती हूँ और तन, मन तथा धन से तुम पर निष्ठावर हूँ ।

मैं अपना प्यार प्रकट न कर पाई इसके लिए मैं दोषी हूँ। लेकिन क्या कल मैं स्त्री होने के नाते लज्जा के पदों में बंधी हुई हूँ। फिर भी मैंने अपनी लज्जा को तोड़ तुमसे क्यों बात नहीं की? क्यों लज्जा को गोली नहीं मार दी? इस बात का मुझे अब भी बड़ा दुख है।

पृ० २६ 'वह चूक

जीवन का प्याला ॥'

शब्दार्थ - शोणित=खून । करवाल=तलवार । करुणामय=दयालु ईश्वर ।
जीवनधन=सलीम । सरि=नदी । मृग=पशु, मृत्यु ।

भावार्थ—वह भूल मेरे दिल को टुकड़े-टुकड़े किए देती है और ज़मा मॉँगने की मेरी इच्छा पूरी नहीं होती। मेरे मरने के समय जब मैं लोहे की जंजीरों में जकड़ी हूँगी और जब ज़ह्नाद नंगी तलवारें लिए हुए मेरे सर पर खड़े होंगे।

जब खून पीने की प्यासी तलवारों के नीचे मेरा जीव मिट्टी के शरीर में
हँस रहा हो और जब जनता चिंता से भरी उदास मेरे चारों ओर खड़ी हो
तो हे ईश्वर एक क्षण भर के लिए मेरे प्रियतम आजाएँ और उनका दर्शन
मुझे हो जाए ।

जब मेरी आँखें दुखी होकर तुम्हें उस समूह में ढूँढ़ने की कोशिश कर रही हों और जब आशा वियोग के सागर पर पुल बनाती हुई यह कह रही हो कि तुम अवश्य आओगे तो हे प्रिय ! इस दुखिया को देखने के लिए तुम पल भर के लिए आजाना ताकि तुम्हारे दर्शन हो जायें । इसके बाद तो मुझे सदा के लिए तुम से बिदा हो जाना है ।

मृत्यु के जिस क्षण मैं जब मेरे मन में कोई भी इच्छा उठकर मेरी शान्ति न नष्ट करती हो, जब नदी के समान मैं भी मृत्यु रूपी सागर में प्रवेश करने के लिए अन्तिम चरण धर रही हूँ, जब काल रूपी हरिण जीवन रूपी चरी को खाने वाला हो, जब एक ही बूँद में जीवन का प्याला भरने वाला हो, एक ही क्षण में मृत्यु होने वाली हो—

‘सब तारे

सर देती ॥’

शब्दार्थ—स्नेह=तेल । कर कमंद=किरण रूपी कमंद । हिमबाला=ओस रूपी बाला—सूर्य की किरण के पड़ते ही ओस की बूंदें बढ़ जाती हैं ।

भावार्थ—जब सारे तारे छिप गए हों और रात का आखिरी तारा पारे के समान टिमटिमा कर नष्ट होने वाला हो, जब दीपक का तेल समाप्त हो गया हो और बत्ती बुझने वाली हो, जब मैंने अपने जीवन का हिसाब रस्ती-रस्ती चुका दिया हो—

जब पतंग हाथ से ही कट कर चकरा कर गिर रही हो, जब प्रियतम को देखने के लिए आँखों की पुतली तेजी से इधर-उधर देख रही हो, जब बस एक ही चोट में पेड़ गिरने वाला हो, जब सूर्य ने किरण रूपी कमंद फेंक दी हो और ओस रूपी वाला उस पर चढ़कर नष्ट ही होने वाली हो—

मृत्यु की नौद में सोने से पहले जब मेरे नयन तुम को ढूँढ़ रहे हों तो हे प्रियतम तुम अवश्य आ जाना । मैं तुमको देख कर आँखों ही आँखों में तुम से अपनी भूल क्षमा करवाती । तुम क्षमा को स्वीकार कर यदि हँस देते तो मैं हँसते-हँसते मर जाती । तुमको आँखों में चुराकर मैं आँखें बन्द कर देती और फिर मृत्यु के अन्तिम मिलन के लिए चुपचाप अपनी गर्दन झुका देती ।

पृ० ३० ‘अन्तिम है

ध्यान लगाये ॥’

शब्दार्थ—हवा भरी पाल=नाव के ऊपर के कपड़े (पाल) में जब हवा भर जाती है तो लंगर उठाते ही वह चल देती है । कर=हाथ । कौमार्य-सलिल=कुँवारेपन रूपी जल । रँग=प्रेम का रंग । तरणी=नाव । विह्वल = व्याकुल ।

भावार्थ—हे प्रियतम । मेरी अन्तिम प्रार्थना है कि तुम अवश्य आना । मेरी दशा उस नाव के समान है जिसकी पालों में हवा भर गई हो और जिसका लंगर उठाना रहा हो । मैं भी उसी प्रकार इस संसार के किनारे से दूर जाने को तैयार हूँ । तुम उदार बनकर मेरी सारी भूलों को क्षमा कर देना । तुमने यदि स्त्री का हाथ थाम लिया है तो उसे पूरी तरह से निभाना ।

जब से मैंने तुम को पा लिया है और कुछ पाने की इच्छा नहीं है । जब से तुमने मुझे अपना लिया है तभी से सारी दुनिया पराई होगई है । तुमने

यदि मेरे कुँवारेपन रूपी जल में प्रेम का रंग डाला हो, यदि तुमने मेरे पवित्र हृदय में प्रेम की शराब भरी हो—

तो तुम को सभी प्रिय भावों की शपथ है, तुम्हें अपने प्रेम के प्रण की और वियोग के मेरे इन धावों की आन है कि तुम जरूर-जरूर आना और अपने अन्तिम दर्शन दे जाना। मेरे जीवन की नाव दुख के सूखे में अटकती है तुम दर्शन देकर उसे पानी में बढ़ा देना—मेरा जीवन सफल बना जाना।

हे मन तू क्यों इतना व्याकुल हो रहा है। अगर वे मजबूरी के कारण न आ पाए तो मैं आँख भी न खोलूँगी और उनके ध्यान में लीन होकर ही इस ससार से बिदा हो जाऊँगी।

‘मेरे पीछे

परिछाहीं ॥’

शब्दार्थ—हृग=नेत्र। आँख का मोती=आँसू। सरि=नदी। निजता=व्यक्तित्व। लय करके=नष्ट करके। जीवन-घट=जीवन रूपी घड़ा—रूपक अलंकार।

भावार्थ—यदि मेरे बाद तुम्हें मेरी याद भी आए तो न रोना। चाहे तुम अपने नेत्रों से कितने ही आँसू बहाओ। मैं मर कर जीवित नहीं हो सकूँगी। यदि मेरे बाद लोग मुझे मिट्टी में गाड़ दें तो तुम उस पर समाधि मत बनवाना। जो कली खिल ही नहीं पाई उस पर फूल मत चढ़ाना।

यदि कोई मेरी समाधि पर मिट्टी का दीपक जला कर उसे प्रकाशित करे तो तुम उसे ठंडा करके, वायु डुला कर उसे बुझा देना। तुम मोती जैसे आँसुओं से मिट्टी को मत भिगोना। हे प्रियतम ! तुम मेरे लिए जरा भी न रोना-धोना।

हे प्रिय ! तुम मुझे वैसे ही भूल जाना जैसे बच्चा सवरे उठकर स्वप्नों को भुला देता है। लेकिन मैं तुम्हें मर कर भी न भुला पाऊँगी। मैं जब ज़िंदगी की मंजिल पार कर आगे चली जाऊँ, लहर के समान नदी में उठकर अपने आप का उसमें मिटा दूँ,

ता हे स्वामी तुम दुखी होकर आँसू न बहाना और सुखी जीवन रूपी घड़े का आँसुओं के खारी पानी से न भरना। तुम्हारे मुख के शीशे पर दुख की छाया भी न पड़े। तुम सूर्य के समान चमकते रहो और तुम पर कोई परछाईं

अपना अँघेरा न फैलाए । यही मेरी इच्छा और प्रार्थना है ।

पृ० ३१ 'तुम खिले फूल सा फल पाए ॥'

शब्दार्थ—इन्द्रजाल = जादू ।

भावार्थ तुम सदैव फूल के समान खिले रहना । वह खुदा स्वयं तुम्हारी रक्षा करेगा । यह जीवन का नियम है कि जिसका जन्म हुआ है वह अवश्य ही मरेगा ।' वह इतना ही कह पाई थी कि अचानक द्वार खुला और भारी लोहे के फाटक की आवाज आई ।

दरवाजे के खुलने से एक दम अन्दर प्रकाश भर गया । इससे उसकी आँखें चौधिया गईं । उसे कुछ दिखाई न दिया और वह घबरा कर उठ खड़ी हुई । उसने देखा कि राजसी वस्त्र पहने कोई आया है । उसके हृदय में सलीम वास करता था इसलिए आँखों ने भी उसे सलीम के दर्शन कराए । उस धुंधले प्रकाश में उसे कुछ जादू सा दिखाई दिया ।

वह अचानक ही बोल उठी—“आओ प्रिय सलीम आओ । अपना आखिरी दर्शन देकर मेरा जीवन सफल बना दो । मैं अभी तुम्हें ही याद कर रही थी और तुम आगये हो । यदि प्यार सच्चा हो तो उसका फल अवश्य मिलता है ।”

‘फिर कड़क

जाँचता होगा ॥’

शब्दार्थ—कलम कर दीजे=काट दीजिए । हताश=निराश । मृग छौन=हरिण का बच्चा, जहाँगीर । इंगित=इशारा । करुण की कोरें=कृपा दृष्टि । जाँचता होगा=मॉगता होगा ।

भावार्थ—जैसे ही अनारकली चुप हुई एक बिजली के समान कड़कड़ाती आवाज उसके कान में आई ‘क्या तेरी आँखों में चरबी छा गई है जो तू कुछ भी नहीं देख पाती ? क्या उस लड़के के जाल में फँस कर तू इतनी पागल हो गई है कि तूने आँखों की लाज भी बहा दी है ?

तू घबरा नहीं । अभी तेरी मस्ती उतर जाती है । अब मेरी क्रोधभरी नजर तुझ पर पड़ गई है । तू बच नहीं सकती । तुम्हारी इस गुस्ताखी पर मैं तुम्हें प्राणदंड देता हूँ ।’ अनारकली ने उत्तर दिया ‘मेरा यह सर हाजिर है । आप इसे काट डालें ।’

अनारकली का यह निश्चय सुनकर अकबर का क्रोध कुछ शान्त हो गया और बोला 'निराश मत बनो । यदि चाहो तो अब भी तुम बच सकती हो । हे कोमलांगी । मैं तुम्हें एक और अवसर देने आया हूँ । यदि तुम चाहो तो बच सकती हो । तुम्हारे पैसले पर सारी बात निर्भर करती है ।

'तू बच्चों का खिलौना नहीं है । तू राजा के मुकुट की मणि बन जा । सलीम तो मिट्टी का बना हिरण्य का बच्चा है । वह क्या चौकड़ी भरेगा ? वह तेरे लिए क्या कर सकता है ? यदि तुम्हें राज्य का भोग ही करना हो तो आओ मेरे दिल में बस जाओ । तुम स्वयं राज्य करो और मेरा जीवन सफल कर दो । यदि तुम मेरी बात मान लो तो सारा संसार तुम्हारे इशारे पर नाचेगा । सभी तुम्हारी कृपा दृष्टि की भोग मोंगेंगे ।

पृ० ३२ 'जिस पर आँख दिखाई ॥'

शब्दार्थ—भ्रबक करेगी=भोंह टेढ़ी करेगी, क्रोध करेगी । ध्रुव=निश्चित रूप से ।

भावार्थ—तुम जिस पर क्रोध करोगी उसका नाश निश्चित रूप से हो जाएगा । जिस पर तुम कृपा करोगी उसका जीवन निहाल हो जाएगा । तुम्हारी आँख के एक इशारे से राज्य पलट जाएँगे । तुम जिसकी ओर नजर भी उठा दोगी उसकी किस्मत बदल जाएगी ।

मैंने स्वयं अपनी आँखों से तेरा वह दृश्य देखा है । तेरा सुन्दर रूप देखकर मेरे हाथ से तलवार ही गिर गई है । यदि तुमने बुद्धि से काम लिया, यदि तुम्हारा हृदय प्रेम से रहित नहीं है, यदि तुम्हारी आँख जौहरी की आँख के समान तेज और परखने वाली होगी, तो मूर्ख बन कर राज्य के सुख को अस्वीकार नहीं करोगी और हँसती-हँसती मेरी छाती से लिपट जाओगी ।'

अकबर की यह बात सुन 'हे अकबर दूर ही रहना ! मेरे पास न आना । अपने हाथ से स्पर्श कर मुझे अपवित्र न बनाना ।' अकबर का हाथ झटक कर अनारकली ने उसे डाँटा और क्रोध में थर-थर काँपती हुई उसकी ओर देखने लगी ।

'बोली विनाश के बोती ॥'

शब्दार्थ—कोट=किला । कापुरुष=कायर पुरुष ।

भावार्थ—अनारकली ने कहा 'हे मानी अकबर अगर तुम्हें अपनी इज्जत प्यारी है, अगर तुम्हारे स्वाभिमान का पारा गिर नहीं गया है तो बल दिखाकर एक अबला को क्या डराता है ? एकान्त में स्त्री पर हाथ डालकर उसे अपमानित करने में क्या बहादुरी और गौरव है ?

तुमने कितनी ही बहनों का सोने सा मूल्यवान जीवन धोके और शक्ति के सहारे नष्ट कर दिया है। फिर भी तू स्त्री के हृदय को नहीं पहचान पाया। अत्याचारी उस पर शक्ति से अधिकार नहीं प्राप्त कर सकता।

कोमल शरीर के भीतर हृदय रूपी किले का घेरा है जिसमें संसार के डाकू और लुटेरे कभी भी प्रवेश नहीं कर पाए। जब तक कोई प्रेम की चोट से इनमें घर बना कर इन पर विजय नहीं पा लेता तब तक नयन रूपी पताकाएँ गर्व से लहराया करती हैं।

कायर व्यक्तियों को भयभीत करके तुमने कितनी ही स्त्रियों का धर्म नष्ट कर दिया है। तुम्हारे महल में परियों का जो अखाड़ा बना है वह वास्तव में चिड़ियों का पिंजरा है। वे सब स्त्रियाँ पिंजरे की चिड़ियों के समान रोती और आँसू बहाती हैं तथा तुम्हारे विनाश के बीज बो रही हैं।

पृ० ३३ 'वैसे ही हाजिर है सर मेरा ॥'

शब्दार्थ—कम्पा=चिड़ियाँ पकड़ने वाले एक बाँस पर छतरी सी लगा देते हैं। उस पर पत्ते लगा कर एक गोंद या लासा चिपका देते हैं। पत्नी उस पर बैठते ही उसमें चिपक जाते हैं। छतरी को कम्पा कहते हैं। जाल-बतासा=फंदे रूपी बतासा—रूपक अलंकार। माया=मोह। रुचिर=सुन्दर।

भावार्थ—उसी प्रकार शक्ति दिखाकर आज तू मुझे भी अपनाने आया है। अपना धन देकर नई चिड़िया को फँसाने के लिए आया है। तुम अपना यह कम्पा ले जाओ। तुम्हारी बातों का लासा मुझ पर न लग सकेगा। मेरी दृढ़ता के सामने तुम्हारे इस फंदे का बतासा गल जाएगा।

तुमने चाहे मेरे मन को कितना ही मोहित करने की कोशिश की है लेकिन मैं तुम्हें प्यार नहीं कर पाई और न ही कभी करूँगी। अब मेरा मन मेरे पास नहीं है। वह तो सलीम का हो गया है। मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ तुम मुझे तंग न करो।

मेरा मन तो सलीम के भोलेपन के सामने बिना मूल्य के बिक गया है और उसके भोलेपन का सुन्दर खिलौना बन उसके साथ खेल रहा है। तू मेरे साथ क्यों जलन करता है। तू तो सारी दुनिया का स्वामी है। मेरी इस छोटी सी दुनिया को भी आबाद रहने दे।

इस जीवन में तो अब तुम मुझ से कोई आशा न रखो। किसी और को अपने वैभव का बेकार तमाशा दिखाना। मैं रानी नहीं बनती। मुझे भिखारिन ही रहने दो। मैं तो दिनरात अपने प्रियतम के नाम की माला जपा करूँगी। मेरा घर तो अब सलीम के दिल में है। अगर तुम प्राणदंड देना चाहो तो मेरा सर हाजिर है।'

‘तुम औरों को

चिल्लाई ॥’

शब्दार्थ—नीति=उपदेश। दृढ़ता=पक्का निश्चय।

भावार्थ—अकबर ने उत्तर दिया ‘यह सन्यास और उपदेश की बातें किसी और को समझाना। मैं तुम्हारे सारे चकमे और धोखे जानता हूँ। मैंने दुनियाँ देखी है। मुझे बच्चा मत समझना। मैं नहीं जानता था कि तुम एक काली नागिन हो।

यदि मेरा नाम अकबर है तो तुम्हें दिखा दूँगा कि इसका नतीजा क्या निकलता है। मैं तो तेरी परीक्षा ले रहा था। तुम्हें बिलकुल ठीक कर दूँगा। जब यह प्रेम का नशा उतर जाएगा तो फिर पछताओगी और हारकर फिर मेरे पास आओगी। जीवन भर पछताती रहोगी।

अच्छी तरह सोचकर बताओ कि क्या कहती हो? तुम्हारे उत्तर पर ही तुम्हारा भविष्य निर्भर करता है। अब भी होश में आई हो या नहीं? मेरी होती हो या नहीं?’

अनारकली ने निश्चय के साथ चिल्ला कर कहा ‘यह कभी नहीं होगा।’

पृ० ३४ ‘मैं मरने

दुखिया अन्दर ॥’

शब्दार्थ—शोणित=खून।

भावार्थ—मैं तो मरने के लिए तैयार हूँ। तुम घरती के प्यासे मुख को खून से भर दो। मुझे प्रेम पर बलिदान कर दो।

अकबर ने उत्तर दिया ‘मैं तुम्हें मार कर इस प्रकार आसानी से ही नहीं

छूटने दूँगा । मैं तो तुझे जीवित रखूँगा और जरा तुझे संसार के दुखों में पिसने दूँगा ।

हे बद किस्मत ! जा मैं तुझे देश निकाला देता हूँ । कल सवेरा होते ही तू यहाँ से चली जाना । तुझे अपने सारे सम्बन्धियों का साथ छोड़ देना होगा । तुझे जंगलों में भटकना पड़ेगा । धरती पर सोना पड़ेगा । कोई भी तेरा साथी नहीं होगा । तुझे अकेले ही अपनी फूटी किस्मत पर रोना होगा ।

तेरा जो सलीम है जो बहुत नीच है वह तो तेरी छाया भी नहीं देख पाएगा । तू रोती फिरेगी और वह औरों में फँस जाएगा । तू उसे देख भी न पाएगी । उसे खोज-खोज कर ही तू मर जाएगी । तू ने मेरी बात नहीं मानी इसलिए तुझे जिन्दगी भर पल्लताना पड़ेगा ।

सवेरे सूर्योदय से पहले ही तुझे यह शहर छोड़ देना होगा । तेरे जाने के बाद मैं अपने मन को किसी प्रकार बहला लूँगा । प्रेम के इस बीमार को अन्ध्रा कर ही लूँगा । जा चली जा । तू सुन्दर तो है मगर तेरा दिल नहीं ।'

यह कहकर अकबर ने एक ठंडी सांस भरी और बाहर निकल आया । पीछे सन्तरी ने दरवाजा बन्द किया । उसके चलने से जूते की आवाज हुई । सन्तरी पहरा देने लगे । अनारकली दुख के मारे सन्न रह गई ।

पाँचवाँ सर्ग

कथासार—अनारकली ने शहर छोड़ दिया । जंगलों में भटकने लगी । बड़ा वीहड़ जंगल था । लेकिन किसी प्रकार रास्ता खोजती वह उसमें चली जा रही थी । जाते जाते रास्ते में एक नदी आई । उससे उसका रास्ता रुक गया । वह नदी ज्यादा चोड़ी नहीं थी । हरिण का बच्चा छुल्लाँग लगाकर उसके पार जा सकता था ।

वह तपस्विनी के समान सलीम के नाम की माला जपा करती थी । जिस प्रकार पार्वती ने शिव का लिंग बनाकर उसकी पूजा की थी उसी प्रकार वह भी सलीम के नाम पर आँसू का जल चढ़ाया करती थी ।

इस नदी को देखकर वह एक क्षण भर के लिए रुकी । उसका शरीर सूख कर काँटा हो गया था । सफर की परेशानियों के कारण वह बहुत कमजोर हो गई थी । वह एक क्षण भर के लिए नदी के किनारे रुक गई और आस-पास की प्रकृति की छटा देखने लगी ।

उसने देखा कि एक तरफ हरिणों का समूह घास चर रहा था । जैसे ही उन्होंने इसे देखा वे चौकड़ी भरते हुए भाग निकले । फिर वह धीरे-धीरे नदी पार करने के लिए आगे बढ़ी । घड़कते दिल से वह धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगी । मंझधार में तो पानी उसके गले तक आ गया था । उसका पाँव भी फिसल गया । लेकिन वह किर संभली और पार जा ही पहुँची ।

जब वह चलते-चलते थक जाती थी तो घास फूस का बिस्तर लगाकर उस पर आराम करती थी । इसी प्रकार प्रकृति की शोभा से उदास वह आगे बढ़ती जाती थी । यहाँ पर कवि ने जंगल का विस्तृत वर्णन किया है । पेड़ों पर लताएँ लिपटी हैं । भंवरे गुंजार कर रहे हैं । लताएँ फूलों से भरी हैं । चारों ओर सुगन्धि के बादल से उड़ रहे हैं । पक्षी चहचहा रहे हैं ।

इसी प्रकार अनारकली कितने ही पर्वत, घाटियाँ, नदियाँ पार करती आगे

बढ़ती रही। एक दिन वह जंगल में बैठी रो रही थी। रह-रह कर सलीम की याद आती थी; जी में उसे देखने की इच्छा बार-बार पैदा होती थी। केवल यही एक इच्छा थी कि किसी प्रकार मरने से पहले सलीम का सुन्दर मुख देख लेती। इतने में पीछे से आकर किसी ने उसकी आँखें बन्द करलीं। वह चौंक गई और अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगी।

जब उसने पीछे मुड़ कर देखा तो सलीम खड़ा था। उसे विश्वास ही न आता था। वह आश्चर्य से भर कर उसे देखती रही। उसे इस प्रकार देख सलीम ने कहा “क्या तुम मुझे भूल गई हो। मैं तो तुम्हारा सेवक सलीम हूँ।”

अनारकली आनन्द से भर गई और बोली कि मेरी इच्छा पूरी हो गई। इसके बाद उसकी आँखों में आँसू भर आए। सलीम की आँखों से भी दो आँसू टपक पड़े। फिर बड़ी कठिनाई से अनारकली ने यह कहा—

“आपका दर्शन पाकर मेरा जीवन सफल हो गया। आप अब जाकर सुख से राज्य करें। मेरी खातिर कभी-भी दुख न करें। मैं अब और जिन्दा रह कर आपको परेशान नहीं करना चाहती। अगर कभी मुझसे कोई भूल हुई हो तो आप मुझे माफ़ कर दें।”

सलीम ने उत्तर दिया “तुम क्यों इतना घबराती हो, मुझे राज्य की चिन्ता नहीं। पिता सुख से राज्य करें। चलो हम तुम दोनों कहीं दूर चले चलते हैं। अब हम दोनों को कोई भी अलग नहीं कर सकता। चलो अब मेरे साथ। तुम्हारा यह वेष और यह हालत मुझ से नहीं देखी जाती। चलो चलकर कुछ खालो।”

अनारकली ने उत्तर दिया “आपकी यही आज्ञा है तो मैं कुछ खा लेती हूँ। लेकिन आप कभी भी मेरी खातिर दुखी न हों” यह कह कर उसने जहर पी लिया। सलीम ने उसे लाख निकालने की कोशिश की लेकिन जहर उसके पेट में पहुँच चुका था। उसके मुख से एक चीख निकल गई।

जहर अपना असर कर रहा था। अनारकली की शक्ति नष्ट होती जा रही थी। वह हमेशा के लिए सो गई। सलीम उसे बुलाता ही रहा। इतने में सलीम के दूसरे साथी वहाँ आ गए। सलीम ने अनारकली की लाश को

साथ ले लिया और उसकी समाधि बनवा दी। उसके बाद वह रोज वहाँ जाता और घंटों रोया करता।

इस सर्ग में अनारकली के चरित्र की महानता का चित्रण हुआ है। वह सच्चे प्रेम की मूर्ति है। प्रेम के लिए वह अपने आपको बलिदान कर देती है।

पृ० ३५ 'दुखिया

फूल छाप।'

शब्दार्थ—विफट=भयंकर। मग=मार्ग। शोध लिया=खोज लिया। गतिरोध किया=मार्ग रोक दिया। मृग शावक=हरिण का बच्चा। कुशकाया=कमजोर शरीर। गिरिबाला=पर्वत की पुत्री, पार्वती के समान अनारकली। आराध्य देव=पूजा का देवता। अस्फुट=अस्पष्ट। कल-मंत्र-जाप=सुन्दर मंत्र का जपना। दुकूल=वस्त्र, पाट। विहंग=पक्षी।

भावार्थ—दुखिया अनारकली ने भयंकर जंगल में बड़ी मुश्किल से रास्ता खोजा। जैसे ही वह आगे बढ़ी, एक नदी ने आकर उसका रास्ता रोक लिया। उस नदी का पाट बहुत बड़ा नहीं था। एक हरिण का बच्चा छलांग मार कर उसे पार कर सकता था। उस नदी के किनारे पर हरिणों का समूह हरी-हरी घास चर रहा था।

वह नदी पर्वत की बालिका है जो अपने प्रियतम का नाम रटा करती है तथा शिवलिंग जैसे पत्थरों पर जल चढ़ाया करती है। उधर अनारकली भी उसी के समान कमजोर है और सलीम की पूजा किया करती है। उसकी याद में आँसू बहाया करती है। उस नदी का जल बहुत साफ है। उसके भीतर रेत का एक-एक कण दिखाई देता है। उसके भीतर नित्य ही भगवान सूर्य दर्शन दिया करते थे। उसी प्रकार अनारकली भी रोज मन में सलीम को याद किया करती है।

अनारकली रोज ही कमजोर होती चली जाती है। उसका शरीर सूखकर काँटे के समान हो गया है। उसकी मेहनत के सामने बड़ा कठोर मार्ग भी आटे के समान हो गया उसने बड़े कठिन मार्गों को भी पार कर लिया। वह कुछ देर तक नदी की ओर देखती रही। उसकी कल-कल ध्वनि रूपी अस्पष्ट जाप को आवाज सुनती रही। फिर उसने उस नदी के भीतर पड़ने वाली

फूलों और पत्तियों की छाया को देखा ।

पृ० ३६ 'काण्डर

डाला कर ॥'

शब्दार्थ—पीत=पीले । चीतल=हरिण । हल जावें=पार कर जाएँ ।
किंकिण=करधनी । बुद-बुद=बुल बुले—सांग रूपक अलंकार । जीवन उर्मिल
से=लहर भरे जल से । ग्रीवा=गर्दन । कर=हाथ ।

भावार्थ—उसने देखा कि किनारों में झाड़ के झुरमुटों में काण्डार नाम
के पीले फूल खिले हैं । इसके बाद उसकी आँखें किनारे के ऊपर के अन्य
फूलों तक पहुँचीं । जो हरिण वहाँ चर रहे थे उन्होंने चौंक कर उसे देखा
और फिर चौकड़ी भरते हुए वाण की सी तेजी के साथ आँखों से ओझल हो
गए ।

फिर उसने झुक कर जल की उस गहराई को जाँचने की कोशिश की ।
और शीशे के समान उजले जल में उसकी परछाईं दिखाई देने लगी । फिर
उसने सोचा कि जल की गहराई छाती से अधिक नहीं है इसलिए इसे पार
कर ही लूँ । पर जैसे ही उसने जल में पाँव बढ़ाए उसका दिल धड़कने
लगा ।

वह बहुत धीरे-धीरे नदी की याह लेती हुई आगे बढ़ी । लेकिन घारा
की तेजी के कारण उसके पाँव के नीचे की मिट्टी बह जाती थी और उसके
पाँव फिसल-फिसल जाते थे । जैसे-जैसे वह आगे बढ़ी पहले उसकी ऐड़ी डूबी
और फिर पिंडली डूबी और फिर घुटने भी डूब गए । इसके बाद जल उसके
नितम्बों पर बढ़ने लगा ।

जब जल उसकी कमर तक पहुँचा तो एक विचित्र दशा होगई । लहरें
उसकी करधनी के समान दिखाई देने लगीं और जो बुलबुले थे वह करधनी
में लगे घुँघुआँ के समान दिखाई देने लगे । कमल के समान अनारकली को
देखकर जल के भंवर रूपी भ्रमर भी उससे उलझ कर रह गए । जब लहरें
लेता जल उसकी छाती पर पहुँचा तो उसे रोमांच हो आया । इसके बाद जल
उसकी गर्दन तक पहुँचा और लहरों ने उसकी गर्दन में प्यार का हाथ डाल
दिया ।

‘हो मुक्त

नहीं कोई ॥’

शब्दार्थ—टाम=ढोरा, बंधन । चिकुर राशि=बालों की राशि । अभि-
नव=नई । हृदगति कर=दिल की घड़कन पैदा करके । सपदि=शीघ्र । आभा=
चमक । समीर=वायु । दृग-कंज=नेत्र-कमल—रूपक अलंकार । राग=रंग ।

भावार्थ—उसके बालों का बन्धन खुल गया और बाल जल के भीतर खेलने लगे । कुछ बाल उसके भीगे वस्त्रों से चिपक गए थे—वैसे ही जैसे बच्चे डर कर माँ की छाती से लग जाते हैं । वह सीधी किनारे की ओर बढ़ रही थी लेकिन जल की तेज धारा के कारण उसका मार्ग तिरछा हो जाता । जब जल में नई लहरें उठती थीं तो इसके दिल की घड़कन बढ़ जाती और लहरें इसके गले में माला के समान दिखाई देती थीं ।

इतने गहरे जल में पहुँच कर उसके पाँव फिसल गए और कुछ घूँट पानी उसके मुँह के भीतर गया । उसकी आँखों से आँसू बहने लगे जो नदी के जल पर बिखरने लगे । लेकिन जैसे ही थोड़ा आगे बढ़ी तो जल केवल कमर तक ही था । फिर वह शीघ्र ही आगे बढ़ी और वह किनारे पर जा पहुँची । कपड़े भीग कर उसके शरीर से लगे थे लेकिन उसके शरीर के सौन्दर्य के कारण उसके कपड़े दिखाई भी न देते थे । उस समय वह ऐसी दिखाई देती थी जैसे जवानी की सुन्दर प्रतिमा खड़ी हो ।

हवा के झोंकों ने उसके वस्त्रों को सुखा दिया और बालों को उड़ा-उड़ा कर उसकी कमल जैसी आँखों की लालिमा और भी बढ़ा दी । मार्ग तो नदी के साथ ही समाप्त हो गया था । आगे पगडंडी भी दिखाई नहीं देती थी । जानवर घूम रहे थे और कोई भी ऐसा न था जिससे वह मार्ग के बारे में कुछ पूछती ।

पृ० ३७ ‘कांटों

उमड़ कर बहते थे ॥’

शब्दार्थ—पद अंक=पाँव के चिह्न । पदरज=पाँव की धूल । नग-माला=
पर्वत की श्रेणी । नग=हीरा । खग=पत्नी । कोमल तृण=कोमल घास ।
शय्या=बिस्तर । वयस्क=उमरदार, बड़े । वारिद सा=बादल के समान—उपमा
अलंकार । हरीतिमा सागर=हरियाली रूपी सागर—रूपक अलंकार । प्रेम
पःश=प्रेम का बंधन । लतिका-भूषित-तरु-शाखा-जाल=लताओं से सुशोभित

वृक्षों की शाखाओं का समूह । सघन वारिध=घने मेघ । सौरभ=सुगन्धि ।
स्रोत=भरने । चतुर्दिक=चारों दिशाओं में ।

भावार्थ—काँटे उसके पाँव में चुभ जाते थे जिससे उनमें से खून निकलता था । उस खून के कारण उसके चरण-चिह्न लाल हो जाते थे—मानों काँटे कूँची के समान उनमें लाल रंग भर रहे हों । घास भी उसके पाँव की धूल को श्रद्धा से अपने सर पर धारण करती थी । पर्वत की श्रेणियों में वह चमकदार हीरे के समान प्रकाश फैला रही थी । जैसे-जैसे वह आगे बढ़ती पक्षी उसका स्वागत करते थे । और वह स्वयं अपना रास्ता बनाती हुई आगे बढ़ती जाती थी ।

वह घनी घास हटाती हुई और लताओं के जाल से बचती हुई आगे बढ़ती जाती थी । जब चलते-चलते थक जाती थी तो कोमल घास का बिस्तर बना उस पर विश्राम करती थी । आगे बढ़ा घना जंगल था । चारों ओर पेड़ ही पेड़ दिखाई देते थे, हरियाली ही दिखाई देती थी । पेड़ इतने पास-पास थे कि जब वे हिलते थे तो उनके छिलके एक दूसरे की रगड़ से छिल जाते थे । एक तिल बराबर स्थान भी खाली नहीं था ।

नीचे से नए पौधे उठते थे जो बड़े पेड़ों की बगल से ऊपर उठ रहे थे । वे ऐसे दिखाई देते थे जैसे हरियाली रूपी सागर के ऊपर बादल उठ रहे हों । वे पौधे बादलों के समान अपने पत्ते फैलाकर आकाश में उड़ जाना चाहते थे । लेकिन लताएँ उन्हें प्रेम के बंधन में बाँधे जकड़ी रहती थीं ।

और तो और घास भी पेड़ों से दौड़ लगा कर ऊपर उठती चली जाती थी । लताओं से सुसज्जित पेड़ों की डालियों के समूह में पक्षियों के पर फैल जाते थे । पेड़ घने मेघों के समान थे जो फूलों की वर्षा किया करते थे । इनके कारण ही सुगन्धि के सैकड़ों भरने चारों दिशाओं में बहा करते थे ।

‘थी ऊँची नीची

प्यास बुभाते थे ।’

शब्दार्थ—खगकुल=पक्षियों का समूह । कल=सुन्दर । मकरंद=बीचि = सुगन्धि रूपी लहर । मुकुल=कलियाँ । मधुकर मद=मँवरों की मस्ती । कानन काया=जंगल रूपी शरीर—रूपक अलंकार । धमनी=नस । सरि=नदी । जीवन=जिन्दगी, जल श्लेष अलंकार । वादक=तो जाने वाली । इक्षित=इशारा ।

प्रतिरोधी=विरोधी । मल्लयुद्ध=कुश्ती । मन प्रवाह=मन की धारा, दुःख । जला-शय=तालाब । पावस=वर्षा ।

भावार्थ—वहाँ की धरती ऊँची-नीची थी और सब हरी थी । इसलिए हरियाली में कभी ऊपर उठती और कभी गिरती दिखाई देती थी । पक्षियों के सुन्दर संगीत से सारे वृक्ष गूँज रहे थे । सुगन्धि रूपी जल में कलियाँ बुलबुलों के समान खिल रही थीं । सभी फूल घंटियाँ बजा-बजा कर भंवरो की मस्ती से मिल रहे थे । भंवरो की गुंजार ही फूलों की घंटियों की आवाज है ।

जंगल रूपी शरीर के भीतर जीवन को धारण करने वाली नस के समान जल भरी नदी युवती जैसी चंचलता के साथ बह रही थी । वह जीवन को धारण किए हुए संसार रूपी हृदय के इशारे पर चल रही है, प्रकृति के नियमों के अनुसार बह रही है । जामुन की डालियाँ नदी के दोनों किनारों से बढ़ती हुई बीच में आकर एक दूसरे से लिपट गईं । ऐसा प्रतीत होता था मानो दो शत्रु-सेनाएँ एक दूसरे से कुश्ती कर रहे हों—उत्प्रेक्षा अलंकार ।

अथवा मानो वृक्ष नदी रूपी रानी को अपने परदे में ले रहे हैं तथा उसे अपनी पलकों में पुतली के समान रख कर तारों से उसे छिपा कर रखना चाहते हैं ताकि उसे कहीं नजर न लग जाए । वह अनारकली भी अपने मन के दुःख की धारा को आशा रूपी वृक्षों के घूँघट में छिपा कर नदी के साथ ही साथ अपनी धुन में बढ़ती जा रही थी ।

वे बेचारे तालाब भी वर्षा ऋतु के विरह में सूखते जा रहे थे । उनके नीचे का जल बच रहा था जो बहुत गन्दा था । प्यासे जीवन उसी गन्दे जल को पीकर अपनी प्यास बुझाते थे ।

पृ० ३८ 'लटका

चढ़ती थी धीरे-धीरे ॥'

शब्दार्थ—शिस्त=निशाना । आकृति=आकार । पदविन्यास=रुद्धम । चन्द्रमौलि=शिव-पर्वत । निर्भर-नाग=भरने रूपी साँप—रूपक अलंकार । भू-किरीट=धरती का मुकुट । सेतु=पुल । अज=बकरे । शृङ्ग=चोटी । गिरि-सोपान=पर्वत की सीढ़ी ।

भावार्थ—कौटिल्ला पक्षी लट्ठ के समान लटका हुआ जल में जब निशाना

लगाता था तो अनार की छाया पड़ते ही उसका शिकार जल में ही छिप जाता था । दूर जहाँ धरती आकाश मिलते दिखाई देते थे वहाँ एक पर्वतों की श्रेणी थी जो अन्तरिक्ष में लगी भालर के समान दिखाई देती थी । अभी उसका आकार साफ नहीं दिखाई देता था । वह काला-काला सा तथा धुंधला दिखाई देता था ।

जैसे-जैसे अनारकली पाँव आगे बढ़ाती थी वैसे ही वैसे वह दूर का पर्वत पास आता जाता था । हरेक कदम के साथ यह स्पष्ट दिखाई देता था कि दूर से जो तिनका दिखाई देता है वास्तव में वह वृद्धों की पंक्ति है । जो पर्वत सूखा दिखाई देता था वह हरा दिखाई देने लगा । आकाश रूपी नीले वस्त्र पर पर्वत रूपी चित्र खिचा सा प्रतीत होता था जिसमें प्रकृति के अनेक रंग दिखाई देते थे ।

वह पर्वत शिव के समान दिखाई देता था । और वनस्पति रूपी जटाओं में भरने रूपी साँप हवा खा रहे थे । जितनी भीलें और तालाब थे वे हीरों के समान धरती के उस मुकुट रूपी पर्वत पर चमक रहे थे । फिर आगे बढ़ने पर खाई दिखाई दे रही थी जिसके भीतर जल गिरकर छिप जाता था । वह खाई इतनी गहरी थी कि उसे देखकर सिर में चक्कर आ जाता था ।

उसके ऊपर दो टीले मिलकर एक प्राकृतिक पुल बना रहे थे जिस पर होकर बकरे घास खाने के लिए पर्वत की चोटी पर जाते थे । अनारकली लताओं और पेड़ों का सहारा लेती हुई उस पुल से पार गई । वह आकाश पर चढ़ती हुई पर्वत रूपी सीढ़ी पर धीरे-धीरे चढ़ने लगी ।

‘घासों

इक तारा था ॥’

शब्दार्थ—श्रम-सीकर=पसीने की बूँदें । दुर्गम=कठिन । समयान्तर=समय का परिवर्तन । प्रतिघात=चोट । दरक गया=टूट गया । पाषाण-हृदय=पत्थर का दिल । वेणु=बाँस । हरिताम्र पताका=हरे रंग की झंडी । कंदरा=गुफा ।

भावार्थ—वह उस खड़ी चढ़ाई पर घासों के समूह को पकड़-पकड़कर चढ़ रही थी । थकावट से वह चूर-चूर हो रही थी और उसका सारा शरीर पसीने से डूब गया था । उसकी साँस फूल गई थी । जो स्थान सामने दिखाई दे रहा था वह बड़ा कठिन मार्ग था । वह चढ़कर उतरी और उतर

कर फिर चढ़ी । इस प्रकार वह मारी-मारी फिर रही थी ।

समय के परिवर्तन की चोटें खा-खा कर तथा सर्दों, गर्मी और बरसात के थपेड़े खाकर पर्वत का पत्थर का बना दिल भी टूक-टूक हो गया था । वह धूल में बिखर गया था । बाँस का समूह हवा के झोंकों से बांसुरी बजा रहा था और पर्वत के ऊपर हरी झंडी फहरा कर प्रकृति की शोभा बढ़ा रहा था ।

अनारकली पर्वत की चोटियों पर चढ़ी गुफाओं में घुसी और अंधकार में झुक-झुक कर आगे बढ़ती रही । उसने गुफा से बाहर निकल कर देखा तो बड़ा सुन्दर दृश्य था । सारा जंगल वहाँ से तारे के समान दिखाई देता था जिसे दूरबीन के शीशे से कोई देख रहा हो ।

पृ० ३६ 'कुछ और बढ़ी बनवारी को ॥'

शब्दार्थ—आभा=प्रकाश । निकेतन = घर, स्थान । विपिन=जंगल । कर=हाथ, किरण-श्लेष अलंकार । दिननायक=सूर्य । वर चीर=वस्त्र, पानी । मीन व्याज=मछली के बहाने-अपन्हृति अलंकार । नटनागर=कृष्ण । जल-प्रपात = जल का गिरना, आवशार । अम्बर=वस्त्र । आब खौं=बहता पानी । पट=आँचल । मदमंथन=मद का नाश । नवा=प्रणाम किया । बनवारी=कृष्ण, बन का जल-श्लेष अलंकार ।

भावार्थ—वह कुछ और आगे बढ़ी । उसने देखा कि ऊपर से भरने गिर रहे थे और उस पत्थर के स्थान को जल की कल-कल ध्वनि से भर रहे थे । वह स्थान शान्ति का घर था । वहाँ अपने मन को बहला कर वह फिर वापिस आ गई क्योंकि आगे जाने का रास्ता नहीं था ।

इस नीचे के छन्द में कवि ने नदी का वर्णन किया है और उसका रूपक द्रौपदी के साथ बाँधा है दुःशासन जिसकी साड़ी खींच रहा है । यहाँ सूर्य नदी की जल रूपी साड़ी खींच रहा है । श्लेष और सांग रूपक अलंकार है ।

उस घने जंगल में वह भटकती हुई एक नदी के किनारे आई । वह नदी ऐसी थी जिसके जल रूपी आँचल को सूर्य हजारों किरणों रूपी हाथों से खींच रहा था । जिस प्रकार द्रौपदी का वस्त्र दुःशासन ने खींचा तो वह कृष्ण का नाम लेती थी उसी प्रकार वह नदी भी पानी रहित हो जाने के

डर से कल-कल ध्वनि के द्वारा कृष्ण को बुला रही है। मछली के नहाने से वह तड़पती है और लहर के बहाने से बल खाती है। जिस प्रकार भीष्म आदि द्रौपदी का चीर हरण चुपचाप देखते रहे थे। उसी प्रकार पर्वत भी पत्थर की छाती किए चुपचाप यह सब देख रहे थे।

लेकिन वह कृष्ण भरने के पदों के पीछे खड़े उस नदी को आवशार रूपी वस्त्र दे रहे थे और बहते पानी का अंचल दे रहे थे। उसने उस नदी को अनन्त बना दिया और सूर्य का सारा घमंड चूर कर दिया। फिर सूर्य भी शरमा कर अस्त हो गया। चन्द्रमा निकल आया जो कृष्ण को प्रणाम करने लगा।

‘सरसी

सो जाते थे ॥’

शब्दार्थ—नभहंस = आकाश रूपी हंस—रूपक। तृण-संकुल = घास से भरे। स्वेत = सफेद। नरकुल = सर्कंडे।

भावार्थ—फिर उसे एक नदी मिली जिसमें आकाश की छाया पड़ रही थी—मानो वह उसमें नहा रहा है। ऐसा प्रतीत होता था मानो आकाश रूपी हंस उसकी लहरों में भ्रूम रहा था। घास से भरे उसके किनारों पर भूत कर भी कभी मनुष्य नहीं आए थे। हाँ उसके किनारों पर सर्कंडे लगे हुए थे जो हवा से सफेद हो गए थे।

बन मुर्गी किनारे पर चरा करती थी। जब कभी कोई मछली उभर आती तो वह डर कर भाग कर सर्कंडों के किले में छिप जाती थी। वन के पशु आ-आकर जल पी रहे थे। कुछ जल में नहा रहे थे। कुछ घास चर घर चल देते थे और कुछ वहीं पर ही सो जाते थे।

पृ० ४० ‘चरते

नहीं खबर ॥’

शब्दार्थ—द्विजगण = पक्षियों का समूह। पंचानन = शेर। पवि = वज्र।

भावार्थ—जो पशु वहाँ चर रहे थे वे भी चौकन्ने हो गए और कान उठा कर चलने लगे। फिर घबरा कर आँखें फाड़-फाड़ कर इधर-उधर देखने लगे। कुछ पशु तो अनारकली की उपस्थिति की गंध पाकर भाग खड़े हुए। हरिणों का एक समूह तो चौंक कर अभी खड़ा हुआ देख ही रहा था।

पक्षियों के समूह भी अपने-अपने घोंसलों में चले गए थे। चारों ओर

पूरा सजाटा छाया था। संध्या हो गई थी। सूर्य और चन्द्रमा के पलड़े ठीक बीचो-बीच में थे। संध्या के समय पश्चिम की ओर सूर्य डूबते दिखाई देता है और पूर्व की ओर चन्द्रमा उदय होता दिखाई देता है। हरिण जैसे ही कान खड़े कर भागने को तैयार हुए वैसे ही भाड़ियों में से शेर वज्र के समान उन पर टूट पड़ा।

उसने एक हरिण को पंजा मारा। वह तुरन्त मर गया। थोड़ी देर वह क्रोध से भरा खड़ा रहा और फिर उसका खून पी कर सोने के लिए चल दिया। एक क्षण भर में ही यह सारी घटना घट गई। लेकिन अनारकली एक टीले पर बैठी सोच में कुछ ऐसी डूबी थी कि उसे इस बात की खबर तक न हुई।

‘दुःख

में हाथ ॥’

शब्दार्थ—निर्भर = भरना। प्रपात = जल का गिरना। दृग-अम्बुधि = नेत्र रूपी सागर—रूपक। जीवन-तरि = जीवन रूपी नाव। सरि = नदी। वारिनिधि = सागर। प्रतिध्वनि = पर्वत आदि से टकरा कर लौटती हुई आवाज।

भावार्थ—अनारकली स्वयं दुखी है इसलिए उसे सारी प्रकृति दुखी दिखाई देती है। भरना उसे राता हुआ दिखाई देता है। वह कहती है ‘हे भरने तुम्हें क्या दुख है तुम क्यों रोते हो ? हे जल प्रपात तुम्हें क्या दुख है जो तुम पहाड़ से गिर कर अपना जीवन नष्ट कर रहे हो ? हे भरने ! हे प्रपात !! तुम क्यों रोते हो ? केवल मुझे ही रोने दो। मुझे ही अपने जीवन रूपी नाव को नयन रूपी सागर में डुबा देने दो।

हे नदी ! तू क्यों तड़पती हुई सागर के विरह में उसके पास भागी जा रही है ? तू रुक जा। देख तो मेरी आँखें इतना रो रही हैं कि एक पल भर में यहीं सागर बन जाएगा। मैं चुपचाप एकान्त में तुम से मिलने आई हूँ। तुम्हीं बताओ कि सुखमय सुन्दर शान्तिपूर्ण स्थान कौन सा है जहाँ मैं जाऊँ।

तुम्हारा हृदय बड़ा उदार है। मैं दुखिया हूँ। मुझ पर बस इतनी दया कराओ और यह बता दो कि मैं कैसे अपना प्यार भुला दूँ ? सारा दुनिया मुझे देख कर हँसती है। मैं किसे अपना दुख सुनाऊँ ? मैं अब जगल में भटकती

हुई अपना जी बहला रही हूँ । हे सलीम ! तुम्हें कैसे भुला दूँ ?'

उसकी आवाज के उत्तर में वही लौट कर वापिस आती है । वह अपनी उस प्रतिध्वनि से कहती है तू अकेली ही मेरा साथ देती आ रही है । लेकिन हे सखी ! मैं हाथ जोड़ती हूँ तू न रो ।

पृ० ४१ 'मेरे संग देखती बारम्बार ॥'

शब्दार्थ--बंजर=ऊसर, वीरान । मोती=आँसू । दिव्य प्रभाकर=स्वर्गीय सूर्य । हिमकण=ओस । लुदबिन्दु=छोटी बूँद । दिन मणि=सूर्य ।

भावार्थ--मेरे साथ कोई भी न रोए । बस मैं अकेली ही अपनी बद-किस्मती पर रोना चाहती हूँ । किस्मत के उजड़े खेत पर आँसू के मोती बोना चाहती हूँ । अब मेरे जीवन में क्या बचा है । कोई इच्छा नहीं है । बस एक बार प्रिय सलीम के दर्शन की इच्छा बाकी है ।

लेकिन उनके दर्शन कैसे हों ? वे तो स्वर्गीय सूर्य के समान हैं और मैं धूल का एक कण हूँ । मेरा जीवन तो ओस की बूँद जैसा है फिर सूर्य के दर्शन कैसे हों । क्योंकि सूर्य आते ही अपनी कोमल किरणों से ओस की बूँदों को मिटा देता है । आते ही मेरे जीवन का घड़ा हाथों से फैला देते हैं ।

जैसे ही प्रिय सामने आते हैं मैं उनके चित्र की छाया को आँखों के भीतर खींच कर उसे बन्द कर लेती हूँ और आनन्द में लीन हो जाती हूँ । इतने में किसी ने आकर उसकी आँखें बन्द कर लीं । वह घबरा उठी । यह कौन आ गया ? वह अपना हाथ छुड़ाने की कोशिश करने लगी ।

जब उसने हाथ छुड़ा कर पीछे देखा तो क्या देखती है कि सलीम खड़ा है । उसे अपनी आँखों पर यकीन ही न आया । वह आश्चर्य में भर कर बार-बार उसे देखने लगी ।

‘इतनी जल्दी पीऊँगी ॥’

शब्दार्थ--अनुकम्पा = कृपा । पूजी=पूरी हुई । विह्वल=मतवाला । आँसू-तारक=आँसू रूपी तारे । नभ-चल = आकाश रूपी नेत्र--सौंगरूपक । बाम=स्त्री । अभिराम=सुन्दर । क्षणभंगुर=नश्वर ।

भावार्थ--सलीम ने इस दशा में उसे देखकर कहा--‘इतनी जल्दी तुम

मुझे भूल गई ? मैं सलीम हूँ । तुम्हारा दास ।’

अनारकली ने उत्तर दिया “आप ने इस दासी पर यह कृपा की है । मेरी सब आशाएँ पूरी हो गई हैं ।

आप क्षमा करेंगे । मैं अपने बस में नहीं थी । मेरी हालत उस प्यासे के समान थी जिसे अपने आप जल प्राप्त हो जाए । आपने मुझ जैसी अनाथ का सहारा बन कर मुझे आनन्द में मतवाला बना दिया है ।”

फिर अचानक ही उसके नेत्र रूगी आकाश से दो आँसू रूपी तारे टपक पड़े । उधर कुमार की आँखों से भी आँसू बहने लगे । फिर दोनों की रोते-रोते हिचकी बंध गई और नयन लाल हो गए । फिर सलीम उसे समझाने लगा लेकिन वह और भी बेहाल होती जा रही थी ।

फिर सलीम के बहुत समझाने पर अनारकली दिल कठोर करके बोली “मैंने जो आपका सुन्दर दर्शन पाया है उससे मेरी प्रेम की पूजा पूरी हो गई है । अब तुम जाओ राज्य करो और बादशाह का नाराज न करो । हे प्रिय अपनी इस दासी के लिए अपना जीवन बरबाद न करो ।

मैंने तुम्हारा प्रेम पा लिया है । यह प्रेम ही संसार का सार है । सारा संसार नश्वर है । केवल एक सच्चा प्यार ही अमर है जो मुझे प्राप्त हो गया है । तुम मेरी सब भूलें क्षमा कर देना । अब मैं और अधिक जीवित न रह सकूँगी । तुम्हें धर्म सकट में रख कर मैं हमेशा दुखी न रहूँगी । क्योंकि जब तक मैं जीवित रहूँगी तुम मेरे लिए बादशाह से लड़ते रहोगे ।”

पृ० ४२ ‘क्या कहती हो लटें तुम्हारी सूखी ।’

शब्दार्थ—इजारा=हुकम, अधिकार । राज वैभव=राजा की संपत्ति । कृष्ण=काले ।

भावार्थ—सलीम ने उत्तर दिया—‘तुम घबराओ नहीं । मैं तो तुम्हारा हो चुका हूँ । मैं जिसे चाहूँ अपना दिल दे ढालूँ । यहाँ किसका हुकम चलता है ? पिता आनन्द के साथ दुनिया पर राज्य करें । लेकिन मेरा दिल तो हमेशा आजाद है । यहाँ इस पर किसी भी राजा के कानून का कोई असर नहीं हो सकता ।

राजा की संपत्ति की क्यों इच्छा होती है ? सुख के ही लिए न । तुम्हीं मेरे सुख की रानी हो । तुम्हारे बिना तो मैं संसार की संपत्ति को भी हाथ न

लगाऊँगा। चलो हम आगरा छोड़कर कहीं और चलते हैं। चलो लाहौर। चलें। अब हमें कौन अलग कर सकता है। तुम बिलकुल चिन्ता न करो।

चलो मेरी सेना पास ही पड़ी है। तुम्हारा वियोगिनी का यह रूप मुझसे नहीं सहा जाता। तुमने जो मुसीबत उठाई है वह भी सहा नहीं जाता। तुम्हारे पाँव काँटों से छलनी हो गए हैं। छाले चमक रहे हैं। आँखों में पीलापन छा गया है। नयनों से आँसू बहते ही चले जा रहे हैं।

लो अब सँभल जाओ। इतनी अधीर मत बनो। लो कुछ खालो। पता नहीं तुम कब से भूखी हो। मुसीबतों के कारण तुम्हारे होंठ काले पड़ गए हैं और तुम्हारे बाल भी सूख गए हैं।’

‘नहीं

सोता था ॥’

शब्दार्थ—वासना=इच्छा। विलास=भोग। प्रणय=प्रेम। अधर-प्याली=होंठ रूपी प्याली। निःशेष=समाप्त। अधरामृत=होंठों का अमृत।

भावार्थ—अनारकली ने उत्तर दिया ‘अब मुझे भोग की इच्छा नहीं। मुझे प्रेम मिल गया है। आपका दर्शन हो गया है। अन्तिम समय में आपसे क्षमा माँग कर आपका आलिगन प्राप्त किया है। आपकी आज्ञा नहीं टालती। यह लोजिए कुछ खा लेती हूँ और आपका चित्र आँखों में लेकर हमेशा के लिए सो जाती हूँ।

हे स्वामी मुझ से जो भी भूल हुई हो वह माफ कर देना। तुमने जो मेरा हाथ पकड़ा है तो मेरे लिए रोना मत। मुझे भुला देना।

यह कहकर अनारकली ने जहर खा लिया और वह चुप हो गई। सलीम बेकार ही जहर निकालने की कोशिश करता रहा। लेकिन जहर अन्दर चला गया था सलीम वेबस होकर चीख पड़ा। अनारकली आखिरी बार सलीम को देख कर उसकी गोदी में गिर गई। वह उसे गोदी में भर कर बार-बार उसके होंठ चूमने लगा।

सलीम उसके होंठ चाट कर बोला, “हे होंठों की प्याली! अगर तुम में थोड़ा सा जहर भी बचा हो तो मुझे दो। उसे पीकर मेरे जीवन के भी सारे दुख दूर हो जाएँगे। लेकिन होंठों में अमृत रस होता है। वहाँ जहर कहाँ। सलीम बिलख-बिलख कर रोता रहा और अनारकली को जगाने की कोशिश करता

रहा । लेकिन एक बार जो मौत की नींद सो जाता है वह फिर नहीं जागा करता ।

पृ० ४२ 'एक अश्व

भरता था ॥'

शब्दार्थ—मृगया=शिकार । शोध=खोज ।

भावार्थ—एक घोड़ा पेड़ से बँधा है । अपने सुम से धरती खोद रहा है । उस पर सब साज तैयार है । वह कभी-कभी अपनी दुम हिलाकर अपना शरीर झाड़ लेता है । वह दिनदिना दिनदिना कर कुमार को बुलाता था और फिर टीले की ओर देखने लगता था । इससे ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई उधर आ रहा है ।

उसके दिनदिनाने की आवाज सुनकर कुमार के सब साथी वहाँ आगए । वे सब कुमार के साथ शिकार को आए थे मगर बिछड़ गए थे और कुमार को खोजते हुए इधर-उधर भटक रहे थे । सलीम के पास जाकर जब उन्होंने एक लाश देखी तो वे घबरा गए उन्होंने देखा कि कुमार उसे छाती से लगाए रो रहा था ।

अपने साथियों को देखकर सलीम जरा सावधान हुआ और पीने के लिए पानी माँगा । पानी पीकर वह फूल तोड़ कर लाया और अनार की लाश को ढक दिया । फिर शव को कन्धा देकर पैदल ही चल दिया और घोड़े को साथ लाने के लिए कहा । वह जब चल रहा था तो उसके आँसुओं से धरती भीग रही थी । लाहौर में जाकर उसने अनारकली की एक सुन्दर समाधि बनवाई ।

वह रोज उस समाधि पर जाया करता था और अपने आँसुओं से भीगे फूल उस पर चढ़ाया करता था । घंटों वह समाधि से लिपटा रहता था और रो-रो कर आँहें भरा करता था ।



छठवाँ सर्ग

कथासार—मेहरजिसा धीरे-धीरे जवान होती जा रही थी। वह हँसियों के समान सुन्दर और फिरणों के समान उज्ज्वल थी। उसके शरीर में बिजली सी चमकती है लेकिन फिर भी उसका स्वभाव बहुत भोला है। अभी तक उस में बचपन सी सरलता है। अनेक व्यक्तियों ने उस पर डोरे डालने की कोशिश की लेकिन उस पर कोई असर नहीं हुआ।

वह उस फूल के समान थी जिस पर अभी भँवरों ने क्रीड़ा नहीं की, जिसका रस अभी तक अछूता ही रहा है। उसके मन रूपी मन्दिर में अभी तक किसी की प्रतिमा स्थापित नहीं हुई। अभी तक उसके मन में किसी का प्यार नहीं हुआ। उसके होंठ अछूते हैं और मन शान्त है।

आगे कवि ने शाही बाग का वर्णन किया है। उसकी शोभा बड़ी अनुपम है। उसमें अनेक प्रकार के वृक्ष अपनी अपूर्व शोभा बिखेर रहे हैं। इन वृक्षों पर विविध प्रकार के पक्षी चहक रहे हैं। नीचे घरती पर दूब का कालीन सा बिछा है। तरह-तरह के फूलों ने खिलकर उसको बहुत मनोहर बना दिया था। सुगन्धि से सारा वातावरण महक रहा था।

उसी बगीचे में सलीम बैठा हुआ कबूतरों की लीला देख रहा था और सुख पा रहा था। रात को जो लोटन कबूतरों का दल छोड़ा गया था उसके साथ दो नए कबूतर भी चले आए थे। इन्हें देखकर सलीम ने सोचा कि इन्हें पकड़ लिया जाए। उसने दाना डाला और उन दोनों कबूतरों को पकड़ लिया।

इतने में मेहर वहाँ आई। गुलाब का फूल तोड़ते समय उसकी उँगली में काँटा लग गया था जिससे खून की धार बह रही थी। सलीम ने उसे अपने कबूतर दिखाने चाहे लेकिन वह उँगली की पीड़ा से परेशान थी। सलीम भी यह देखकर घबरा गया और बोला कि तुमने मुझे क्यों नहीं कहा ?

मैं ही फूल तोड़ देता ।

और इसके बाद उसने अपने दामन का कोना फाड़कर उसकी उँगली बाँध दी । मेहर ने कहा “तुमने यह अपना दामन क्यों फाड़ डाला ? मेरे पास रुमाल था । मैं इसी से अपनी उँगली बाँध लेती ।”

फिर उसने अपने दोनों कबूतर मेहर को दिए और बोला कि मैं अभी गुलाब की खिलती कलियाँ लेकर आता हूँ तुम इन्हें थामे रहना और जो दाना चुग रहे हैं उन पर भी नजर रखना । यह कह कर वह चला गया और मेहर कबूतर थामे खड़ी रही । इतने में अचानक एक कबूतर उसके हाथ से उड़ गया । वह घबरा गई । ऊपर से सलीम आ गया । आते ही क्रोध में भर कर बोला “दूसरा कबूतर कहाँ है ?”

मेहर ने उत्तर दिया “वह उड़ गया ।” “कैसे” सलीम ने पूछा । मेहर ने दूसरा कबूतर भी हाथ से छोड़कर कहा “ऐसे ।” सलीम उस सरलता पर निछावर हो गया । कुछ देर तक वह उसकी ओर देखता रहा और फिर दौड़ कर उसे सीने से लगा लिया । मेहर ने लाव्य छोड़ने को कहा मगर वह माना ही नहीं । वह उसे छाती से लगाए उसे चूमता रहा । इतने में ही पास की झाड़ी से हँसने की आवाज आई । मेहर शरमा कर वहाँ से हट गई ।

सलीम भी घबराया और उस हँसने वाले की तलाश में चल दिया । लेकिन कहीं कोई नहीं मिला । फिर जब वह वापिस आया तो मेहर भी जा चुकी थी । वह घबरा कर उसे ढूँढने लगा । अन्त में जब उसे मालूम हुआ कि वह अपने घर चली गई है तो वह उदास होकर अपने कमरे में आकर लेट गया ।

इस सर्ग में मेहर की वयसन्धि अवस्था का जो चित्रण हुआ है वह कलात्मक है ।

पृ० ४४ “बासंती

सुर बाला ॥”

शब्दार्थ—बासंती=वसंत का । मृदु समीर = मधुर वायु । लतिका-यौवन=जवानी की लता— रूपक अलंकार । पानी=शामा । मानस = मानसरोवर । विमल=पवित्र, उज्ज्वल । मराली=हसिनी । चपला=बिजली । स्वच्छंद=स्वतंत्र । जलद पटल=बादलो का समूह । पावस=वर्षा । मार = काम । मद्-

सुरा=मस्ती की शराब—रूपक अलंकार । प्रत्यञ्चा=डोरी । सुर बाला=देवता की लड़की ।

भावार्थ—मेहरुन्निसा का सौंदर्य दिन व दिन बढ़ता चला जा रहा था । उसकी जवानी की लता बसंत की मधुर वायु के स्पर्श से विकसित होती जा रही थी । वह किरणों के समूह के समान शोभा वाली थी और मानसरोवर को पवित्र हंसिनी के समान सुन्दर थी । उसके हरेक अंग में सौंदर्य की बिजली खेल रही थी । लेकिन फिर भी वह बड़ी भोली थी—जवानी की चतुराई से बहुत दूर ।

अभी तक उसके मन में प्रेम का तीर नहीं लगा । उसके सौंदर्य की स्वतन्त्र किरणों पर अभी प्यार के बादल नहीं छाए । वर्षा ऋतु के इन्द्रधनुष द्वारा कामदेव ने उस पर तीर भी नहीं चलाया है । अभी तक उसकी आँखें किसी की आँखों से नहीं मिलीं । अभी तक मस्ती की शराब नहीं पी । अभी उसके कटाक्षों की तलवारें प्रकट नहीं हुईं और उसकी भौंहों रूपी धनुष पर डोगी नहीं चढ़ी । अभी वह किसी को धायल करना जानती ही नहीं ।

कितने ही लांगो ने उस पर नजरे डालीं, उसे फँसाने की कोशिश की लेकिन वह देव बाला ससार रूपी जाल में से पानी के समान निकल जाती थी । किसी का उस पर कोई असर नहीं होता था ।

पृ० ४५ “उस आवदार भकोरे ॥”

शब्दार्थ—आवदार=चमकदार । प्रणयसूत्र=प्रेम का धागा—रूपक अलंकार । मन-मुक्ता=मन रूपी माती । मुकुल=कली । अवाक=शान्त । मधुप=भँवरा । अनवेधा=बिना बेधा हुआ । हिमकण=आंस की बूँद । नभ चढ़ जाने की=आकाश में चढ़ने की, बहुत ऊँचा उठने की । सुरचि=सुन्दर । कलापी=मोहर-मन । दृग-अतिथि=नेत्र रूपी मेहमान—रूपक अलंकार । अधर सकोरे=होंठ रूपी सकोरे—रूपक । मलयानिल=मलय पवन से आने वाली वायु ।

भावार्थ—मेहर ऐसे चमकदार मोती के समान थी जिसमें तार नहीं पिरोया गया था । वह उस कली के समान है जो अभी-अभी खिल कर शान्त मुख से शोभा पा रही हो । और अभी तक जिसे भँवरों ने न

छुआ हो ।

उसके दिल का फूल भी अभी बेधा नहीं गया, किसी ने उसे तोड़ कर अपने गले का हार नहीं बनाया । उसके मनमें श्रोम की बूँद के समान आकाश तक पहुँचने की इच्छा नहीं थी और न ही उसके दिल में ऐसी पीड़ा पैदा हुई थी जो कभी नहीं निकलती । उसका मन रूपी मन्दिर पूर्ण रूप से सुन्दर बन गया लेकिन अभी उसमें किसी की मूर्ति की स्थापना नहीं हुई—उसने किसी को मन में नहीं बसाया । उसका यौवन घटा के समान चढ़ा है लेकिन अभी मन रूपी मोर नहीं नाचा है—उपमा अलंकार ।

अभी तक किसी के नयन रूपी मेहमान उसकी आँखों में नहीं बसे हैं । वह उस तैयार खेत के समान है जिसमें अभी तक प्रेम के अंकुर पैदा नहीं हुए । उसके होंठ रूपी सकोरे अभी तक कोरे हैं—किसी के होठों ने उसे नहीं छुआ है । वह प्रातःकालीन मलय पवन के समान है लेकिन उसमें अभी झकोरे नहीं उठते । अभी वह शान्त है ।

“जब

मरा हुआ ॥”

शब्दार्थ—शैशव-शिशिर=बचपन रूपी पतझड़—रूपक अलंकार । साध = इच्छा । वर=श्रेष्ठ । ऊषा=ऊषा सी लालिमा । शिखिर शृङ्ग=तम्बू की चोटियाँ, दोनो कुच । ‘मार’ ‘मार’=मारो-मारो, कामदेव—श्लेष अलंकार ।

भावार्थ—जब बचपन रूपी पतझड़ बीता तब यौवन रूपी बसंत का आगमन हुआ । तब उसके मन में कुछ नई उमंग पैदा होने लगी । फिर श्रेष्ठ बसंत ऋतु ने उसे सोलहों शृङ्गार से सजा दिया । बचपन शान्त हो गया और यौवन आने लगा ।

उसके बाल काली घटाओं के समान थे । उसके कानों में बिजली सी चमकती थी । बचपन और यौवन के इस मिलन की शोभा कुछ अजीब ही है । कभी वह लजा जाती है और उसके गाल ऊषा के समान लाल हो जाते थे । उसका बचपन उससे रूठ कर जाता था और उसके बुलाने पर भी नहीं आता था ।

जिस नायिका की अवस्था बचपन और जवानी के बीच हो, जिसमें

बचपन या यौवन का मिलन हो, वह वयसन्धि नायिका कहलाती है। यहाँ मेहर की वयसन्धि का चित्रण है।

लड़ाई होने पर दोनों सेनाओं के तम्बू लगा दिए जाते हैं और मारो मारो की आवाज मची रहती है। चारों ओर हलचल मची रहती है। उसी प्रकार मेहर के दोनों कुच दो चोटियों के समान लड़े हैं। कामदेव का राज्य है। सभी उस पर मोहित हो रहे हैं। एक हलचल सी मची है।

पृ० ४६ “दो मीन केतु चाल दिखाई ॥”

शब्दार्थ—मीन-केतु=मछली के चिह्न वाली पताकाएँ, आँखें-श्लेष अलंकार। अंजन=काजल। आयुध=शस्त्र। सान चढ़ाते=तेज करते। रसाल=सुन्दर। त्र्यम्बक=शिव। अनंग=कामदेव। अम्बुज=कमल। संगमूसा=खास किस्म का पत्थर।

भावार्थ—जिस प्रकार सेनाओं में दो पताकाएँ होती हैं उसी प्रकार मेहर के दो नयन चलते हैं। उसकी आँखों में काजल है। ऐसा मालूम होता है कि सैनिक अपने हथियार तेज कर रहे हैं। इसके रसीले नेत्रों में छिप कर काम किस पर तीर चलाना चाहता है। शिव के साथ लड़कर कामदेव अनंग कहलाने लगा। अब वह मेहर के नेत्र किसी से प्यार करवाने को लिए जा रहा है।

वहाँ क्यारियाँ हैं जो अलग-अलग आकारों की हैं। कुछ गोल हैं, कुछ छे कोने वाली हैं, कुछ अण्डे सी तो कुछ त्रिकोण हैं, कुछ डमरू सी तो कुछ कमल सी हैं। रविशों पर लाल घास की गोठ सी लगा दी है। घरती पर दूब उगी है और वह बहुत सुन्दर दिखाई देती है।

उस हरियाली में संगमूसा के मार्ग बीच-बीच में बने हैं। और नहरें भी हैं जो इन मार्गों से आ-आकर मिल जाती हैं। हरियाली और नहरों को देखकर ऐसा लगता है जैसे किसी ने वहाँ शतरंज बना दी है। इस पर मित्र रूपी प्यादे चल रहे हैं।

“जल विहार हो आया ॥”

शब्दार्थ—जल विहार=जल की सेर। कश्ती=नाव, शतरंज का एक मोहरा। हाथी, घोड़े, बादशाह=ये सब शतरंज के मोहरे होते हैं। पारिजात=

कदम्ब । अरवली=पंक्ति । पुष्पासव=फूलों का रस । नभ-छत=आकाश की छत ।
व्यजन=पंखा । बिटप=वृक्ष ।

भावार्थ—उस शतरंज पर मित्र रूपी प्यादे चल रहे हैं जो जल विहार के लिए नाव बढ़ाते हैं । इधर शतरंज पर कश्ती मोहरा चलता है । हाथी और घोड़े बादशाह को अपनी-अपनी चाल दिखा रहे हैं । वजीर भी बड़ी अनोखी अनोखी चालें चल रहे हैं । फबारे चल रहे हैं । उन्हें देखकर मन मोहित होकर उछलने लगता है ।

कहीं मोरपंखी पौधा है, कहीं लौंग की लता है, कहीं सम्भुल लता है जो वियोगिनियों के समान अपने बाल फैलाए हुए है । कहीं मौलसिरी की पंक्तियाँ हैं और कहीं कदम्ब के वृक्ष लगे हैं । और तिनलियाँ फूलों का रस पी-पी कर परियों के समान इधर-उधर उड़ती दिखाई देती हैं ।

आम, केला और नारियल के पेड़ लगे हैं । बहुत से ताड़ के ऊँचे-ऊँचे पेड़ हैं जो सर पर आकाश रूपी छत को रोके खड़े हैं । अशोक के पत्ते झालरों के समान हिलते हुए मानो पंखा चला रहे हों । और वृक्षों की डालियों पर रंग-बिरंगे फूल हैं जो भँवरों को अपनी ओर बुलाते हैं । सारा कचनार फूलों में ही डूब सा गया है । सकरेश्वर का पेड़ भी फूलों से लाल हो गया है ।

पृ० ४७ “इमलतास

सोती ॥”

शब्दार्थ—पय = पानी । सित=सफेद । प्रेम राग=लाल रंग । हरि-
ताञ्चल=हरा अंचल । करवालें=तलवारें । पुं गीफल=सुपारी ।

भावार्थ—इमलतास का पेड़ पीले फूलों का वस्त्र पहने दूल्हा बना हुआ है । नारंगी रसमय जावनी लिए हुए दुल्हिन सी लग रही है । अनार की लाल कलियों ने ऐसी आग सी लगा दी है कि चातक यह चिल्ला रहा है कि पानी कहाँ है ?

माधुरी लता रात को सफेद फूलों से भर जाती । मगर सवेरा होते ही जैसे ही सूर्य की किरणें उसका आलिंगन करतीं उसका रंग लाल हो जाता । कहीं रूपमंजरी की लता है तो कहीं मालती लता की शोभा है ।

मेंहदी हरे रङ्ग के पत्तों में लाली छिपाए भूम रही है । रविशों के ऊपर

मोरों का समूह मस्त बना घूम रहा है। अगस्त का पेड़ हाथ में फूलों की तलवारें लिए हुए इतरा रहा है। सुपारी का पेड़ छोटा पेड़ शोभा की वर्षा सी कर रहा था। अंगूरों की लताओं में मोती के समान उजले अंगूर लगे हैं। और कहीं कुंद की कुंजों में महोखी की जोड़ी सो रही थी।

“फुदुक

अनोखा ॥”

शब्दार्थ—शशक=खरगोश। वितान=तम्बू सा—उपमा अलंकार। पद्म राग=कमल, एक कीमती पत्थर। सुरभि-सुरा=सुगन्धि की शराब।

भावार्थ—वृक्षों की डालियों पर लाल, थिरथिरा आदि पक्षी खेल रहे हैं। फ्रांखता कूक कर अपनी जोड़ी पंडुकी को बुलाता है। चमेली की लताएँ मेहराबों पर चढ़ी हैं। खरगोश करोंदे की भाड़ियों में खेल रहे हैं।

मालती गर्मी में रहने वाले महल पर चढ़ी हुई है। उसने वहाँ एक तम्बू सा तान रखा है। उस लता ने प्रेम लीला सुनी है, प्यार की कहानियाँ भी सुनी हैं। उस गर्मी के महल में अनेक प्रकार की काम कीड़ाएँ हुईं और आनन्द के फूलों को तोड़ा गया है।

गुलाब भी सुन्दर पत्थर के प्यालों में सुगन्धि रूपी शराब पी-पीकर मस्त हो रहे हैं। बैजती हवा में उड़ रहा है, मोतिया का मन भी प्रसन्न है, सुदर्शन भी हैं, बेले की शोभा अनोखी है, गेदे का रंग सुन्दर है और गुलमेंहदी का रंग बहुत सुन्दर तथा आकर्षक है।

पृ० ४८ “रजनीगंधा

मानिनी मनाते ॥”

शब्दार्थ—आलबाल=वह गदा जिसमें पीधे लगाए जाते हैं। द्विजकुल=पक्षियों का समूह। कपोत-क्रीड़ा=कबूतर के खेल। विनीत हो=विनम्रता के साथ।

भावार्थ—वहाँ पर रजनीगंधा के फूल खिले हैं जो रात की रानी कह-लाती है। जूही भी मस्त कर देने वाली है। गुलसब्बो और केतकी भी शोभा दे रही हैं। सदा सुहागिन हमेशा फूलों से भरी रहती है। केवड़े की छटा भी न्यारी है। आलबाल में लगे ये सब पीधे शोभा पा रहे हैं।

अनेक रंगों की मणियों से बने होज हैं जिनमें मछलियाँ भरी हैं। मछलियों का रंग पीला, लाल एवं हरा है तथा वे सुनहरे पानी में डूबी

रहती हैं। इस बड़े शाही बाग में हमेशा लुहों ऋतुओं की शोभा दिखाई देनी थी। वसंत भी इसी शोभा को देखकर मोहित हो गया था।

सलीम इसी बाग में फूलों की शोभा देख रहा था तथा पक्षियों का मधुर संगीत सुन रहा था। फिर वह कबूतरों का खेल देखने लगा। जोड़े एक साथ बैठे हैं। जब उनमें से एक अपनी आँखें बन्द कर लेता है तो दूसरा बड़े प्यार से उसे खुजला देता है।

कुछ कबूतर अपनी कबूतरियों के सामने नाचकर, अपनी गर्दन फुला कर, इटलाकर गुटर गूँ की आवाज करते हुए अपने प्रेम का प्रकाशन करते, अपने आप पर उन्हें मोहित करते तथा बड़े विनम्र भाव से उन मानिनियों को मनाते थे।

“चौचें

उपवन में ॥”

शब्दार्थ—घट-चक्की=शरीर की चक्की-कबूतर के अन्दर गर्दन के नीचे के भाग में एक अंग होता है जो चक्की के समान अनाज के दानों को पीसता है।

भावार्थ—यदि किसी कबूतरी पर कोई भी दूसरा कबूतर नजर डालता था तो उसका जोड़ा उस से लड़ने लगता था और चौचें चलने लगती थीं। सामने एक जोड़ा अपने बच्चों को पालने में लगा है। उनके बच्चे अंडा तोड़कर अभी ही निकले हैं। उनकी आँखें भी नहीं खुली हैं। उनके शरीर पर एक रोंआ भी नहीं है।

वह जोड़ा उन बच्चों की चौचों से अपनी चौचें मिलाता है और फिर अपने भीतर की चक्की में पीसा दाना ऊपर लाकर उनकी चौचों में डाल देता है। इस प्रकार वह जोड़ा बच्चों के प्रेम में लीन हो रहा है।

सलीम कबूतरों के यह खेल देखकर आनन्दित हो रहा था। लोटन कबूतर का नाच देखकर वह भी लोट पोट हो जाता था। जब लकड़ा कबूतर छाती फुला कर चलता था तो सलीम का मन भी नाचने लगता था। जब शीराजी कबूतर उड़ाए गए पहले तो वे आकाश में इतने ऊपर उड़ गए कि दिखाई भी नहीं देते थे और फिर उनमें से कुछ नीचे छतरी पर बैठ गए और कुछ बगीचे में घूमने लगे।

पृ० ४६ “गिरहबाज

घबड़ाई ॥”

शब्दार्थ—गिरह मारते=कलाबाज़ी लगाते ।

भावार्थ—गिरहबाज कबूतर भी आकाश में खेल दिखाने लगे । वे बार-बार उलट उलट कर कलाबाजियों मारते और इस प्रकार बड़े मनोहर लग रहे थे । कुछ कबूतर रात में बहुत दूर लेजाकर छोड़े गए थे । सवेरा होते ही वे वापिस अपने अड्डे पर आ बैठे ।

उनके साथ ही एक नया जोड़ा भी भूल कर चला आया था । वह छतरी पर बैठा घबरा कर इधर-उधर देख रहा था । सलीम ने जब उसे देखा तो छिप कर दाना डाल दिया और दरवा खोल कर अन्य बहुत से कबूतरों को भी बाहर निकाल दिया ।

जब वे दोनों औरों के साथ नीचे उतरे और दाना चुगने लगे तो सलीम ने घोड़े के बालों का फंदा लाकर चुपचाप उनके पंजों में डाल दिया और उन्हें पकड़ लिया । वे फड़फड़ाते रहे लेकिन इसने उन्हें अपने हाथों में कस लिया ।

इस प्रकार उसने जब दोनों कबूतरों को पकड़ लिया तो उन्हें चूम-चूमकर वह बहुत खुशी से घूम रहा था । इतने में ही मेहर बाग में आई । उसने अपनी उँगली थाम रखी थी । वह चंचल गति से आ रही थी और बड़ी घबराई सी मालूम होती थी ।

“बोला

बनाया ॥”

शब्दार्थ—काँटों में घसीटना=परेशानी में डालना ।

भावार्थ—कुंवर सलीम बोला ‘देखो मैंने कबूतरों का एक नया जोड़ा पकड़ लिया है ।’ वह बोली ‘तुम अपने इस तमाशे को अपने पास ही रखो । मैं गुलाब का फूल तोड़ रही थी तभी मेरा पाँव फिसल गया और एक काँटा बड़े जोर से मेरे हाथ में चुभ गया ।

मेरे हाथ से अंचल छूट गया । सारे फूल धरती पर गिर गए । और यह देखो अभी तक खून की धार नहीं रुकी ।’ सलीम उँगली से उसे देखने लगा । लेकिन स्पर्श करते ही वह सी-सी करने लगी और उसकी लाल आँखों में आँसू भर आए और बोली ‘छुओ मत ।’

वह बोला तुमने बेकार ही काँटा चुभा लिया है। मुझे इसका बहुत दुख हुआ है। अगर तुम्हें गुलाब का फूल इतना अच्छा लगा था तो मुझ से कहती मैं उसे चुन देता। ठहरो मैं अभी तुम्हारी उँगली बांधे देता हूँ। लो इसे भिगोना तो सही—यह कहते-कहते उसने अपने दामन का कोना फाड़ डाला।

यह देख कर मेहर चौंक उठी और बोली—“अरे यह तुमने क्या कर दिया। मैंने बेकार ही तुम्हें यह हाथ दिखाया। तुमने अपना दामन फाड़कर मुझे परेशानी में डाल दिया और मुझे शर्मिन्दा कर दिया है।

पृ० ५० “था रुमाल देखिए ऐसे॥”

शब्दार्थ—पारावत=कबूतर। अपर=दूसरा।

भावार्थ—मेरे पास यह रुमाल है। अन्य भी कपड़े हैं। आपने दामन क्यों फाड़ा। इसके फटते ही मुझे तो जैसे दूसरा काँटा लग गया हो। मेरा सारा दर्द भी दूर हो गया और खून का बहना भी रुक गया है।”

सलीम ने कहा “अच्छा लो ये दोनों कबूतर संभालो। मैं गुलाब की खिलती हुई कलियाँ लाने के लिए जा रहा हूँ। जो कबूतर दाना चुग रहे हैं उनका भी ध्यान रखना।”

उधर सलीम तो कलियाँ लेने चला गया। नूरजहाँ के एक हाथ का कबूतर पर फड़फड़ाने लगा और आखिर उड़ ही गया। उसने उसे संभालने की लाख कोशिश की लेकिन संभाल नहीं पाई क्योंकि उसके दोनों हाथ भरे हुए थे। इस संघर्ष में कबूतर के बहुत से पर बिलर गए।

थोड़ी देर बाद ही सलीम हंसता हुआ फूलों की कलियाँ लेकर आया। लेकिन उसकी नजरें गुलाब से भी कोमल मेहर के मुख पर ही गड़ी थीं। जब उसने मेहर के हाथ में एक कबूतर देखा तो उसने पूछा कि दूसरा कहाँ गया। उसने उत्तर दिया कि वह तो उड़ गया।

इस पर जहाँगीर जरा नाराज होकर बोला कि वह कैसे उड़ गया? मेहर ने दूसरा कबूतर भी उड़ा कर कहा ‘वह इस प्रकार उड़ गया।’

“भोलापन

टें टें कर ॥”

शब्दार्थ—कठफोड़वा=एक पक्षी विशेष ।

भावार्थ—यह भोलापन देखकर सलीम चकित होगया और उसकी ओर एकटक देखने लगा । यहाँ तक अपने आप को भूल गया । फिर उसने एक ठंडी सॉस खींची और दौड़कर उसके पास पहुँचा और उसके होठों को चूम लिया । उसे हाथों में उठा कर सीने से लगा लिया ।

उसने कहा ‘हटो ! जरा संभल जाओ ! देखो शायद कोई आरहा है ।’ यह सुनकर वह चौकन्ना हुआ । उसने घबरा कर मेहर को छोड़ दिया और इधर-उधर देखने लगा । जब उसने देखा कि कोई नहीं आया तो उसने फिर उसे छाती से लगा लिया और उसे चूमने लगा । बार-बार उसका आलिंगन करके वह आनन्द में विभोर हो गया ।

इतने में ही किसी भाड़ी से किसी के हंसने की आवाज सुनाई दी । उसे सुनकर मेहर तो घबरा गई । वह अपने आप को छुड़ा कर वहाँ से हट गई । शर्म के मारे उसकी आँखें ऊपर न उठती थीं ।

जहाँ से आवाज आई थी सलीम उधर लपक कर पहुँचा और हंसने वाले को खोजने लगा । उसने हरेक भाड़ी और एक-एक पत्ता देख लिया लेकिन कहीं भी कोई दिखाई नहीं दिया । हाँ इसकी आइट पाकर एक कठफोड़वा टें-टें करता हुआ एक डाली पर से उड़ गया ।

पृ० ५१ “गुस्से

आकर ॥”

शब्दार्थ—ग्रीष्म-भवन = गर्मी में रहने का महल । द्रुतगति=तेज चाल । अभिवादन=सत्कार । व्यथा = दुख ।

भावार्थ—सलीम क्रोध में मुट्ठी बाँधे, होठ काटता हुआ सब जगह हंसने वाले की तलाश करता रहा । भाड़ियों को पाँव के नीचे कुचलता रहा । लेकिन जब कोई न मिला तो वह फिर वापिस आया लेकिन जब देखा कि मेहर नहीं है तो वह चिन्ता से और भी घबरा गया ।

वह तब गर्मी बिताने के महल में गया, सभी कुंजों में मेहर की तलाश की, लताओं में खोजा लेकिन वह कहीं न मिली । फिर वह पाँव के

निशान देखता हुआ बाग के दरवाजे पर तेजी से गया ।

वहाँ जो तातारी सैनिक खड़ा था उससे पूछा कि क्या इधर से कोई गया है ? उसने सत्कार कर उत्तर दिया कि मेहर इधर से निकल कर अपने घर गई है । फिर सलीम रुक गया । उसने अपने दुख को सीटी बजा कर छिपाया । और चुपचाप अपने कमरे में आकर लेट गया ।



सातवाँ सर्ग

कथासार—जमीला वजीर की लड़की थी और मेहर के बचपन की सहेली। दोनों साथ-साथ खेल कर बड़ी हुई थीं। जमीला को अब सलीम से प्यार हो गया था। वह भी बहुत सुन्दर थी। कई व्यक्ति उस पर मरते थे लेकिन वह तो सलीम पर ही मरती थी। इसलिए वह किसी की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखती थी।

उसे यह नहीं मालूम था कि मेहर सलीम से प्यार करती है और सलीम भी उसे चाहता है। लेकिन उसी ने बाग में उन दोनों को देख लिया था और वही हँसी भी थी। जब उसे यह मालूम हुआ कि सलीम और मेहर दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हैं तो उसका मन ईर्ष्या से भर गया। वह जल गई। और उसके मन में मेहर के खिलाफ एक तूफान सा उठ खड़ा हुआ।

उसने सोचा कि मेहर एक सौदागर की लड़की है। इसके अतिरिक्त उसके कुल का और कुछ भी पता नहीं है। और मैं वजीर की लड़की हूँ। वह भला मेरे सामने क्या ठहर सकती है। मैं उसे ऐसा मजा चखाऊँगी कि उम्र भर याद रखेगी। उसकी यह हिम्मत कि वह एक मामूली सौदागर की लड़की होकर देश के भावी सम्राट से प्यार करे और मैं वजीर की लड़की होकर भी देखती रह जाऊँ ? ऐसा नहीं हो सकता।

मेहर अपने आप को समझती क्या है ? मैं वह चाल चलूँगी कि वह देखती रह जाएगी। जिन्दगी भर रोती रहेगी। हमेशा के लिए सलीम से बिछड़ जाएगी। मैं उसकी दाल नहीं गलने दूँगी। और उसको हटाने के बाद फिर मेरी विजय होगी। सलीम मेरा होगा। मैं अपने मन की सब इच्छाएँ पूरी करूँगी।

यह सोच कर उसने निश्चय किया कि वह सलीम और मेहर के इस गुप्त प्रेम की खबर बादशाह तक पहुँचाए। यह निश्चय करके वह हरम की ओर

चल दी। अकबर अनेक सुन्दरियों के बीच घिरा बैठा था। जमीला ने जाकर सलाम किया और अकबर के पास पहुँची। उसके प्रश्न करने पर बोली कि मुझे कुछ कहना है लेकिन सबके सामने नहीं कह सकती।

अकबर ने कहा 'अभी सब चले जाएँगे। मैं उन लोगों से बहुत खुश रहता हूँ जो मेद की बातें मुझे बताते हैं।' यह कहकर उसने सबको जाने की आज्ञा दी।

जब सब चले गए तो जमीला ने अकबर से कहा, "मैंने अपनी आँखों से शहजादा सलीम को मेहर के साथ प्यार करते देखा है। अगर आपकी यही इच्छा है तो ठीक है। लेकिन मैंने उचित समझा कि आपको इसकी सूचना दे दूँ। आगे आपकी जैसी इच्छा हो कीजिए।"

यह सुनकर अकबर ने कहा "मैं तुम से बहुत खुश हूँ जो तुमने मुझे यह बात बताई है। मैं शीघ्र ही सब बातों का पता लगवा कर निश्चय करूँगा। मेहर अब बढ़ी हो गई है। उसका विवाह हाँ जाना चाहिए। अलीकुली बड़ा यहलदुर है। उसे मैं बगाल का सूबेदार बना दूँगा और इनाम के तौर पर मेहर के साथ उसका विवाह कर दूँगा।"

जमीला यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और खुशी-खुशी चली आई।

इसके बाद कवि ने प्रातःकाल का वर्णन किया है। सवेरे का सुनहला प्रकाश सब ओर फैलने लगा है। मोती से ओस के दाने बिखरे हैं। फूल हँस रहे हैं। चारों ओर सुगन्धि उड़ रही है। सूर्य धीरे-धीरे आगे बढ़ रहा है।

ऐसे समय में मेहर सो रही है। सूर्य की रोशनी रोशनदान से छनकर उस पर पड़ती है। वह करवट बदल लेती है। आखिर वह जाग ही पड़ी। उसने जो देखा तो सामने सलीम खड़ा था। वह सकपका कर वस्त्र सँभालने लगी।

सलीम ने कहा, 'माफ करना जो तुम्हें मैंने इस प्रकार जगा दिया। अब मैं जाता हूँ। तुम अपनी नींद पूरी करलो। मैं केवल इसलिए चिन्तित हो गया था कि तुम उपवन में नहीं पहुँची। और मैं इन्तजार करते-करते थक गया तो इधर चला आया। तुम थोड़ा सो कर आ जाना। मैं गुलाब की

कलियों चुन रखता हूँ। आकर हार बनाना और जिसे चाहे पहना देना।'

मेहर बोली 'चलो मैं भी तुम्हारे साथ चलती हूँ। रात देर से नींद आई थी इसीलिए जल्दी उठ नहीं पाई। और अभी तो मैं सपना देख रही थी।'

सलीम ने पूछा कि क्या सपना था ? पहले तो मेहर ने नहीं बताया पर सलीम की जिद्द देखकर उसे बताना ही पड़ा। बोली 'मैंने देखा कि कई परियों मेरे पास आईं। एक ने कहा इसे स्वर्ग ले चलो। दूसरी बोली इसे देश निकाला दूँगी। तीसरी बोली इसे ताज पहना दो। मेरे नहीं करने पर भी वे मेरे पास आईं और सबने मिलकर मेरी चूड़ियाँ तोड़ डालीं।'

इतने में मेहर के पिता ने उसे बुलाया। वह उधर चल दी और सलीम भी शंका और चिंता में डूबा बाहर चल दिया।

इसमें जमीला के कथन में मुहावरों का बहुत प्रयोग है। प्रातःकाल का वर्णन बहुत सुन्दर है।

पृ० ५२ "यदि नाम

इतराई ॥"

शब्दार्थ—पानी में आग लगा दूँगी=असंभव काम भी कर दिखाऊँगी।
लावण्य=आकर्षण।

भावार्थ—यदि मेरा नाम जमीला है तो मैं असंभव कार्य भी कर दिखाऊँगी। हे मेहर ! तू क्या चालाक बनती है मैं तुझे भी परेशान कर दूँगी। मैं वजीर की लड़की हूँ। मेरा कुल बहुत ऊँचा है। सौंदर्य और आकर्षण में भी मैं किसी से कम नहीं हूँ।

फिर भी वह नीच मेहर न जाने किस बात पर अभिमान करती है। उसका जोवन मेरे सामने क्या है। उसने भोले-भाले सलीम पर जादू कर दिया है। इसी से बहुत प्रसन्न है और आपे में नहीं रही। सलीम भी उसी पर मरने लगा है। सचमुच मेहर तो जहर की पुड़िया के समान भयंकर है। वह उस पर घिछल गए हैं जो स्वयं मोम की बनी है। जिसकी कुछ हस्ती ही नहीं है।

यही कारण है कि उसके मिजाज इतने बढ़ गए हैं। अब तो उसका दिमाग इतना चढ़ गया है कि वह सीधे मुँह बात भी नहीं करती। मैं तो उड़ती चिड़िया पहचान सकती हूँ। फिर मेहर तो मेरे सामने चींटी के समान

है। वह अपना भेद मुझ से कैसे छिपा कर रख सकती है। देखो तो वह कैसी मस्त बनी है कि मुझ से ही अपना रहस्य छिपाती है।

वह एक मामूली सौदागर की लड़की है। अभी कल तो टोक़रें खाती आई थी। अब उसे जरा सा सहारा मिल गया बस वह घमंड में भूमने लगी।

पृ० ५३ “वह साथ-साथ सुख पाती हूँ ॥”

शब्दार्थ—हमजोली = सहेली।

भावार्थ—वैसे तो मेहर मेरे साथ-साथ खेली है। लेकिन अब मुझी से आँखें चुराने लगी है। वह मुझे धोका देने की कोशिश कर रही है। लेकिन मैं भी उसे खूब सिखाऊँगी कि इसका क्या फल निकलता है। यद्यपि मैं उसकी प्रिय सखी हूँ फिर भी वह मुझ से अपने इस प्रेम को छिपाने की कोशिश करती है। अब वह भी चालाक बनने लगी है और बातों ही बातों में मुझे चकमा देती है।

लेकिन वह मुझ से नहीं जीन सकेगी। मैं हमेशा उससे आगे रहूँगी और उसे अपने पीछे चलाऊँगी। वह मेरी उपेक्षा करती है लेकिन मैं उसे बिलकुल उड़ा दूँगी। वह रोज ही कुंजो में छिप-छिप कर सलीम के साथ आनन्द लूटती है। कल मैंने स्वयं अपनी आँखों से यह देख लिया है। वह नित्य ही उसे अपनी बातों में बहकाया करती है।

वह सौदागर की लड़की है। पता नहीं उसका कुलादि क्या है। लेकिन मैं तो वजीर की लड़की हूँ और मेरा कुल तो बहुत ऊँचा है। वह तो मेरे पाँव की धूल के बराबर भी नहीं।

मैं भी सलीम पर मरती हूँ। और कितने ही लोग मुझ पर मरते हैं। मुझे एक बार देख भर लेने के लिए वे तरसा करते हैं, आहें भगा करते हैं। लेकिन मैं कभी उनकी ओर आँख उठा कर भी नहीं देखती। जब वे मेरी मुहब्बत में तड़पा करते हैं तो मुझे बहुत खुशी होती है।

“वह ही

पायेगा ॥”

शब्दार्थ—कुटिल=धोके बाज। कतर-ब्योत=चालाकी।

भावार्थ—यदि सलीम मेरी ओर एक बार भी देख ले तो मैं उनके

लिए दुनिया ही छोड़ दूँगी और अपने अमूल्य यौवन को उनके प्रति अर्पित कर दूँगी। हे मेहर ! तेरी तो बात ही क्या है मैं सलीम को भी ठीक करती हूँ। मैं अभी जाकर तेरी सब बातें बादशाह से कहती हूँ।

सीधे लोगों के साथ मैं सीधी हूँ और जो टेढ़े हैं उनके साथ मैं भी बहुत तेज हूँ। यदि मैं चाहूँ तो आकाश से तारे तोड़ कर भी ला सकती हूँ। असंभव कार्य भी कर सकती हूँ। मैंने बड़ा जमाना देखा है। मैं कच्ची लकड़ी नहीं हूँ। हीर हूँ हीर ! मैं सबको बता कर उन पर वार करती हूँ लेकिन फिर भी मुझे आज तक कोई नहीं पकड़ सका।

मैं ऐसी चाल चलूँगी कि कोई भी समझ नहीं पाएगा। ऐसी उलझन पैदा करूँगी कि स्वयं सलीम भी घबरा जाएगा। मैं तुझ पर भारी मुसीबत डालूँगी जिससे तेरी सारी शोखी नष्ट हो जाएगी। तुझे गला-गला कर मारूँगी और तेरा सोना भी हाराम कर दूँगी।

मैं तेरे सब रंगों को तुरप से काट दूँगी। तेरी सब चालों को बेकार कर दूँगी। जितने भी तेरे समर्थक हैं उनमें से कोई भी मेरे सामने नहीं ठहर पाएगा। और जो भी मेरे साथ चालाकी करेगा मैं उसे भी अच्छी तरह देख लूँगी। और जो मेरा कार्य पूरा करेगा उसे मैं अपने हृदय में स्थान दूँगी।

पृ० ५४ “मैं

बताते हैं ॥”

शब्दार्थ—कुं दी=बेकार। अन्तःपुर=हरम। सुरपति = इन्द्र।

भावार्थ—हे मेहर ! मैं तेरा काम समाप्त कर दूँगी और तुझे अपनी करनी का फल भोगना पड़ेगा। तू जो भी आशाओं के चित्र बनाएगी मैं उन सब को मिटा दूँगी। मैं ऐसी चाल चलूँगी और तुझे ऐसी परेशानी में डालूँगी जो कभी खत्म ही न हो। मैं तेरा सत्यानाश कर दूँगी और तब तू कैद में पड़ी-पड़ी सड़ती रहेगी—फूटे कमरों को रोती रहेगी।

मैं तुझ पर ऐसी चाट करूँगी कि तू तड़प-तड़प कर मर जाएगी। तू दर-दर भटकती फिरेगी और मर जाएगी। हे मेहर तुझे शीघ्र ही तलवार के घाट उतार दूँगी। मैं तुझ पर ऐसा जादू डालूँगी कि तू पानी भी नहीं माँगेगी।

मैं तेरी सब नस जानती हूँ और तेरी सब चालों से परिचित हूँ। मैंने तेरा रहस्य जान लिया है, तेरी बीमारी पकड़ली है।

यह कहते कहते वह हरम के भीतर जा पहुँची। वहाँ परियों सी सुन्दर स्त्रियाँ नाच रही थीं और अकबर उनमें इन्द्र के समान बैठा था।

तब थोड़ा आगे बढ़कर जमीला ने कुछ कहने की आज्ञा माँगी और कहा कि मैं आपको भेद की बात बता रही हूँ इसलिए मुझे कहने में डर लगता है।

अकबर ने उत्तर दिया “डरो मत। अगर तुम्हारी बात गुप्त है तो अभी सब हट जाते हैं। मैं उन लोगों से बहुत खुश होता हूँ जो सच्चे भेद बताते हैं।”

“तब कानों

जाता है ॥”

शब्दार्थ—यश वैभव=मान की संपत्ति। महीप=राजे। निस्बत=सम्बन्ध।

भावार्थ—तब मेहर ने अकबर के कानों से लगकर मेहर और सलीम के प्रेम का हाल बहुत कुछ बढ़ा-चढ़ाकर कहा। और बोली—

“जो हिन्दुस्तान का शाहजादा है, जो मुगल खानदान की इज्जत है, जिसके साथ सम्बन्ध करके बड़े-बड़े राजे भी अपने आपको धन्य समझते हैं, उसका विवाह उसके साथ हो जो सौदागर की पुत्री है, जिसके कुल का कुछ पता नहीं और जो ठोकरें खाती रही है।

मुझे तो यह बात अच्छी नहीं लगती क्योंकि सारी दुनिया इस पर उंगली दिखाती है। मेहर रोज ही बाग में आती है और प्रेम का यह नाटक वहाँ नित ही खेला जाता है। यदि आप की इजाजत है तो मुझे कुछ नहीं कहना क्योंकि सभी को आपकी इच्छा के अनुसार ही चलना है।

मैंने जो देखा वह मैंने आपको सुना दिया है। और मैंने जो आपका अमूल्य समय नष्ट किया है इसके लिए आप मुझे क्षमा करें।”

अकबर ने उत्तर दिया “मैं तुम से बहुत खुश हूँ। मैं अभी सब पता लगाता हूँ और जो उचित होगा वही करूँगा। तुम जाओ और अब मैं भी जा रहा हूँ।”

पृ० ५१ “वह चला उसको लाएंगे ॥”

शब्दार्थ—श्रियों का=शत्रुओं का । शौर्य=बहादुरी ।

भावार्थ—शक्रबर सोचता हुआ चल दिया “क्या मेहर अब इतनी बढ़ी होगई है । हाँ मेरे कान में भी उसको बात पड़ी थी । अब उसका यहाँ आना ठीक नहीं है । उसकी शादी करवा दूँगा और किसी उपाय से उसे यहाँ से दूर हटा दूँगा ।

वह भी अब सयानी होगई है । हाँ याद आया । अली कुली भी तो कवारा है । ये दोनों एक से हैं और यह जोड़ा बहुत अच्छा रहेगा । सलीम आग से न खेल सके इसलिए आग का हटवा देना ही उचित है । बाँसुरी न बजे इसके लिए बाँस कटवा देना ही ठीक है । सलीम मेहर से फंसकर कुछ अनुचित कार्य न कर बँटे इसके लिए मेहर का पदले ही यहाँ से हटा देना आवश्यक है ।

अली कुली सीमा प्रदेश से आया है, वह बहुत वीर है । उसने अपूर्व पराक्रम दिखाकर शत्रुओं का सर कुचल दिया है । बंगाल प्रांत में कुछ गड़बड़ है । उधर इसे सम्मानित भी करना है । जो सेवा के लिए अपना सर हथेली पर रखे रहता है उसको सम्मानित करना ही है ।

बस ठीक है । उसे मैं ढाका का शासक बना कर भेजूँगा और मेहर से उसका विवाह करके उसे पुरस्कृत करूँगा । वे दोनों दूर देश में जाकर सुखी होंगे और इधर कोशिश करके हम सलीम को भी सही रास्ते पर ले आएंगे ।

“नव कुसुमों आता है ॥”

शब्दार्थ—मृदुल हास=मधुर हंसी । भृंग पुंज=भंवरो का समूह । मुग्धा =वह नायिका जो प्रेम में भरी हो । कनक-कलश=सोने का कलश । व्योम-विचुम्बी=आकाश को चूमने वाले । रश्मि=किरण । दुग्ध फेन=दूध का भाग । नील-उदधि=नीला सागर ।

भावार्थ—प्रातःकाल का समय है । नए-नए फूल मधुर हंसी से हंस रहे हैं । भंवरो का समूह वन और बगीचों का मुखरित किए हुए है । ऊषा रूपी मुग्धा नायिका सूर्य की किरण रूपी हाथों का सहारा लेकर ओस रूपी गहने पहने धीरे-धीरे उतर रही है ।

आकाश को चूमने वाले राजमहल का सोने का कलश उदित होते सूर्य की किरणों के स्पर्श से चमक रहा है। दूध की भाग के समान सफेद चित्रों से युक्त महल की दीवारें इतनी कोमल हैं कि सूर्य की किरणें उन पर पड़ते ही फिसल जाती हैं और थर-थर काँपने लगती हैं।

चंदूल गाता हुआ आकाश में ऊपर खो जाता है और फिर उस नीले सागर में डुबकी लगाकर स्वर्गीय शोभा से युक्त होकर वापिस आता है।

पृ० ५६ “नील कंठ

भर के ॥”

शब्दार्थ—प्रणय=प्रेम। परिमल-सुरापान=सुगन्धि रूपी शराब का पीना। अलियों=सखियों। करतार=एक वाद्य-यंत्र। कलिका-मिजराब=कली रूपी मिजराब—मिजराब उसे कहते हैं जिससे सितार बजाई जाती है—रूपक अल-झार। अरुणोदक=सवेरे का जल।

भावार्थ—नीलकंठ पक्षी प्रेम के साथ उड़ता दिखाई देता है। कभी वह अपनी जोड़ी को मनाता है और फिर उसके साथ मिलकर शिव के मन्दिर पर खेलने लगता है। थोड़ी देर में ही हरियाली भी जाग उठी। वायु के चलने से वनस्पतियाँ हिलने लगीं। प्रेम भरा मलय पवन सुगन्धि रूपी शराब पीने लगा।

कलियाँ भी एक दूसरे को देख-देखकर तथा इशारे कर करके मुस्कराने लगीं। रात्रि रूपी नायिका ने तारों के साथ रति करते रात व्यतीत की थी। वह इन कलियों रूपी सखियों के इशारों को देखकर लज्जा की लालिमा से भर गई। उषा की लालिमा छा गई।

इतने में ही सारा संसार जाग उठा और यह लीला देखने लगा। लज्जा भरी निशा शरमा कर घूँघट निकाल कर वहाँ से चल दी। फिर जब सूर्य की किरणें आने लगीं तो लताओं ने अपने वाद्य यंत्रों पर कली रूपी मिजराब लगाई। लताओं के डोलने से मधुर आवाज पैदा होने लगी।

दहियल पक्षी ने उसके सुर में सुर मिला कर ऐसा संगीत छेड़ा कि सारे संसार का हृदय संगीत की शराब में मस्त हो गया। लहरें भी किनारे से टकरा-टकरा कर ताल देने लगीं। वायु सवेरे का जल पीकर कमलों को गोदी में भर-भर के घूमने लगा।

“प्रकृति-राग

ग्रठखेली ॥”

शब्दार्थ—राग=प्रेम । वातायन=रोशनदान । ज्योति-कुमारी=प्रकाशरूपी बालिका ।

भावार्थ—सारा संसार प्रकृति के प्रेम में लीन था और आनन्द में डूबा था । जिसे देखिए वही उस प्रातःकालीन संगीत में लीन था । भुजंग पहले से ही उठकर सौंदर्य देख मस्त हो गया था और प्रशंसा करता हुआ बार-बार ‘ठाकुर जी’ ‘ठाकुर जी’ कह उठता था ।

पत्ते हिल रहे थे । फूल मुस्करा रहे थे । सभी लोग आलस्य भरे नयनों को खोल रहे थे । लेकिन एक भोली बालिका अब भी सोई पड़ी थी और उसके हृदय की गति के साथ-साथ मोती की माला भी हिल रही थी ।

उसके बिखरे बाल सवेरे की हवा के झोंकों में उड़ रहे थे और शय्या की सूखी हुई कलियों पर बिखर-बिखर जाते थे । प्रकाश रूपी बालिका झरोखे से झाँक रही थी लेकिन वह उस बालिका के रत्नों के गहनों में फँसी सी दिखाई देती थी ।

एक किरण उसके उड़ते हुए आँचल से आँखमिचौनी सी खेल रही थी । कभी वह उसके खुले अंगों से क्रीड़ा करती थी ।

पृ० ५७ “एक जरा

मेरे मन में ॥”

शब्दार्थ—बदन=मुख । चल-दुकूल=चंचल वस्त्र । दृग-अम्बुधि=नेत्र रूपी सागर । पलक-गगन=पलक रूपी आकाश—सांग रूपक अलङ्कार । आशंका=चिन्ता ।

भावार्थ—एक किरण उसके मुख का स्पर्श कर उसे जगाने की कोशिश करती थी । लेकिन जैसे ही मेहर करवट बदलती वह डर कर बालों में छिप जाती थी । वह बहुत सुन्दर थी । उसका आँचल लहरा रहा था । उसके नेत्र रूपी सागर से पलक रूपी आकाश के किनारे मिले हुए थे । आँखें बन्द थीं ।

पास ही सलीम खड़ा था । उसके नयन मेहर के गुलाबी गालों की शोभा देख-देख कर मस्त बने जा रहे थे । आखिर किरण रूपी सुन्दरियों ने उसे जगा ही तो दिया । मेहर ने हाथ उठाकर जमुहाई ली और शरीर तोड़ा ।

अपने वस्त्रों को संभाल कर उसने आँखें खोलीं और जब सलीम को सामने देखा तो चकित होकर चुपचाप रह गई । सलीम ने कहा, “मुझे

माफ करना मैंने तुम्हारी नींद तोड़ दी है। कच्ची निद्रा जगा कर तुम्हें बहुत परेशान किया है।

तुम सो लो, नींद पूरी करलो मैं जा रहा हूँ। यों ही इधर निकल आया था। अब मैं घर जाता हूँ। अभी तक मैं बगीचे में तुम्हारा इन्तजार करता रहा। जब तुम्हें आने में देर हो गई तो मेरे मन में चिन्ता पैदा हुई।

“माना नहीं

न जावें ॥”

शब्दार्थ—विभोर=लीन।

भावार्थ—मैंने दिल को बहुत समझाया कि मेहर आती ही होगी लेकिन वह नहीं माना और यहाँ तक मुझे खींच ही लाया। इसीलिए यहाँ आगया। अब मैं घर जाता हूँ तुम अपनी नींद पूरी करलो।

जब तक तुम आओगी तब तक मैं कलियाँ चुन रखूँगा। तुम आकर उनका हार बनाना। लेकिन आज तुम मुझे हार न पहनाना जिसको तुम चाहोगी उसे ही मैं पहना दूँगा।”

मेहर ने उत्तर दिया “अब तुम मुझे शर्मिन्दा न करो। पता नहीं आज कैसी नींद आ गई जो इतना दिन चढ़ आया और मुझे खबर भी नहीं हुई। पता नहीं क्यों कल देर तक जागती रही और नींद नहीं आई। अभी तक मैं स्वप्न ही देखती रही इसी से नहीं जग पाई।

मैं उसी स्वप्न में लीन थी कि नींद टूट गई। और स्वप्न की झूठी सम्पत्ति नष्ट हो गई। तुम चलो मैं अभी मुँह धोकर आती हूँ। फिर मिलकर हार बनाएँगे। तुम कलियों पर पानी के छींटे दे देना ताकि कलियाँ न मुरझा जाएँ।”

पृ० ५८ “जाते हैं

नहीं बोलूँगा ॥”

शब्दार्थ—घातें-प्रतिघातें=चोटें। विह्वल=व्याकुल। दोल=झोंका।

भावार्थ - सलीम ने कहा “मैं जाता हूँ लेकिन अपने सपने के बारे में भी तो कुछ बताओ। वे कौन से सपने देखे हैं जिनसे तुम इतनी प्रभावित हो;”

मेहर ने कहा “मुझे दुख है मैं बता नहीं पाऊँगी। बड़ी विचित्र बातें थीं। उनकी चोटें अभी तक मन को व्याकुल बनाए हुए हैं।”

सलीम ने कहा “मैं ऐसे नहीं मानूँगा। बिना सुने मैं व्याकुल हूँ।

तुम्हारी इस बात को सुनकर तो सपना सुनने की इच्छा और भी बढ़ गई है ।”

मेहर बोली “मैं हाथ जोड़ती हूँ । जिद्द मत करो । सपने तो मैं रोज ही देखा करती हूँ । लेकिन तुम्हीं बताओ मुझे सपने याद भी रहते हैं क्या ? सपने तो बेकार उड़ान है । बड़े अजीब होते हैं । मैंने तो हंसी-हंसी में बात कह दी और तुम उसे ही पकड़ कर बैठ गए ।

देखो कल जो भूला भूले हैं तो अभी तक मेरी बांह भारी है । उस भोंके में मेरी लॉग की कील भी कहीं गिर गई है ।”

सलीम ने कहा “तुम टालो मत । तुम अवश्य ही सपना सुनाओ । मैं तुम्हारी बात किसी से न कहूँगा । और अगर तुम नहीं सुनाओगी तो मैं कभी भी तुम से न बोलूँगा ।”

“रुष्ट

भरके ॥”

शब्दार्थ—सुरपुर=स्वर्ग ।

भावार्थ—मेहर ने कहा “नाराज मत होओ । लो सपना सुनाती हूँ । रात को परियाँ मेरे पास उड़ती आईं और मुझे देखकर हंसने लगीं । एक ने कहा चलो स्वर्ग चलें वहाँ हम तुम्हें अपनी रानी बनाएँगी । दूसरी ने कहा वहाँ मत जाना तुम्हें वहाँ परेशानी होगी ।

तीसरी ने कहा कि मैं इसका देश निकाला दे दूंगी और चौथी मुझे ताज दिखा कर बोली ‘क्या तुम इसे पहनोगी ?’ मैंने मना कर दिया तो वे सब मुझे ताज पहनाने आईं । वह देखो उसकी परछाईं अभी तक दिखाई देती है ।

हाँ अब तो कोई भी नहीं है । फिर उन सब ने लिपट कर मेरी चूड़ियाँ तोड़ दीं । और आगे मुझे कुछ याद नहीं आता कि किसके वस्त्र के साथ मेरे आंचल को बांध दिया ।”

इतने में उसके पिता ने उसे बुलाया । वह उसकी बात सुनने के लिए घबराई सी चल दी । सलीम भी चुपचाप उठकर चल दिया । लेकिन वह चिन्ता से परेशान था । उसके पाँव मन-मन के भारी हो गए थे और आगे बढ़ते ही न थे ।



आठवां सर्ग

कथासार—जब से जमीला अकबर से मेहर और सलीम के प्रेम की सूचना देकर आई थी तभी से अकबर परेशान था। यह निश्चय तो उसने उसी समय कर डाला था कि वह मेहर का विवाह अली कुली (जिसे शेर अफगन भी कहते हैं) के साथ कर देगा। अब वह अपने निश्चय को कार्यान्वित करने लगा।

इधर एक बार जमीला और मेहर दोनों मिलीं। जमीला ने मेहर से कहा “देखो तो कैसा मनोहर वसन्त आ गया है। सारी प्रकृति खुशी से झूम रही है। फूल रस के प्याले भर भर कर उसे पिला रहे हैं। भंवरो की गुंजार कैसी मधुर है। सारा संसार आनन्द और शोभा में लीन है।

हे मेहर ! तुम्हें निकाह मुबारिक हो। तुम्हारा जब विवाह हो जाएगा तो हमें तो तुम भूल ही जाओगी। अपने पति के प्रेम में ही खोई रहोगी। हमेशा उसके गले का हार बनी रहोगी। तुम्हारी सारी आशाएँ और इच्छाएँ पूरी होंगी। मैं तुम्हें बधाई देती हूँ और इच्छा करती हूँ कि तुम्हारा जीवन पूरे सुख से बीते।

जब तुम्हारा विवाह होगा तो मैं अपने हाथों से तुम्हारे बाल संवारूँगी, तुम्हें सजाऊँगी। मोती से मांग अलंकृत करूँगी। तुम पर माणिक निछावर करूँगी। मेंहदी लगाकर तू अपने हाथों और पैरों को लाल करले।”

जमीला की ये बातें मेहर को अच्छी नहीं लगीं। लेकिन वह अपना यह भाव छिपा कर बोली—“कैसा ब्याह ? तू किसके ब्याह की बात कर रही है। तू मेरी पुरानी सखी है इसीलिए शायद मजाक कर रही है। लेकिन जो सच्चाई है वह तो मैं जानती हूँ। तुम्हारे इस सौंदर्य के लिए कितने ही लोग तरसते हैं। कई तुम पर जान तक देने को तैयार हैं। तुम उनमें से किसी एक को चुन लो और उससे विवाह करलो। फिर सोहाग की रात में खूब आनन्द

मनाना । लेकिन मुझे भी याद रखना ।”

मेहर की ये बातें सुनकर जमीला के तन-बदन में आग लग गई। अब वह अपना क्रोध न संभाल सकी और बोली “अरी मेहर तुम इतनी भोली तो न बनो । मैं तुम को खूब जानती हूँ । तुम दुनिया से अपना रहस्य छिपा सकती हो लेकिन मुझसे नहीं । हौं मुझ पर सब मरते हैं । तुम्हें इससे क्या ? ऐसा ही सौंदर्य होना चाहिए । और जो मुझ से जलते हों उन्हें कभी सुख न मिले ।

तुम यह समझती होगी कि सलीम पर जादू तो तुम्हारा चल ही गया है । और अब तुम उससे निकाह करके उसके गले का हार बन जाओ । तुम सौदागर की लड़की हो । फिर तुमने कुमार पर नजर डालने की हिम्मत कैसे की । लेकिन मैं यह कभी न होने दूँगी । मैं तुम्हें और सलीम को अलग करवा के ही छोड़ूँगी ।

देख तुम्हें बताऊँ मैंने क्या किया है ? मैंने तुम्हारा यह भेद अकबर तक पहुँचा दिया है और उन्होंने तुम्हारे लिए वर भी तलाश कर लिया है । अब तुम शीघ्र ही अलीकुली के साथ बाँध दी जाओगी । अब भी तुम अपनी औकात पर आ जाओ । आगे बढ़ना बन्द कर दो । सलीम को भुला दो ।

और जब तुम चली जाओगी तब दुनिया मेरी होगी । मैं सलीम पर भी ऐसा जादू डालूँगी कि वे कभी निकल नहीं पाएंगे । फिर मैं अपने जीवन की सारी इच्छाएँ पूरी कर लूँगी । तुम्हारे हाथ सिवाए जलने के और कुछ नहीं आएगा । अब तो तुम सब बात समझ गई न । तुम्हारा ही ब्याह होगा और अली कुली के साथ । तुम्हें ब्याह की बधाई हो ।”

मेहर ने कहा “अच्छा जो भाग्य दिखाएगा वह देखूँगी । न जाने भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है ?” यह सुनकर जमीला-क्रोध से पैर पटकती वहाँ से चल दी ।

उसके जाने के बाद मेहर सोचने लगी “यह अचानक मुझ पर कैसे बिजली आ गिरी है ? यह क्या हो गया । वह ईश्वर जो सारे संसार का नियंत्रण करता है, सारे कार्यों को नियम पूर्वक चलाना है, उसी ने तो मेरे भाग्य के अक्षर भी लिखे हैं । वह मेरी किस्मत को क्यों नहीं संवारता ।

लेकिन मुझे तो ऐसा लगता है कि संसार में दुख के साथ सुख है। फूलों के साथ काँटे हैं। अच्छा जो भी होगा सब देखा जाएगा।”

इसके बाद मेहर और अली कुली के विवाह का निश्चय हो गया। मेहर के घर ढोलक और शहनाई बजने लगी। शादी की चहल पहल हो रही थी। शादी के दिन बारात आई और इनका विवाह हो गया।

विवाह के वर्णन में कवि ने प्रकृति का सुन्दर चित्रण किया है। यही इस 'सर्ग' की मुख्य विशेषता है।

पृ० ५६ “आया

गाओ ॥”

शब्दार्थ—सुमन=फूल। मधुशाला=शराब-खाना। मधुप=भँवरा। सुमन=मंजीरे=फूल रूपी मंजीरे—रूपक अलंकार। सरसी=नदी। रसाल=आम।

भावार्थ—जमीला मेहर से कहती है “फिर से बगीचों में वसंत ऋतु छाने लगी है। तुम मेरे साथ मिलकर इस खुशी में गाओ। हे फूल तुम शराब-खाना बन जाओ और प्रेमी भँवरे को सुगन्धि रूपी शराब पिला दो। हे कलियों तुम भी मुस्कराओ, खिल उठो। हे पत्तो तुम फूल रूपी मंजीरे पर मधुर ताल देते चलो।

हे नदी तुम भी वसंती वस्त्र धारण करके मस्ती की चाल चलो। और हे कोयल तुम भी पंचम की सुरीली तान छेड़ दो। मलय पवन गन्ने का रस पी-पीकर मस्त हो रहा है। आम में बौर आ गई है और वह मटर के फूलों से आँख लड़ा रहा है।

हे सखि आओ हम भी झूमर खेलें। बागों में वसंत आ गया है।

पृ० ६० “जिनके

बघाई ॥”

शब्दार्थ—मधुप-अधर=भँवरे के होंठ। दिनकर=सूर्य। स्रोत=भरने। अनिल=वायु। पीत=पीली। अलि=भँवरा। मुक्तावलि-सुख-सपने=मोती रूपी सुखमय सपने—रूपक।

भावार्थ—तुम फूल मत लाओ वरन् ऐसी डाली लाओ जिसकी कलियों के प्यालों तक भँवरों के होंठ न पहुँचे हों। सूर्य अभी जिसके रस के भरने को नहीं पी पाया हो। जिसकी सुगन्धि अभी पंखुड़ियों के घूँघट में छिपी दुल्हिन सी लगती है और जो अभी तक वायु तक नहीं पहुँची।

जिसकी पीली पराग अभी उड़ी नहीं, किसी के आँखों में नहीं पड़ी और जो अभी रातों में भंवरे के वियोग में रोई नहीं है । मैं इन्हीं कलियों के साथ-साथ मोती रूपी सुखमय सपनों को भी गूँथूँगी और आशा के तारों में पिरोऊँगी ।

फिर से बसन्त आया है । सब मिलकर गाओ । और मैं भी तितली के साथ नाचती चली आ रही हूँ । हे मेहर ! तुम्हें विवाह की बधाई हो ।

“यह अपनी

सभी बधाई ॥”

शब्दार्थ—कुंतलराशि=केश ।

भावार्थ—जब तुम यह माला प्रियतम के गले में डालोगी तो तुम मुझे भूल जाओगी और उन्हीं के साथ आनन्द मनाती रहोगी । तुम अपनी यह भेंट उन्हीं को आनन्द के साथ देना । स्वयं भी उनके गले का हार हो जाना और उनके होठों का रस पीना ।

अब तुम सोहाग रात में खूब आनन्द मना लेना और वहीं पर अपनी आशाओं की कलियाँ खिला लेना । उस समय सब लोग पंचम के मधुर स्वर में गीत गाएँगे । तुम्हें निकाह मुबारक हो ।

मैं अपने हाथों से तेरे केश संवारूँगी । मोतियों से तेरी माँग सजाऊँगी और तुम पर माणिक निछावर करूँगी । तू भी अपने हाथों और पैरों को मेहंदी लगा कर लाल कर ले और अपनी आँखों में मस्ती भर ले ।

तुम पान खा लो जिससे तुम्हारे होठों पर उसकी लाली चढ़ जाए और उस समय स्वयं जवानी उठ-उठ कर तुम्हारी अनोखी शोभा देख रही होगी । और तुम प्रेम का नाता जोड़कर दुल्हिन के रूप में आनन्दित होगी । तुम्हें बधाई हो ।”

पृ० ६१ “कैसा ब्याह

लाख बधाई ॥”

शब्दार्थ—ठिठोली=मजाक । हमजोली=सखी ।

भावार्थ—मेहर ने उत्तर दिया “तुम कैसे ब्याह की बात कर रही हो ? किसका ब्याह हो रहा है ? तुम मजाक कर रही हो । तुम सखी होकर भी मुझे ताने मार रही हो । कितने ही लोग रोज तेरे पाँव की धूल लेने आते हैं और तेरे वियोग में धुल-धुल कर मरते जाते हैं ।

हे सखी उन्हीं से जाकर ब्याह का प्रस्ताव करना और सोहाग की रात में खूब आनन्द मनाना । और हे सखि ! प्रेम के नाते के बाद हमें न भूल जाना । ब्याह मेरा नहीं तुम्हारा है ! तुम्हें लाखों बघाईयाँ हों ।”

“ऐसी

आई रानी ॥”

शब्दार्थ—दूध की धोई=पवित्र । थाह=गहराई । छुक्का-पंजा=चालें । ललना=स्त्री ।

भावार्थ—जमीला ने उत्तर दिया, “तुम ऐसी पवित्र और भोली भाली न बनो । मेरे सिवा कोई भी तुम्हारी गहगाई नहीं जान सकता है । हॉ-हॉ जाओ-जाओ सलीम की छाती से लग जाओ उसे छाती से लगा लो । तुम लाख छिपाने की कोशिश करो लेकिन तुम्हारा यह भेद मुझे मालूम हो ही गया है ।

मैं तुम्हारी सब चालें पहचानती हूँ । मेरे सामने अभी तुम बची हो । अभी तो और सीखो । मैंने जिस ओर हाथ बढ़ाया वह मेरे हाथ से निकल नहीं पाया । तुम भी मेरे हाथों से नहीं बच सकती । हॉ ठीक है मुझ पर बहुत लोग मरते हैं । सौन्दर्य हो तो ऐसा ही हो । और जो मुझे देख-देख कर जलते हों उनका बुरा हो ।

और जा तुम्हें जिस सलीम का अभिमान है वह तेरे हाथ नहीं आएगा । वह तो मुझ जैसी दूसरी स्त्री को अपनाएगा, तुम्हें नहीं । सलीम पर मेरा अधिकार है । तू कैसे उसे अपना सकती है ? तू सौदागर की लड़की है । फिर भी बादशाह के लड़के पर नजर डालती है ।

यह फारस नहीं जहाँ ऐसा होता है । मुगल वंश में यह रीति नहीं कि कुमार मामूली लड़की से विवाह करे । तुम क्रोध से मेरी ओर क्या देख रही हो । अब तो तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं बचा है । तू उस मामूली सिपाही अली-कुली के साथ ब्याही जाएगी और सलीम की तो परछाईं भी न देख पाएगी ।

तू मेरे सामने है क्या ? मैं तुझ जैसी लड़कियों से तो पानी भरवाया करती हूँ । तू क्या मुझे आँख दिखाकर रानी बनने आई है ।

पृ० ६२ “देख

पुनः बधाई ॥”

शब्दार्थ—हाथों के तोते उड़ते=परेशानी आती । तूती बोलेंगी=अधिकार चलेगा ।

भावार्थ—मैंने अभी-अभी अकबर को वह पट्टी पढ़ाई है कि तुम्हें देश निकाला मिलेगा और मैं रानी बनूंगी । अब तक तूने खूब आनन्द के कबूतर उड़ाए हैं । लेकिन मैंने ऐसी चोट की है कि अब तू परेशानियों में फँस जाएगा ।

तेरे जाने के बाद मैं नई चाल चलूंगी । बस सर्वत्र मेरा अधिकार चलेगा । वह सलीम मुझ पर ही मरने लगेगा । तू मुझे उल्लू बनाने आई थी । लेकिन यह नहीं जानती कि मैं उड़ती चिड़िया पहचान सकती हूँ । कोई मेरे हाथों से बच जाए तब मैं जानूँ । अब तू बच नहीं सकती ।

तू सलीम पर जादू डाल कर उसे फँसाने की कोशिश कर रही थी । लेकिन जो चालाक चंडूल थे वे उड़ गए । तेरे हाथ अब कुछ नहीं आएगा । तेरा बार तो खाली गया है । अब तू मेरा बार बचाना । अब तो जोर दिखाना बेकार है क्योंकि तू अब पूरी तरह से हार चुकी है ।

मैंने तो तुझ से सच्ची बात कही थी । तू क्यों नाराज हो गई है । पता नहीं कब का तेरे मन में मुझ पर गुस्सा है जो तूने आज इस प्रकार निकाल दिया है । जो मुझे अपने दिल में बिठाता है मैं उसे हर पर जगह देती हूँ । और जो मेरे साथ चालाकी करता है मैं उसका पत्ता ही काट देती हूँ ।

बुरा मानने से कोई लाभ नहीं । तुम्हीं ने बात बढ़ाई है । तुम जाओ और पति के साथ आनन्द मनाओ । मैं तुम्हें फिर बधाई देती हूँ ।”

“हटो

निरखता ;”

शब्दार्थ—भावी=होनी । घटक=घड़ी, समय ।

भावार्थ—मेहर ने उत्तर दिया, “तुम जाओ । जो होना है वह तो होगा ही । तुम्हारी कोशिशों से कुछ नहीं होगा । मैंने बाँते जीवन में बहुत दुख देखा है और जो आगे आएगा वह भी देखूंगी ।”

जमीला अच्छा कह कर तेजी से चल दी । मेहर वहीं पर सोचती रही । चिन्ताओं से उसका मुख पीला पड़ गया था । वह सोचने लगी—

“आज अचानक क्या होगया है ? यह बिजली मुझ पर कहाँ से टूट पड़ी ? आज कैसे एकाएक मेरी किस्मत फिर गई है ? मुझे ऐसा लगता है जैसे किसी ने मुझे पर्वत की चोटी से गिरा दिया हो । यह क्यों मेरी आँखों के सामने अंधेरा छाता जा रहा है ।

क्या भाग्य चक्र वही करेगा जो जमीला ने कहा है ? क्या यही मेश भाग्य होगा ? क्या इन सब की दुखभरी चाल का कोई समय नहीं ? जब चाहें ये कठोर हो जाते हैं । क्या वह खुदा जो तारों को अपने मार्ग पर चलाता है, जो सदैव नक्षत्रों की चाल देखा करता है—(यह प्रसंग आगे भी चलता है ।)

पृ० ६३ “वह जो सुधारे उसको !”

शब्दार्थ—उदधि=सागर । नभ सागर=आकाश रूपी सागर—रूपक । विधान=नियम । आकाश-यंत्र=आकाश रूपी मशीन—आकाश शवर का स्थान कहलाता है । धरा=धरती । अनिल=वायु । ललाट=माथा, भाग्य । क्रूर=दुष्ट ।

भावार्थ—वह खुदा जो सागर को अपनी मर्यादा से बाहर नहीं होने देती, वह जो आकाश रूपी सागर में सूर्य और चन्द्रमा रूपी नाव को नियम-पूर्वक खेता चला जाता है, वह जिसके बनाए नियम के अनुसार छो़ो ऋतुएं आती जाती हैं, वह जिसके आकाश रूपी यंत्र में वीणा के से स्वर पैदा होते हैं ।

वह जिसके तालों पर नदी कल-कल ध्वनि करती चली जाती है, जिसकी शोभा को पाकर धरती में फल-फूल आते रहते हैं, वह जिसकी आँखें तारों के दीपकों के रूप में चमकते हैं, जिसका प्रकाश असंख्य सूर्यों और चन्द्रमाओं में फूटा करता है ।

वह जिसके भरने रूपी माला को पर्वत फेरा करता है और उसका गुण-गान किया करता है, जिसके दर्शन की इच्छा लिए वायु इधर-उधर घूमा करती है, जिसने ब्रह्मांडों का निर्माण करके उनके चक्रों को निश्चित किया है, उसी ने ही तो मेरे भाग्य के अक्षर लिखे हैं ?

जब मेरा भाग्य उलटा चल रहा है तो वह उसे क्यों नहीं संवारता, सारा संसार मेरा विरोध कर रहा है फिर वह क्यों उसे सही रास्ते पर नहीं लाता ।

“न्यायी

होकर ?”

शब्दार्थ—अनरीत=अन्याय । मरु=रेगिस्तान । रश्मिजाल=किरणों का समूह । जरजर पंजर=दुर्बल शरीर । जरा=बुढ़ापा । शूल=काँटा, दुख । जीवन-सरि = जीवन रूपी नदी ।

भावार्थ—वह तो न्यायशील है फिर क्यों संसार में इस प्रकार का अन्याय देखा जाता है ? इसीलिए उसकी कठोरता देख-देख कर कभी बड़ा दुख होता है । उसने सागर को खारा बना दिया है और सारी दुनिया प्यासी रहती है । जल में तो जल बरसता है और रेगिस्तान सूखा रहता है । यह अन्याय नहीं तो और क्या है ?

किरणों के समूह के साथ छाया लगी रहती है प्रकाश के साथ-साथ अंधेरा भी लगा रहता है । मधुर हंसी है लेकिन साथ ही लोगों के नयनों से आँसू भी बहते रहते हैं । जवानो आती है तो फूल के समान खिला हुआ शरीर लेकर आती है । लेकिन कुछ दिन बाद ही बुढ़ापा आता है । बाल सफेद हो जाते हैं । और शरीर दुर्बल होकर ढाँचा भर रह जाता है ।

एक ओर तो कोई बड़ा स्वस्थ दिखाई देता है । उसके गालों से शराब सी लालिमा छलकती दिखाई देती है । दूसरी ओर कोई स्त्री बीमार पड़ी है । उसे बीमारी की राक्षसी ग्रस लेती है ।

दिन के साथ काली रात लगी रहती है । सुख के साथ दुख के काँटे भी हैं । जिस खुदा ने फूल दिया है उसी ने काँटों की बाढ़ भी लगा दी है । तो क्या जीवन रूपी पत्नी के दुख और सुख रूपी दो पर हैं ? क्या दुख और सुख हमेशा जीवन के साथ रहते हैं ? क्या जीवन रूपी नदी सुख और दुख के दोनों किनारों के बीच बहती रहती है ?

पृ० ६४ “यदि काया

बर के ॥”

शब्दार्थ—स्वाँग=विविध रूप । नौशा=दूल्हा । चिलमन=पर्दा ।

भावार्थ—यदि शरीर का यही धर्म है तो सुख-दुख सभी सहन करूँगी और खुदा जैसे भी सुख में या दुख में रखेगा पड़ी रहूँगी ।” आगे कवि उसके विवाह का वर्णन करता है ।

घर में ढोलक बज रही है । बाहर शहनाई बज रही है । नौबत एक क्षण

भर के लिए भी नहीं रुकती। स्त्रियाँ घर में नाच रही हैं। विवाहोत्सव के गीत गा रही हैं। विविध कलाओं को दिखाती हुई—विविध रूप बनाती हुई मनोरंजन कर रही हैं।

कितने ही बहुमूल्य शामियाने लगे हुए हैं। अनेक डेरों को देखकर तो ऐसा मालूम होता है जैसे एक नई दुनिया ही बस गई हो। रंगीन भाङ फानुसों की रोशनी से सारी महफिल जगमगा रही है। सोने और चाँदी के समान तेजी से चमक रहे हैं।

सामने से बारात आ रही है। दूल्हा रंगीन जोड़ा पहने घोड़े पर चला आ रहा है। मोती के सेहरे के पदों में वह धीरे-धीरे मुस्करा रहा है। ऊँटों पर बाजे वाले बाजे बजा रहे हैं। घोड़ों को गहनों से सजा दिया गया है। हाथी पर दौड़े हैं और जरीदार भूल लटक रहे हैं।

और नौकर चाकर ब्याह का सामान लादे हुए आगे पीछे चले आ रहे हैं। पयादे बर्दी पहने चले आ रहे हैं और बल्लम, आसा, नेजे आदि लिए हैं।

फुलवारी भी साथ चली आ रही है। दीनारे लुटाई जा रही हैं। आतश-बाजी छोड़ी जा रही है। चरखों, अनार, फुलभड़ियाँ आदि चलाए जा रहे हैं। फिर दूल्हा महफिल में जाकर बैठ गया। नाच रंग होने लगा। चारों ओर ऐसा समा बधा था कि मालूम होता था कि आनन्द की धारा उमड़ी पड़ती है।

समय होने पर दूल्हा ने अपने धर्म की रीति के अनुसार विवाह का कार्य किया और मेहर को ब्याह कर अपने घर ले आया।

“कुसुम-कलश

बनी हुई ॥”

शब्दार्थ—कुसुम कलश=फूल रूपी घड़े। श्रम-सीकर = पसीने की बूँद। किसलय-घूँघट=कौपल रूपी घूँघट। सांग रूपक अलंकार।

भावार्थ—लताएँ भी फूल रूपी घड़ों को लिए हुए थीं और ओस के रूप में पसीने की बूँदों से युक्त थीं। वे मुग्धा दुलहिन के समान कौपल रूपी घूँघट में छिपी हुई थीं। उपमा अलंकार।

शब्दार्थ—माणिक का चाल=तारों भरा आकाश । खग बालाएँ=छोटी पक्षियाँ । मजु अटा=सुन्दर अटारी । कनक पत्र=सोने के पत्ते—सूर्य की रोशनी से पत्तों का रंग भी सुनहला सा हो जाता है । निशामुख=चन्द्रमा । प्रमोद-सागर=आनन्द का सागर—रूपक अलंकार । दृग-तरियाँ=नेत्र रूपी नावें । सरित-मौग=नदी रूपी मौग—रूपक । क्षणदा=रात । तारक माला=तारों का हार ।

भावार्थ—वे लताएँ दुलहिन के समान ही वर की राह देख रही हैं । उसके स्वागत के लिए तैयार खड़ी हैं । और फिर थक कर जमुड़ाई लेती हैं और वृक्ष की छाया रूपी धूप-घड़ी को देखती हैं कि कितना समय हो गया । संध्या की लालिमा से नदी के भीतर की रेत का एक-एक कण दीप के समान चमकने लगा । वह सोना छुटा कर तारों भरे आकाश के रूप में माणिक का चाल लेकर आई है ।

लहरें थिरकती हुई, नाचती हुई मधुर गीत गा रही हैं । छोटी पक्षियाँ भी सुन्दर अटारी पर बैठ कर गीत गा रही हैं । सरसो पीले वस्त्र धारण किए खड़ी है । आमों के ऊपर भी बौर आ गई है । भँवरों के समूह अपनी गुंजार के रूप में वेद मंत्रों का पाठ कर रहे हैं ।

धानी रंग की तिनपतियों बाल के समान कानों में स्वर्ण फूल पहने हैं । शंखपुष्पी भी माला लिए हुए दूल्हा को पहनाने तैयार खड़ी है । सूर्य ने प्रकृति रूपी स्त्री के साथ पुरुष को आदर के साथ बिठा दिया तथा उसने पुरुष के स्वागत में उसके मार्ग में सुनहले पत्तों के पाँवड़े बिछा दिए हैं ।

चन्द्रमा अपनी लालिमा के रूप में सिंदूर लेकर आया और भँवरे ने वेद मंत्र का उच्चारण किया । आम को जीवन का फल प्राप्त हुआ और माधव के सिर पर मोर बैठ गया । इस पंक्ति का दूसरा अर्थ यह भी प्रकट होता है जैसे कृष्ण के सर पर मोर पंख शोभा पा रहा हो ।

तितलियाँ वर और वधू को लेकर भँवर दिलवा रही हैं ? और उस आनन्द के सागर में नयन रूपी नावें भिम्भरी खेल रही हैं । दूल्हा ने संध्या

के समय नदी रूपी माँग में सिंदूर भर दिया और रात ने आकर उसे तारों की माला पहना दी ।

यहाँ के प्रकृति वर्णन को समझने के लिए यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि इस वर्णन के द्वारा कवि ने मेहर और अलीकुली के विवाह का वर्णन किया है । इसीलिए उनके विवाह की जितनी भी क्रियाएँ हैं वे सब प्रकृति में दिखाई देती हैं ।



नवाँ सर्ग

कथासार—आधी रात का समय था। घोर अंधकार छाया था। ऊपर आकाश में मेघ घिरे थे। इसीलिए सब तारे छिप गए थे और अन्धकार भी घना हो गया था। प्रकृति के जो पेड़-पौधे गर्मी के कारण सूख गए थे वे भी मेघों के आगमन से हर्षित हैं। जब मेघ गरजते थे और बिजली चमकती थी तो मानो सारी प्रकृति हर्ष से भर जाती थी। नई लताएँ बादल की गरज के साथ-साथ नाचने लगीं। जुगनू चमक रहे थे। मोर नाच रहे थे।

ऐसे समय में मेहर अपने नए घर में लेटी थी। वह दीपक पर पतिंगों का जलना देख रही थी। पतिंगे रह-रह कर दीपक पर झपटते थे और वह निटुर उन्हें जला-जला कर राख कर देता था। फिर भी पतिंगों की भीड़ और उनके जोश में कोई कमी नहीं थी। कई पतिंगे प्रेम की इस आग में जल चुके थे। उनके जो पंख गिरे थे उनके साथ हवा खेल रही थी। मेहर इस कठोर दृश्य को और नहीं देख सकी। इसलिए उसने दीपक बुझा दिया और ठंडी सॉस लेकर कुछ सोच में पड़ गई।

फिर जब उसने आँखें खोलीं तो देखा कि कोई सामने खड़ा है। ध्यान से देखने पर उसे ज्ञात हुआ कि कोई नकाब पहने चला आ रहा है। यह देख उसने तुरन्त तलवार खींच ली और कड़क कर बोली, “ठहरो कौन आ रहा है ? क्या कारण है ? अगर एक पाँव भी आगे बढ़ाया तो तलवार सीने से पार कर दूँगी।”

तब नकाब खोल कर सलीम ने कहा “लो देखो और पहचानो। मैं तुम्हारा सलीम हूँ। इसलिए आया हूँ कि शेर अफ़ग़न को मारकर हम अपना रास्ता साफ कर लें। तुम मेरी मदद करो तो यह कार्य बड़ी आसानी से हो सकता है। और फिर हम तुम दोनों कहीं चले चलेंगे और आनन्द से जीवन बिताएँगे।”

मेहर ने उत्तर दिया "क्या तुम सलीम हो ? लेकिन दूसरे के घर तुम डाकुओं के समान आए और इतना बुरा उद्देश्य लेकर आए । मुझे तुम से कभी ऐसी आशा नहीं थी । सचमुच मुझे तुम से धोका हुआ है । लेकिन अब सावधान हो जाओ और तुरन्त यहाँ से निकल जाओ । अगर एक कदम भी आगे बढ़ाया तो मैं सब को जगा दूँगी और तुम पकड़े जाओगे । तुम मेरे घर आकर मेरे पति का ही खून करना चाहते हो । जाओ तुरन्त निकल जाओ ।"

सलीम बोला 'हे मेहर क्या मैं आज पराया हो गया हूँ ? आँखें खोल कर देखो मैं तो वही सलीम हूँ । क्या मेरे चुम्बन तुम्हारे होठों पर अंकित नहीं हैं ? कल तक हम तुम दोनों एक साथ बिहार करते थे और आज तुम मुझ से यह कहती हो ।

क्या तुम यह चाहती हो कि मेरे अधिकार की चीज कोई और ले जाए । मैं लुट जाऊँ और फिर भी चुप रह जाऊँ । तुमने मेरा दिल चुरा लिया है और तुम्हीं मुझको चोर कहती हो । तुम अगर मुझे कैदी ही बनाना चाहती हो तो अपनी बांहों में भर लो । पहले शेर अफगन को दिखा दो—तो मैं उसे खत्म कर दूँ । फिर तुम जैसा कहोगी वैसा ही करूँगा ।'

मेहर ने कहा 'जो बातें तुम्हें याद आ रही हैं वे सब बचपने की थीं । आज उनका कोई मूल्य नहीं रह गया । जब से विवाह हुआ सब समाप्त हो गया । हे सलीम ! आज तुम जिससे बात करते हो वह परस्त्री है । अब तो मैंने अपने कर्तव्य पर अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया है । हों अपना प्रेम भी ।

यहां तुम्हारे राज्य की सीमा नहीं है । यह मेरा घर है । यहाँ मेरा अधिकार है । मैं तो अपने घर की रानी ही भली हूँ । मुझे देश की रानी बनने की आवश्यकता नहीं है । मैं तुम्हें साफ-साफ बता रही हूँ कि पहले तुम मुझे मार डालो तभी तुम उन तक पहुँच पाओगे । भलाई तो इसी में है कि आप चुपचाप अपने घर चल दें । अगर आप एक क्षण भर भी रुक गए तो समझो कि आपकी सारी इज्जत नष्ट हो जाएगी । आप मेरी प्रार्थना मानते हैं या किसी को आवाज लगाऊँ । अगर आप खून के ही शौकीन हैं तो मैं हाथ

दिखाने को भी तैयार हूँ ।'

यह सुनकर सलीम बड़ा चकित हुआ और दुख भरे स्वर से बोला—'अरे मेहर तुम्हारा हृदय पत्थर के समान कठोर है । मुझे इसकी आशा तक नहीं थी । मैं तुम्हारे बिना तो सगाट बन कर भी असफल हूँ । चलो मैं हारा और तुम जीती । मैं तुम से अन्तिम बिदाई माँगता हूँ । मेरा अपराध क्षमा करना । पता नहीं स्त्री भी क्या रहस्य है ?'

यह कह कर वह चुपचाप घर की ओर चल दिया । उसके पीछे पहले तो मेहर खड़ी रही फिर मूर्च्छित होकर गिर पड़ी ।

इस सर्ग में मेहर के चरित्र का अच्छा विकास हुआ है । वह कर्तव्य के लिए अपने प्रेम का बलिदान कर देती है ।

पृ० ६६ "अर्घनिशा

रंग बरसाने ॥'

शब्दार्थ—निबिडतम=घना अन्धकार । अपर-लोकवासी=ऊपर के लोक के रहने वाले । वारिद-तारों पर=मेघ रूपी तारों पर । जंगम=चलने वाले जीव । विरहानल=वियोग की आग ।

भावार्थ—आधी रात थी । सारे संसार में घोर अन्धकार छाया है । हर तरफ केवल अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता था । ऊपर के लोक में रहने वालों के नेत्र रूपी तारे भी नींद के कारण बादल रूपी पलकों में छिप गए थे—सौंगरूपक अलंकार ।

वर्षा ऋतु ने बादल रूपी तारों पर बिजली को दौड़ाया और आनन्द के साथ अपने मित्र पेड़-पौधों को अपने आने की सूचना दी । जो बड़ और चलने वाले प्राणी वर्षा के वियोग की आग में जल गए थे उन्हें भी वर्षा ने जल का सन्देश देकर फिर हरा-भरा कर दिया ।

वनस्पतियाँ आनन्द में भर कर मेघों से मिलने को ऊपर उठी । मेघ ने भी आनन्द के साथ उनके हाथों से हाथ मिला दिए । वर्षा होने लगी और वर्षा की धाराओं को ही कवि ने मेघों के हाथ माना है । नई लताएँ पुलकित होकर नाचने लगीं और बादल भी बिजली के साथ गर्जन कर पानी की वर्षा करने लगे ।

पृ० ६७ “मोती

सुघ बुघ खो ॥”

शब्दार्थ—मोती=मोती सी पानी की बूँदें । अलक=बाल । पतंग=सूर्य । पतंग=पतिंगे । तम-नभ=अन्धकार का आकाश । दामिनि=बिजली । स्नेह चिता=प्रेम की आग, दीपक । जीवन-दीप=जीवन रूपी दीपक—रूपक अलंकार । पिपासा=प्यास ।

भावार्थ—कलियों ने जब देखा कि बादल के वस्त्र से काले केशों से मोती गिर रहे हैं तो वे भी पत्तों के घूँघट से भाँक-भाँक कर मुस्काने लगीं । घरती ने आनन्दित होकर मेघ पर असंख्य फूल चढ़ाए और मेघों ने भी धूप को अपने ऊपर सहन किया और घरती को उससे बचाए रखा ।

जब घरती ने देखा कि सूर्य छिप गया है तो उसने करोड़ों पतिंगे उड़ाए और रात ने भी अन्धकार के आकाश में जुगनू के तारे बिखेर दिए ।

मेघ घरती का स्पर्श सा करता दिखाई देता था । कभी वह पहाड़ों पर घिर जाता था । वह मोरों को नचाता, नदियों को बहाता, शोर मचाता हुआ चला आ रहा था । वह कह रहा था कि कभी भी किसी को कोई दुख न हो । सभी शीतल हों । हमेशा बिजली मेरे साथ रहे और वृद्धों के साथ लताएँ लगी रहें ।

किन्तु पतंगिनी नहीं मानती । जब प्रेम की चिता के रूप में दीपक की लौ जल उठी तो वह विरह की आग न सह सकी और उस पर उसने अपने जीवन का दीप बुझा दिया—अपने आपको उस पर न्यूँछावर कर दिया ।

उसने जो प्रेम का प्रकाश देखा तो वह पंख लगा कर कठिन मार्ग में चलने की इच्छा लिए हुए तथा नए मुहाग के सुख को पाने की प्यास लिए अभी दो चार हाथ ही उड़ी थी कि वह मोहित होकर अपना होश ही खो बैठी और उसमें जल कर राख हो गई ।

“हँसते

मीचीं ॥”

शब्दार्थ—स्नेहानल=प्रेम की आग । दृग-मृग=नेत्र रूपी हरिण ।

भावार्थ—वह पतिंगिनी प्रेम की उस आग में जल कर राख हो गई । अभी तक उसकी आशाओं के रूप में उसके पर बिखरे हुए थे । वायु उन्हीं परों को ऊपर तथा नीचे लेजा कर खेल रहा था तथा घरती पर जो भस्म

पड़ी थी वह उड़ा कर मेहर की आँखों में डाल रहा था ।

मेहर रात भर जागी थी और उसके नेत्र यह देख रहे थे कि प्रेम में लीन हृदय वाले प्राणी किस प्रकार हँसते हँसते अपने जीवन को बलिदान कर देते हैं । उसके नेत्र रूपी मृग निद्रा रूपी हरियाली की खोज में धरती से आकाश तक चौकड़ी भरते रहे लेकिन उसे नींद नहीं आई ।

उसके मस्त नेत्र रात की अंधियाली के बालों में न फँस सके और वे मन के साथ होड़ लगा कर न जाने कहाँ-कहाँ देखते रहे ।

स्त्री का कोमल और प्रेम भरा हृदय इस हत्या को, प्राणों के बलिदान को और प्रेम के दर्द भरे खेल को और अधिक नहीं देख सका । पहले तो वह किसी चिन्ता में डूबी फिर कुछ ठंडी साँसें लेकर दीपक बुझा दिया और आँखें बन्द करके लेट गई ।

पृ० ६८ “ले

चली चलो तुम ॥”

शब्दार्थ—निःश्वास=ठंडी साँस । अकण्टक=बाधाहीन, साफ ।

भावार्थ—उसने ठंडी साँस लेकर जब दोबारा आँखें खोलीं तो उसे ऐसा लगा जैसे उसके सामने कोई खड़ा है । वह सोचने लगी कि मैं जाग रही हूँ या सो रही हूँ । यह कौन है ? फिर जब उसने आँखें मल कर देखा तो ज्ञात हुआ कि सामने कोई व्यक्ति नकाब चढ़ाकर खड़ा है । यह देखकर उसने झपट कर तलवार निकाली ।

और आगे बढ़ती हुई बोली “ठहरो ! कौन है और क्यों आया है ? अगर एक पाँव भी आगे बढ़ाया तो यह तलवार तुम्हारी छाती से पार कर दूंगी ।”

नकाब खोलकर सलीम ने कहा “मैं सलीम हूँ । मेरा मार्ग मत रोको । मैं चाहता हूँ कि शेर अफ़ग़न को मार कर अपना रास्ता बिलकुल साफ कर लूँ । तुम मेरी मदद करो । तुम बात मत करो । कहीं वह जाग न जाए । बस यह बता दो कि वह कहाँ सोया है । बस आज उसके जीवन का अन्त है । उसने जैसा किया है उसे वैसा ही फल मिलेगा ।

कल बांगाल कौन जाएगा ? मैं तो आज ही उसे जहन्नुम भेजता हूँ । और उसका काम तमाम हो जाए तो तुम चुपचाप मेरे साथ चली चलो ।”

“कौन

रह जाऊँ ॥”

शब्दार्थ—तस्कर=डाकू । भावी सम्राज्ञी=होने वाली महारानी ।

भावार्थ—मेहर ने कहा “क्या तू सलीम शहजादा है । दूसरे के घर तुम डाकू के समान घुसे और यह नीच उद्देश्य लेकर । मैं तो तुम्हारे बारे में कुछ और ही समझती थी । सचमुच मुझे धोका हुआ है । बस अब एक पाँव भी आगे न बढ़ाना । तुरन्त वापिस लौट जाओ ।

यदि तुम नहीं जाओगे तो मैं अभी आवाज लगाती हूँ और फिर तुम एक पल में पकड़े जाओगे । तुम हत्यारे बन कर आए हो, पल भर में कैद कर लिए जाओगे । तुम एक दूसरी स्त्री के घर उसके पति का खून करने के लिए आए हो । फिर भी अपने आप को सलीम कह कर मुँह दिखाते तुम्हें संकोच नहीं हुआ ।

तुम रुको मत । तुरन्त उलटे पाँव वापिस जाओ । यह तो सोचो कि तुम क्या हो और क्या करने आए हो । जरा शर्म करो ।”

सलीम ने कहा “मेहर तुम आज यह क्या कह रही हो । क्या आज मैं पराया हो गया हूँ ? मेरी होने वाली महारानी ने किस को अपना लिया है ? क्या मैंने तुम्हारे इन होठों पर चुम्बन के ताले नहीं लगाए थे ? वही होंठ आज इस प्रकार मुझे ही रोक रहे हैं । यह कैसा आश्चर्य है ?

जो मेरी आँखों में रहती है वही मुझे आँख दिखाती है । जो कल तक मेरे साथ विहार करती थी वही आज मुझे इस प्रकार भगा रही है । क्या मैं अपने राज्य में भी नहीं घुस सकता ? क्या तुम यह चाहती हो कि मेरी चीज कोई दूसरा ले जाए और मैं देखता रह जाऊँ ?”

पृ० ६६ “मैं ही

बातें करना ॥”

शब्दार्थ—मंजु अंक=सुन्दर छाती । उच्छृङ्खलता=आजादी । अलिगुंजन=भँवरों की गुंजार ।

भावार्थ—“मैं ही लूटा जा रहा हूँ और मुझे ही तुम छुटेरा कहती हो ! तुमने मेरा दिल चुरा लिया है और मुझे ही चोर बनाती हो ! तुम किसी को क्यों आवाज लगाती हो । तुम स्वयं ही मुझे कैद कर लो । मैं तो हाजिर हूँ ।

जंजीरों की क्या जरूरत है तुम अपनी छाती से लगा लो ।

किन्तु तुम यह बताओ अफगन कहाँ है । उसे पहले समाप्त कर दूँ फिर जो चाहोगी वैसा ही करूँगा ।”

मेहर ने उत्तर दिया—“तुम जिन आजादियों की बातें कर रहे हो वे तो सब बचपन की चीजें थीं । तुम जिन फूलों के खिलने का, भंवरो की मधुर गुंजार का और मोतियों से फूलों की क्यारियों का वर्णन कर रहे वे सब अब कहाँ हैं । जब से विवाह रूपी सूर्य की सवारी निकली है तभी से ऊषा इन सब को लेकर विलीन हो गई है । विवाह के साथ ही ये सब चीजें समाप्त हो गई हैं ।

हे सलीम ! आज तुम जिससे बात करते हो वह दूसरे की स्त्री है जिसने अपने कर्तव्य पर तन-मन-धन सभी कुछ बलिदान कर दिया है । इसलिए तुम स्वयं भी सोच लो । तुम को यहाँ और अधिक नहीं ठहरना चाहिए और दूसरे की स्त्री से ऐसी उलटी-सीधी बातें नहीं करनी चाहिए ।”

“नहीं यहाँ

दिखाऊँ ॥”

शब्दार्थ—पावन=पवित्र । दम्पति = पति-पत्नी ।

भावार्थ—“यहाँ तुम्हारा राज्य नहीं है । यह तो मेरा पवित्र घर है । इस की दीवारों के भीतर तो पति-पत्नी का अमर धर्म विराजमान है । मैं तो अपने घर की रानी हूँ । मुझे तुम्हारे राज्य की कामना नहीं है । ऐसा भी मनुष्य को निर्लज्ज नहीं होना चाहिए ।

तुम मूर्ख मत बनो । जरा सोचो और समझो । धर्म का रास्ता न छोड़ो । भयंकर पतन की ओर मत जाओ । पापों से मुँह फेर लो । मेरे जीते जी किसी की हिम्मत है जो उनको हाथ भी लगा सके । ऐसा कभी नहीं होगा चाहे लाखों व्यक्तियों के सर ही क्यों न कट जाएँ ।

हम दोनों में से पहले एक यहाँ समाप्त हो जाएगा तभी उनका बाल बाँका होगा । मैं एक बार फिर तुम से कहती हूँ कि तुम चुपचाप चले जाओ । बहुत हो चुका है अब अधिक देर न लगाओ ।

अब चुपचाप अपने घर का रास्ता लीजिए ताकि आपके यहाँ आने की बात किसी को भी मालूम न हो । और अगर आप एक क्षण भर भी और

रुक गए तो आपकी इज्जत नष्ट हो जाएगी। आप मेरी प्रार्थना मानते हैं या किसी को आवाज दें। अगर आप खून ही देखना चाहें तो आइए मुझी से दो हाथ कर लीजिए।”

पृ० ७० “ओ पाषाण हृदय धारा पर ॥”

शब्दार्थ—पाषाणहृदय=पत्थर से कठोर दिल वाली। पाषाण कोट=पत्थर का किला। अचेत=बेहोश।

भावार्थ—सलीम ने निराश होकर जवाब दिया, “ओ पत्थर से कठोर दिल वाली ! बस अब और कुछ न कहो। मैं जाता हूँ। लेकिन क्या सचमुच तू मेरी वही मेहर है ? यह बात मेरी समझ में ही नहीं आती। कल तक तुम मुझे प्यार करती थी और अब तुम मुझे इस प्रकार डाँटती हो। एक पल भर में तुमने सारे प्यार के नातों को नष्ट कर दिया।

न जाने मैं क्या-क्या सपने देखा करता था लेकिन तूने मुझे जगा दिया। जब तू ने ही मुझे नहीं अपनाया तो फिर मैं संसार का सम्राट् बनकर भी क्या करूँगा ? तुझे बधाई हो। तू घन्य हो। तेरी जीत हुई और मेरी पराजय। पत्थर के बने तेरे इस किले के भीतर भला मेरा कैसे गुजर हो सकता है ?

बस अब अन्तिम बिदा माँगता हूँ तुम दया करके मेरे सब अपराध क्षमा कर देना। या खुदा, स्त्री भी क्या रहस्य है ? इस पर घर जाकर विचार करूँगा।”

यह कह कर उसने मेहर पर एक नजर डाली और फिर सर मुकाकर बड़ी तेजी से नकाब में छिप कर घर की ओर चल दिया।

उसके जाने के बाद मेहर वहीं जमी रह गई। न कुछ बोली और न हिली-डुली। हाथ में तलवार थामे अजीब मूर्ति के समान खड़ी रही। जैसे ही सलीम अँधेरे में घर से बाहर हो गया, तलवार उसके हाथ से छूट गई और वह धरती पर बेहोश होकर गिर गई।



दसवाँ सर्ग

कथासार—इस सर्ग में सबसे पहले कवि ने मेहर की बिदाई का चित्रण किया है। विवाह के साथ ही बादशाह ने शेर अफगन को बंगाल का सूबेदार बनाकर भेज दिया। वह मेहर को साथ लिए जब विदा हो रहा था तो मेहर ने सबसे विदा माँगी।

चलते समय वह कहती है “अब मैं अपने सपनों के अपनी कल्पनाओं के संसार से विदा माँगती हूँ। यमुना के सौन्दर्य और कलनाद से भी विदा माँगती हूँ। मैं अपनी भूलों से विदा माँगती हूँ।” यह कहते-कहते मन में दर्द लिए वह बंगाल की ओर चल देती है।

आगे कवि ने बङ्गाल का चित्रण किया है। सूर्य की किरणें पहले पहल बङ्गाल में ही बिखरती हैं। असंख्य नदियाँ उसके चरणों पर जल चढ़ाती हैं सूर्य उसी के सागर से जल लेकर वर्षा करता है और सारे संसार को शीतल तथा सरस बना देता है।

वहाँ नारियल के बहुत से पेड़ हैं। उनके बीच से स्त्रियाँ कमर पर घड़े रखे जल लेकर आती हैं। उन्हीं के बीच बैठकर बङ्गाली कोमल स्वर से गायी करते हैं। उन्हीं के बीच पुरुष स्त्रियों से क्रीड़ा करते हैं। और वहाँ केलों के कुंज भी हैं वहाँ पुरुष रंभा जैसी सुन्दर अप्सराओं के साथ आनन्द मनाते हैं।

बङ्गाल वीरों के बलिदान की कहानी सुनाता है। वहाँ बड़े-बड़े दार्शनिकों और पंडितों और सन्तों ने जन्म लिया है जिन्होंने विविध दर्शनों, भक्ति और ब्रह्मज्ञान के उपदेश दिए हैं। यह प्रदेश बहुत सुन्दर है। प्रकृति नित्य ही नवीन रूपों में वहाँ प्रकट होती है। जब मेहर और शेर वहाँ पहुँचे तो उसकी अपूर्व शोभा देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए।

उसके बाद कवि ने सलीम के वियोग का चित्रण किया है। सवेरे-सवेरे मधुर वायु चल रही है। ऐसे समय में सलीम मेहर के विरह में दुखी है।

अन्त में वायु से इस प्रकार अपने इस दुख का प्रकाशन करता है :—

“हे वायु यदि तू धीरे-धीरे पूर्व दिशा की ओर जा रही है तो सुन मेरी मेहर भी उसी दिशा में गई है। अगर तुझे जाना ही है तो अकेले मत जा। मेरी नाव को भी साथ लेजा।

आशा भी क्या अजीब चीज है ! उसने मुझे खूब चक्कर दिए हैं खूब परेशान किया है। और अब यह स्वयं भी दूर होती दिखाई देती है। हे भविष्य ! तू ही मेरी कुछ सहायता कर दे। मेरा जीवन सफल बना दे। मेरी असफलता को सफलता में बदल दे। मेरा प्यार मुझे दिला दे।

पूर्व दिशा में जाकर तुम फूलों को सिखाना और इस प्रकार मेहर को पुराने प्यार की याद कराके मेरा स्मरण कराना। मेरी दर्द भरी कहानी उसे सुनाना और वह जो भी उत्तर दे उसे मुझ तक पहुँचा देना। तुम बस मेरा इतना सा काम कर दो। इसीलिए तुम्हें कष्ट देता हूँ। अगर तुम मेरा काम करोगी तो तुम्हारा बड़ा उपकार होगा।”

इसके बाद कवि ने जमीला का वर्णन किया है। वह बहुत प्रसन्न है कि उसने मेहर का काँटा मार्ग से दूर कर दिया और सोच रही है कि मेरे एक इशारे पर ही उसका सारा घमंड दूर होगया। मैंने एक तीर में ही अपना शिकार गिरा लिया है। वैसे मेहर को भगाना बहुत मुश्किल था लेकिन फिर भी मुझे सफलता मिली, किन्तु उसे भी याद रहेगा कि उसका किसी से वास्ता पड़ा था।

लेकिन पता नहीं कि वह सलीम पर क्या जादू कर गई है कि वे मेरी ओर देखते ही नहीं। एकबार जब मैं नखशिख सिंगार करके उनके सामने गई तो उन्होंने क्षण भर के लिए मेरी ओर देखा और फिर कभी ध्यान ही नहीं दिया। मैंने उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने की लाख कोशिश की लेकिन वे तो मेहर के ध्यान में ही लीन रहते हैं। तो अब क्या करना चाहिए ?

हाँ ठीक है। याद आया। सुना है कि गुदड़ीशाह नाम के कोई फकीर हैं। जो भी उनके पास जाते हैं अपना कार्य बना लाते हैं। कितनों ने ही उनकी कृपा से ऊँचे-ऊँचे पद प्राप्त किए। कितने गरीब उन्हीं की दुआ से

घनवान हो गए हैं। वह विरहिणियों के दुखों को भी दूर करते हैं। मैं भी उन्हीं के पास जाऊँगी और ऐसा मंत्र सीख कर आऊँगी कि सलीम भी मुझ पर मोहित हो जाए। और फिर मैं अपनी सब इच्छाएँ पूरी कर लूँगी।

पृ० ७१ “ओ

विदा ॥”

शब्दार्थ—आगार=घर। मनुहार=मनाना। उन्माद=मस्ती। आमोदीं का प्रासाद=आनन्द का महल। आह्लाद=खुशी। कल्पना-शिल्पी=कल्पना रूपी महल बनाने वाला—रूपक। हृदय-सरोवर=हृदय रूपी तालाब—रूपक। मराल=हंस, सलीम। दिनकरसंगम=सूर्य का मिलन। प्राची=पूर्व दिशा। कोट=किला। अंतस्तल=हृदय। हिमसरिता=बर्फ की नदी। विलास-विनिमय=आनन्द का आदान-प्रदान। हिमखंड=बर्फ का टुकड़ा।

भावार्थ—मेहर जाते समय सब से विदाई माँग रही है। हे मेरी आशाओं के संसार, मैं तुमसे बिदा माँगती हूँ। बचपन के प्यार से, सुन्दरता के घर से, सलीम की मनाने वाली बातों से, यमुना की मधुर आवाज से, आँखों की मस्ती से, सुखों के महल से और मन की खुशी से सब से विदा माँगती हूँ।

उस मीठी कल्पना रूपी महल वाले के बनाए सुन्दर महलों से, दिल रूपी तालाब के सुन्दर सलीम रूपी हंस से, कुँवारीपन रूपी कली की इच्छाओं के विकास से, सूर्य के मिलन से पूर्व दिशा में फैली ऊषा की मधुर हँसी से बिदा माँगती हूँ।

वायु रूपी नाव पर बने हुए इच्छाओं रूपी महल से, कठोर समय के हाथों से खाई दिल की चोट से, बर्फ की नदी में प्रेम के आदान-प्रदान रूपी बर्फ के टुकड़े से और इच्छाओं के तूफान के शक्तिशाली थपेड़ों से मैं विदा माँगती हूँ।

पृ० ७२ “चिरपरिचित

वारीश विदा ॥”

शब्दार्थ—विजयोक्तास=जीत का आनन्द। दोलित करता=चलता। स्रोत=भरना। जलप्लावित=जल में डूबा हुआ। पोत=नाव। विरह-वारिधि=विरह रूपी सागर—रूपक। मरुप्रदेश=रेगिस्तान। वारीश=सागर।

भावार्थ—हमेशा से परिचित सलीम के हृदय को जीवन के आनन्द से,

बचपन में पाँव चलते-चलते गिरने की चोटों से, जहाँ गुड़ियों से खेली थी उस प्यार भरे घर से और मैं जिन आँखों की पुतली के समान प्यारी थी उन सम्बन्धियों से विदा लेती हूँ ।

जहाँ मैं हंस पकड़ती थी उस नहाने वाली नहर से, सुन्दर-सुन्दर राज-भवनों से तथा परम सुन्दर शहर से, जहाँ मैं भूला भूलती थी उस पेड़ की डाली से तथा भूले की पेंगों को बढ़ाने वाली सलीम की कोमल बाहों से विदा माँगती हूँ ।

जो आनन्द के आँसू बरसाता है, जीवन के उस भरने से, जो जल में डूबी की जहाज के समान चला करने वाली आशा है उस से, वियोग रूपी सागर के पुल के समान सुन्दर इन्द्रधनुष से तथा जाग-जाग कर सो जाने वाली किस्मत की याद से विदा माँगती हूँ ।

जो रह-रह कर मन में उठती है हर्ष की उस लहर से, मेरे दिल में कैद होने वाले तथा मेरा ही दिल चुगने वाले से, प्यारे दामन से बाँधी गई चोटों के दर्द की याद से और रेगिस्तान जैसे सूखे जीवन में प्रेम की नदी को प्रवाहित करने वाले सागर से विदा माँगती हूँ ।

“जो नहीं

मान विदा ॥”

शब्दार्थ—अलभ्य=अप्राप्य । मुकुल-अधर=कली के होंठ, मेरे होंठ । हृदयाम्बुधि=हृदय रूपी सागर—रूपक । उर्मिल=लहरों से युक्त ।

भावार्थ—जो बाग में फिर नहीं आ सकेगा ऐसे पक्षियों से, जो मुझे घेरे फिरा करता था उस वातावरण से, जब खेल-खेल में कबूतर उड़ गया था तो सलीम की जो भौंहें धनुष सी खिच गईं थीं उन से, तथा जिसको पी-पी कर मैं मतवाली बनी रहती थी सलीम की उस मुस्कान से मैं विदा माँगती हूँ ।

मोहित करने वाले मंत्रों से युक्त उनके होंठों के चुम्बन से, कुंजों में अकेले बैठ कर काने वाले अभिनय तथा प्यार भरी बातों से, मेरी सपने की कहानी को सुनकर उनको जो आश्चर्य हुआ था उस से तथा भँवरे के आलिंगन से जैसे कली खिल उठती है वैसे ही उनके आलिंगन से उत्पन्न होने वाली मेरी जो हँसी थी, इन सब से मैं विदा माँगती हूँ ।

मैं उस प्यार से विदा माँगती हूँ जिससे वे मेरे बालों में कलियाँ गूँथा

करते थे । हे मेरे भविष्क के चाँद सलीम ! अब मैं तुम्हारा स्पर्श कभी न कर सकूँगी । इसलिए तुम से विदा माँगती हूँ । लंगर खींच लिए गए हैं, पाल खोल दिए हैं, मेरा यह जहाज विदेश जा रहा है, अब विदा दो । हृदय रूपी सागर की लहरों से भरे थपेड़े कभी किसी को किनारे पर नहीं ले जाया करते । अब विदा दो ।

पृ० ७३ “विस्मृति

फूल विदा ॥”

शब्दार्थ—इंगित=इशारा । सनाद=आवाज के साथ । स्वच्छन्द विहंग=आजाद पक्षी के समान मन । विहान=प्रातःकाल । तरनी=नाव ।

भावार्थ—मैं पुरानी यादों को भुला रही हूँ फिर भी वे याद आती हैं । अब मैं उनसे विदा माँगती हूँ । वह याद लहरों के समान शब्द करती तथा इशारे करती आती है । अब उस से बिदा ! सलीम हिचकी बनकर आते हैं लेकिन आँसू बन कर बिदा हो जाते हैं, पीड़ा के समान उठते हैं लेकिन मेरी किस्मत के समान ही सो जाते हैं, अब उन से बिदा ।

आजाद पक्षी के समान मन की ऊँची-ऊँची उड़ानों से निराशा रूपी रात के कभी न होने वाले सुखमय सवेरे से, नई तरंगों की चोट खाकर बहती हुई नाव के जाने पहचाने किनारे से, मेरी उन्नति रूपी नाव को रोकने वाले तथा इस नाव के अनुकूल पूर्व दिशा के वायु से मैं बिदा माँगती हूँ ।

हे मेरे भ्रम, हे शान्ति, हे मेरी भोली भूल, हे मेरी मुरझाई आशाओं की समाधि के फूल सलीम ! मैं तुम सबसे बिदा माँगती हूँ ।

“ऊषा

सुनाता है ।”

शब्दार्थ -सलिल=जल । चरणोदक-पयोधि=चरणों का जल रूपी सागर रूपक । रसा=धरनी । शैलों=पर्वतों । लतापाश-आबद्ध=लताओं के आलिगन में बँधी । अवली=पंक्ति । कल्लोलिनी=नदी । यौवन-कलश=जवानी के घड़े, कुच । नितम्बिनी = स्त्री । विह्वल=गोश भरा ।

भावार्थ—अब कवि बंगाल का वर्णन करता है । ऊषा की किरणों सब से पहले उस पर पड़ती हैं क्योंकि वह पूर्व में है । असंख्य नदियाँ आकर उसके चरणों पर जल चढ़ा कर उसकी पूजा करती हैं । सूर्य अपनी किरणों के द्वारा उसके चरणों को घीने वाले जल के समान सागर से जल लेकर वर्षा करता

है और सारे संसार को सरस एवं शीतल करता है ।

बंगाल की धरती पर धानी रङ्ग की साड़ी शोभा देती है । जहाँ पर मलय पवन के झोंकों की मधुर सुगन्धि आती है । वहाँ पर्वतों पर शाल के पेड़ों की शोभा है और नीचे शालि की क्यारियाँ हैं । तथा लताओं के आलिङ्गन से युक्त वृक्षों की पंक्तियाँ दूर तक दिखाई पड़ती हैं ।

वहाँ पर्वतों के झरने विरही व्यक्तियों की आँखों के समान बहते रहते हैं तथा नदी लहर रूपी हाथों को उठाकर कल-कल ध्वनि द्वारा मन को व्याकुल बना देती है ।

नारियल के कुंजों के भीतर जो तालाब है वहाँ से कुँचों के भार से नत स्त्रियाँ घड़े भर कर कमर पर धर कर लाती हैं । वहाँ स्त्रियाँ घूमती हैं तथा केश रूपी ध्वजाओं को फहराती हैं तथा पान के रङ्ग से रंगे होंटों से धीरे-धीरे मुस्कराती हैं ।

और कहीं पर कोई बंगाली मधुर स्वर से गाता दिखाई देता है और कभी जोश में भर अपनी प्रिया को बिन बजा-बजा कर सुनाता है ।

पृ० ७४ “अथवा विहग अनेक ॥”

शब्दार्थ - नारि केलि=स्त्रियों से क्रीड़ा—यमक अलंकार । रंभाओं=केलों । रंभाओं=रंभा सी स्त्रियों—यमक अलंकार ! चीतल=चितकबरा । दाराएँ=स्त्रियाँ । जंगम=चलने वाले प्राणी ।

भावार्थ—तथा वहाँ नारियल के पेड़ों के बीच पुरुष स्त्रियों के साथ क्रीड़ा किया करते हैं तथा केलों के कुंजों के बीच रंभा जैसी सुन्दरियों के साथ पुरुष आनन्द की धारा में लीन हो जाते हैं । वहाँ वृक्षों के साथ मलय वन खेला करता है तथा नीचे धूप और छाया आँखमिचीनी से खेलते दिखाई देते हैं ।

धूप और छाया की झिलमिल ऐसी है कि चीते का चितकबरा शरीर उसमें छिप जाता है तथा प्रकाश और अन्धकार के इसी मिलन के कारण हरिण भी धोका खा जाता है । वह चीता ऐसा है जिसके शरीर पर सफेद और काली रेखाएँ गंगा-यमुना सी दिखाई देती हैं । उसकी कमर का पतला-पन देख कर स्त्रियाँ भी लज्जित हो जाती हैं ।

जब वह चीता धीरे-धीरे चलता नदी के किनारे जल पीने जाता है तब वह जिधर देखता है उधर ही सब प्राणी भय से स्तब्ध हो जाते हैं ।

वहाँ विविध रंगों के तोता-मैना विहार करते हैं नदी के किनारे चातक चकोर, कोयल, मोर, धनेश, लवा, दहियल, चाहा, बगुला, मछुवा, सारस, आँजन, ढँक, बतें, लालसर, टीका तथा चकवा आदि अनेक पक्षी चहचहा रहे हैं ।

“शंकर

मैया ने ।”

शब्दार्थ—मानस=मानसरोवर । केलिभूमि=खेल की धरती । उद्गम = उत्पत्ति का स्थान ।

भावार्थ—वहाँ शंकर की जटाओं से निकल कर गंगा चली आती है तथा मानसरोवर से निकल कर ब्रह्मपुत्र नदी भी वहाँ बहती है । वहाँ पर आकर दोनों नदियाँ मिलकर आनन्दविभोर हो गई हैं तथा धरती पर असंख्य भरनों का समूह दिखाई देता है ।

ये दोनों नदियाँ ब्रज की रेत जल में मिला-मिला कर लाई हैं, कृष्णचंद्र की खेल की धरती से, राधा के पाँव के नीचे से भगवान राम की अवधपुरी से, ऋषियों-मुनियों के आश्रम से, वीरों के बलिदान की धरती से तथा ब्रह्मज्ञान के जन्म स्थान से पवित्र रेत लेकर ये नदियाँ आती हैं ।

यह धूल ऐसी है जिसमें सती स्त्रियों की राख मिली हुई है, जिसमें असंख्य योगियों और यतियों की समाधि की पवित्रता मिली है, जिसमें अपने देश पर बलिदान देने वाले तथा अटल निश्चय वाले अमर शहीदों का खून मिला हुआ है ।

यह वही रेत है जिसे प्रसन्न होकर कृष्ण ने खाया है तथा माता यशोदा ने कृष्ण को माखन खिला-खिला कर यह रेत निकाली है ।

पृ० ७५

“यह पावन

निधि का पार ॥”

शब्दार्थ—पावन=पवित्र । त्रिभुज=त्रिकोण का सा आकार । प्रकृतिनटी का रङ्गमंच=जहाँ प्रकृति रूपी नर्तकी अपना प्रदर्शन करती है वह स्थान । रम्य=सुन्दर । नवदम्पति=पति-पत्नी जिनका हाल ही में ब्याह हुआ था—मेहर और शेर । सुरभि-सुन्दरी=मुगन्धि रूरी स्त्री । सलिल=जल । निर्जीव=जड़ ।

रुचिर=सुन्दर । निधि=खजाना ।

भावार्थ—वे नदियाँ उस पवित्र रेत को त्रिकोण से आकार वाले बंगाल में भर देती हैं । सागर अपनी लहरें उठा-उठाकर वह रेत माँगता है मगर ये उसे नहीं देती । वह प्यारा बंगाल प्रदेश रङ्गमंच के समान प्रतीत होता है जहाँ प्रकृति रूपी नर्तकी अपनी कलाओं का प्रदर्शन करती है क्योंकि वहाँ प्रकृति के विविध रूपों के दर्शन होते रहते हैं । जब मेहर और शेर वहाँ पहुँचे तो वहाँ के सुन्दर दृश्य देखकर आनन्द में भर गए ।

इसके बाद कवि ने सलीम का वर्णन किया है । सलीम मेहर के वियोग में बहुत दुखी है । वह प्रातःकालीन सुगन्धित और शीतल मलय वायु से कहता है—“अगर तू पूर्व दिशा की ओर धीरे-धीरे जा रहा है तो इस बात का ध्यान रखना कि सुमन की शय्या पर सुगन्धि रूपी सुन्दरी सो रही है । ऐसा न हो कि वह जाग जाए । विरह रूपी सागर में मेरी इच्छा की शव जड़ पड़ी है, वह आगे बढ़ती और पूरी होती नजर नहीं आती । लेकिन तू भी कितना कठोर है कि तू ने उसमें जरा सा भी जीवन नहीं भरा ।

हे मित्र अगर तू उस सुन्दर बंगाल की ओर जा रहा है तो अकेला मत जा । मेरे जीवन की नाव के सूखे पालों को भर कर उसे भी साथ ही लेता जा ।”

अब सलीम आशा से कहता है—“हे आशा तू तो सदैव मनुष्य के साथ रहा करती है फिर तू क्यों मेरा साथ छोड़ रही है ? तू ने भी डाँड रोक दिया है और शान्त हो गई है । अब आशा भी लुप्त होती जा रही हैं । बस तू दो हाथ और आगे ले चल । तू ही तो मेरे जीवन का आधार है । अगर तू भी हाथ खींच लेगी तो जीवन कैसे चलेगा ? तुम्हीं में तो मुझे अपने खजाने की झलक दिखाई देती है ।

“विदा

बहलावेगा ॥”

शब्दार्थ—नैराश्य-निशा=निराशा रूपी रात । उद्यत हैं=तैयार हैं । दिप्त=प्रकाशित ।

भावार्थ—अब मेरे मन में कुछ आशा पैदा हो रही है । निराशा की रात अब तुम्हें विदा । तू ने मुझे बहुत भ्रम में रखा और परेशान किया । तू

ने मेरे मन में बड़े-बड़े तूफान उठाए और मुझे अपना नयंकर रूप दिखाया है।

कितनी ही रुकावटों की चट्टानें मेरे मार्ग में जल के भीतर छिपी पड़ी हैं जो टकराकर मुझ को भी जल में लीन कर देने के लिए तैयार हैं। हे भविष्य, तू ही मेरी रक्षा करदे और मेरी पतवार को ठीक करदे। ऐसे मार्ग पर ले चल जहाँ से मेरी नाव आसानी से पार हो जाए। मुझे मेरी मेहर मिल जाए।

सूर्य रात रूपी पलक को खोल कर देख रहा है। अभी उसमें आलस्य है। उसका प्रकाश पूरी तेजी पर नहीं आया है। सूर्य ने जब जल को गर्म किया तो वह लाल हो गया और उसमें से प्रकाश निकलने लगा।

हे मलय ! अगर तू नौका को लेकर ले जाने से डरता हो, अगर तू इतनी दूर अकेला न जाना चाहता हो, तो मेरे मन को ही साथ ले जा। यह तुझे सही रास्ता बताता चलेगा और रास्ते में तुझे प्यारी मेहर की मीठी-मीठी बातें सुनाकर तेरे मन को आनन्दित करेगा।

पृ० ७६ “पुष्पों जिला देना ॥”

शब्दार्थ—म्लान=उदास। प्राण=प्राण के समान प्रिय मेहर। मेघ=मेड़।

भावार्थ—मेरा मन तुझको फूल रूपी प्यालों में भर-भर कर सुगन्धि रूपी शराब पिलाएगा जिससे तू हमेशा मस्ती में रहेगा। वह तुझे कभी भी उदास नहीं होने देगा। मेरी हालत तो तुम देख ही रहे हो। मैं हमेशा आहें भरा करता हूँ और प्राण के समान प्रिय मेहर को पाने के लिए तड़पता रहता हूँ।

मेरी आँखों में वह रहती है। दिल में भी उसकी तसवीर बनी है। लेकिन मैं उसे हार गया हूँ और उसे पाने का कोई भी रास्ता नहीं दिखाई देता। पहले तो वह मुझसे प्रेम करती थी। फिर उसने ऐसी आँखें बदलीं कि मैं हैरान हो गया। आज तक मैं उसके दिल का रहस्य नहीं जान पाया हूँ।

उसने मुझ पर हाथ फेर कर मुझे बेहोश कर दिया और मेरा दिल भी चुरा कर ले गई। लेकिन मुझे विश्वास है कि उसके मन में अवश्य ही मेरा प्रेम छिपा होगा।

हे मेहर ! क्या तू अपने जादू को और भी तेज करने के लिए बंगाल गई है ? क्या तू वहाँ से मोहन मंत्र पढ़कर मुझे मेड़ बना देना चाहती है ? अगर

तुम्हारा यही उद्देश्य था तो तुम बेकार वहाँ गईं और मुझे इतना परेशान किया। मैं तो तुम्हारे भोलेपन पर बिक गया था, पूरी तरह तुम्हारे आधीन था।

हे मलय पवन ! तुम उस तक मेरा यह सन्देश पहुँचा दो। उसका मन सचमुच बड़ा कठोर है। उसे भी रस देकर थोड़ा कोमल बना दो। उसे बचपन के खेलों का स्मरण कराना और दिल में जो प्यार की आग दबी हुई सुलग रही है उसको और भी तेज कर देना।

“फूल

जगाना ॥”

शब्दार्थ—पूर्व-प्रणय=पुराना प्यार। सम्वाद=खबर।

भावार्थ—तुम फूल खिलाना और फिर वसंत की शराब पिला-पिला कर उस सोते हुए प्यार को धीरे-धीरे जगा देना। मेरी दर्द भरी कहानी सुना-सुनाकर उसके मन में दया पैदा करना और मेरी याद भी जगा देना।

और वह जो भी उत्तर दे वह सब ठीक-ठीक लेकर आना और इसी प्रकार उससे भेंट की सारी खबर मुझे सुना देना। बहुत देर हो गई है। अब तुम तुरन्त चले जाओ और अगर कहीं वह सो रही हो तो उसे तुरन्त ही नहीं जगाना।

पृ० ७७

“जाकर

जी को ॥”

शब्दार्थ—कमलमुख=मेहर का कमल रूपी मुख-रूपक।

भावार्थ—वहाँ जाकर पहले तुम कलियों को चटकाना और फिर भँवरों को मेहर के कमल मुख पर भेज कर उनसे गुंजार के रूप में उसकी प्रशंसा करवाना। तितलियों का समूह अपने पंखों से किरणों को हटाता रहे और पत्तों को भी समझा देना कि वे ताली नहीं पीटें।

फिर जब उसकी नींद उचट जाए और वह अंगड़ाई लेकर आँखों को मलती हुई छाती के द्वार से खेले या क्यारियों में जाकर फूलों की पंखुड़ियाँ चुनती हो या किसी कुंज में जाकर उलझी हुई मोती की लड़ियाँ सुलभा रही हो।

तब तुम धीरे से चलकर उसके सिर से उसका आँचल हटा देना और उसके कान के पास जाकर मेरा सन्देश सुनाना। तब वह चौंकर इधर-

उधर देखने लगे तब तुम फूलों के भीतर छिप जाना और भौरों को उसके सामने भेज देना ।

तुम इस प्रकार धीरे-धीरे प्रेम बढ़ाना और जब वह तुम्हें अपने पास बुलाए तथा अन्य प्रकारों से अपनी अधीरता दिखाए तो तुम उसके निकट जाकर सारा संदेश सुना देना और जो वह उत्तर दे वह लेकर तुरन्त मेरे पास आ जाना ।

बस मेरा यही काम है जो तुम कर सकते हो । इसीलिए तुम्हें कष्ट दे रहा हूँ । तुम उसका सन्देश लाकर मुझे प्रसन्न कर दो । तुम्हारा भी भला होगा ।

“चलो

जानेगी ॥”

शब्दार्थ—मद=अभिमान । तरु=वृक्ष, सलीम ।

भावार्थ—अब कवि जमीला का वर्णन करता है ।

जमीला बड़े सन्तोष के साथ कह रही थी, ‘चलो अब मेहर तो चली ही गई है । अब मेरे रास्ते का यह काँटा मी दूर हो गया है । मेरे एक इशारे से ही उसका सारा गर्व मिट्टी में मिल गया । मैंने एक ही तीर में इतना बड़ा शिकार गिरा लिया है । एक ही चाल से मेहर को भगा दिया है ।

सचमुच इस चालाक मेहर को यहाँ से भगाना बड़ा कठिन था । लेकिन मैंने भी छिप कर ऐसा तीर मारा कि वह सलीम से अलग हो गई । वह अवश्य ही मेरा रोब मानेगी और जीवन भर याद रखेगी कि उसे किसी से काम पड़ा था ।

पृ० ७८ “पर सलीम

बुझा लूंगी ॥”

शब्दार्थ—अ० कमान=भौंह रूपी कमान—रूपक । चख=नेत्र । रेल=भीड़ ।

भावार्थ—किन्तु सलीम पर मेहर ने ऐसा जादू डाल दिया है कि वह हमेशा उसी के नाम की रट लगाए रहता है । पहिले तो वह मेहर पर मरता था । अब उसके चले जाने से वह बहुत दुखी है । हर वक्त ठंडी साँसें भरता रहता है और उसकी आँखों से आँसू बहते रहते हैं ।

मैंने कितनी ही बार अपना शृङ्गार करके, अपने आप को सुन्दरता की

मूर्ति बना कर उस पर भौंह रूपी कमान के द्वारा पाँचों बाण मारे हैं लेकिन बस एक बार उसने मुझे सिर से पाँव तक देखा और थोड़ा सा रस पीकर अपने फँसते हुए नेत्रों को रोक लिया। वह पर्वत के समान स्थिर बना रहा और कभी भी चंचल नहीं हुआ।

तब से मैं उसे अपने प्यार की राह पर नहीं ला पाई हूँ। अब क्या करूँ यह सोच-सोच कर घबराती जा रही हूँ। सुना है कि गुदडीशाह नाम के कोई फकीर हैं। वे दुनिया से उदासीन हैं और धन की भी उन्हें कोई इच्छा नहीं है।

वे फूँक कर ही लाखों रोगियों के रोग दूर कर चुके हैं। फलीता सुँघा कर ही लोगों के भूत दूर कर देते हैं। कितने ही गरीब उनकी दी हुई राख को शरीर पर मल कर धनवान हो गए हैं। और बहुत से लोगों ने इन्हीं के आशीर्वाद से ऊँचे-ऊँचे पद पाए हैं।

दुखिया स्त्रियाँ भी उनके तकिए पर खूब जमा रहती हैं। उन्होंने कितनी ही बाँझ स्त्रियों को सन्तान दे दी है। दुखी विरहिणियों के दुख को भी वे मंत्रों द्वारा दूर कर देते हैं। और प्रेम में असफल स्त्रियों को अपने प्रियतमों को वश में करने के लिए मोहन मंत्र सिखाते हैं।

मुझे भी यही सीखना है। मैं भी उनकी सेवा में जाऊँगी और सम्मोहन मंत्र सीखकर उन्हें पूरी तरह अपने वश में कर लूँगी। इसके बाद तो आनन्द ही आनन्द है। मैं अपनी इच्छा पूरी कर लूँगी। उनके आलिगन से मन का सारा क्लेश दूर कर लूँगी।



ग्यारहवाँ सर्ग

कथासार—शेर अफगन को जब सूबेदार बना दिया गया तो उसका घमंड बहुत बढ़ गया। पहले से ही वह एक हृदयहीन व्यक्ति था। केवल लड़ना-लड़ना और मरना मारना जानता था। अब पद ने उसे पागल ही बना दिया था। वह बड़ा क्रोधी, कठोर और निडर था। हमेशा मनमानी करता था। कभी सोच कर कार्य नहीं करता था। तलवार के बल पर शासन करता था।

उसने कभी भी यह सोचने की कोशिश न की थी कि प्रजा किस हाल में है। प्रजा की बात तो दूर है उसने कभी अपने घर में यह भी नहीं देखा कि मेहर कैसे रहती है। उसे मेहर से कोई प्यार नहीं था। वह स्त्री को केवल कामपूति का साधन समझता था। यही कारण है कि वह हमेशा मेहर की उपेक्षा किया करता था।

शेर को कलाश्रों से कोई प्यार नहीं था। प्रकृति में भी उसे कोई सौंदर्य दिखाई नहीं देता था। बस खाता पीता मस्त रहता था। भावना की एक बूँद भी उसमें नहीं थी। वह तो पशुओं के समान शक्ति का ही पुजारी था। उसे संगीत से भी घृणा थी। साहित्य का तो वह नाम से विरोधी था।

उधर मेहर का स्वभाव बिल्कुल भिन्न प्रकार का था। वह हमेशा प्रकृति में स्त्रञ्छन्द विचरण करती रही थी। लेकिन अब वह महलों में कैद थी। उसकी दशा परकटे पक्षी की सी थी। कोई भी तो ऐसा नहीं था जिससे वह दिल की बात कर सके।

वह कभी-कभी महल के मीनारों पर चढ़कर प्रकृति की शोभा देखा करती थी। वसंत में विविध रंगों के फूलों को देखकर उसके मन में एक हूक सी उठती थी। प्रातःकालीन सुनहली शोभा देखकर उस पर एक जादू सा हो जाता है। किन्तु वह बेबस थी। पर फड़फड़ा कर रह जाती थी और अपनी

बेबसी पर आँसू बहाया करती थी ।

एक दिन वह अकेली बैठी अपने आप ही कह रही थी कि तलवार मेरी सौत के समान है जो बहुत मक्कार है । मेरा पति उस पर लट्टू है । उसके कारण ही वे मेरी ओर नहीं देख पाते । हर समय उसे साथ लिए रहते हैं और उसी पर मरते हैं । हे सर्वसुन्दरी ! तू ही बता मैं क्या करूँ ? कैसे इस सौत से मुक्ति पाऊँ ?'

इतने में शेर अफगन आगया और इसकी बातें सुनकर आगबबूला हो गया । बोला "यह क्या झूठ बोल रही है ? कौन है तुम्हारी सौत ? तुम्हीं बताओ मैं किस पर मरता हूँ ? शीघ्र उत्तर दो नहीं तो मैं या तो तुम्हें समाप्त कर दूँगा या अपने आपको खत्म कर दूँगा ।"

मेहर ने उत्तर दिया "मेरा सर हाजिर है । आप इसे मेरी सौत के हवाले कर दें । मेरे खून से उसे भर दें । यह प्रत्यक्ष ही आपके कमर में जो तलवार लटकी है वही तो मेरी सौत है । यही सब लड़ाइयों का कारण है । इसी की वजह से आपको मेरी ओर देखने का अवकाश नहीं मिलता । अतएव आज फैसला हो जाना चाहिए । या तो आप इसे छोड़ दीजिए या मेरा खून कर दीजिए ।"

शेर ने कहा—"वाह ! तुम्हें भी क्या सौत मिली है ! तुम्हें इससे क्या कि मैं क्या करता हूँ और दुनिया कैसे चलती है । तुम अपने काम से काम रखो । तुम्हें मेरे कामों में दखल देने का कोई अधिकार नहीं । तुम्हारे इस रूप का जादू मुझ पर नहीं चल सकता ।"

यह सुनकर मेहर का दिल दर्द से भर गया और वह रोने लगी । जब उसकी पुत्री लैला ने देखा तो वह दौड़ कर आई और पिता से तुतला कर बोली, "तूने अम्मी को माला है मैं तुम्हें माल दूँगी और घल से निकाल दूँगी ।"

यह सुनकर शेर का क्रोध और भी बढ़ गया और वह उसे पटक कर बोला "माँ-बेटी दोनों ही एक सी जहरीली हैं ।" यह कह कर वह चल दिया ।

सर्वसुन्दरी ने लैला को उठा लिया और उसे सुलाने के लिए लोरी गाने

लगी। थोड़ी देर बाद वह सो गई।

लेकिन मेहर के दिल में आग सी जल रही थी। वह सर्वमुन्दरी से बोली, 'मैंने अपना सब कुछ अपने पति पर न्यौछावर कर दिया। सब सम्बन्धियों को भूल गई। अपना सारा जीवन बर्बाद कर दिया केवल इस आशा में कि मुझ से मनुष्यता का व्यवहार होगा। लेकिन फिर भी मेरे साथ ऐसा व्यवहार होता है। आखिर कब तक ऐसा चल सकता है ?'

सर्वमुन्दरी ने उसे समझाने की कोशिश की और कहा "मैं तो यह चाहती हूँ कि तुम सब कुछ भूलकर पति सेवा में लग जाओ, इस प्रकार तुम सांसारिक स्थितियों से ऊपर उठ जाओगी। देवी बन जाओगी।"

इस प्रकार सर्वमुन्दरी के समझाने पर मेहर को भी होश आया कि उसने जो कहा वह अनुचित था। वह फिर पति-सेवा का निश्चय करती है और सर्वमुन्दरी से कहती है—

"जीवन में कई बार मनुष्य डगमगा जाता है। मैं भी डगमगा गई थी। और तूने मुझे मेरा कर्तव्य बता कर मुझे पथभ्रष्ट होने से बचाया है, यह उपकार मैं कभी नहीं भूलूँगी।"

पृ० ७६ "चढ़ गया

न भाया ॥"

शब्दार्थ—दुर्लभ=मुश्किल से प्राप्त होने वाली। पशुबल का व्यापारी=जानवरों की शक्ति के द्वारा कार्य करता था। मरु-मानस-थल=रेगिस्तान के समान सूखा हृदय। रस=प्रेम।

भावार्थ—शेर अफगन को जब सूवेदारी की ऊँची पदवी मिल गई तो उसका अहंकार और भी बढ़ गया। वह स्वभाव से बहुत रूखा, हृदयहीन और कट्टर पंथी था। वह पशुओं के समान शारीरिक शक्ति में विश्वास रखता था। वह बड़ा क्रोधी, कटोर और निडर था।

शासन कार्य करने में वह कभी नहीं सोचता था। जो बात क्रोध में उसके मन में आती वही कर बैठता था। उसका सर ज्वालामुखी पर्वत के समान गर्म रहता था। न जाने कब तक किस पर उबल पड़े। उसका दिल रेगिस्तान के समान सूखा था और उसमें कभी भी प्रेममय जीवन की धारा नहीं बहती थी।

कोमल भाव उसके दिल में वैसे ही नष्ट हो जाते थे जैसे रेत में नदी खो जाती है। उसके भय के कारण मनुष्यता तो बच्चों के समान सो जाती थी। वह मनुष्यता के विरुद्ध आचरण करता था। कला को तो वह बला समझता था। यह तो उसे कभी भी अच्छा नहीं लगता था। वह तो प्रेम आदि को बेकार व्यक्तियों का पागलपन समझता था।

पृ० ८० “संगीत आंख मिलाकर ॥”

शब्दार्थ—लक्ष=उद्देश्य । हरमसरा=अन्तःपुर, स्त्रियों के रहने का महल ।
सहचारी=सखी । हाल=शराब । मगशावक=हरिण के बच्चे ।

भावार्थ—संगीत की महफिल को वह दुश्मन समझता था। साहित्य का नाम सुनते ही वह गुस्से में लाल-पीला होने लगता था। उसके जीवन का उद्देश्य मारना था और वह इसी के नाम की माला फेरा करता था।

स्त्री को वह कामपूति का साधन समझता था । मेहर जैसी सुन्दरी का भी उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । वह अपनी बेगम को अन्तःपुर के भीतर रखता था । उसे वहाँ से बाहर निकालने की इजाजत ही नहीं थी ।

उसने उसके कानों पर, मुँह पर और पाँव पर ताला डाल रखा था। न तो कोई उससे बात करता न वह किसी से बात कर सकती। उसने पद्मी के समान स्वतन्त्र रहने वाली मेहर को पिंजरे में बन्द कर दिया था।

वह बेचारी मीनारों पर चढ़कर अपनी सखी प्रकृति को देखा करती थी तथा आँखों के द्वारा ही हरियाली की उस शराब का रस लेती थी। लताएँ पेड़ों पर चढ़ चढ़ कर तथा हाथ हिला हिला कर उसे बुलाती थीं। हरिणों के बच्चे उससे आँखें मिलाकर उसे वन में चलने को कहते थे।

[illegible]

शब्दार्थ वर=दुल्हा । प्रकृति नटी=प्रकृति रूपी स्त्री । उल्लाह=उत्साह ।
पादप=वृक्ष । वारवधू=वेश्याएँ । गोधूली=संध्या का समय जब गौएँ चरकर
वापिस आती हैं । निशामुख=चन्द्रमा । चारुचन्द्रिका=सुन्दर चाँदनी ।

भावार्थ—जब वसंत प्रकृति रूपी स्त्री का चतुर दूल्हा बनकर आता था; जब हरेक फूल में उस्ताह का सागर लहराता दिखाई देता था, जब वृक्ष फूलों और पत्तों के रूप में नए-नए गढ़ने और वस्त्र धारण करके बराती बने

ये, जब लताएँ वेश्याओं के समान नाच दिखाती थीं,

जब कोयल दूती बनकर सन्देशा सुनाने के लिए आती थी, जब बसंत को मौर पहनाने के लिए आम मौर लिए खड़े हों, जब बसंत संध्या के समय फूलों से सज कर आता था, जब चन्द्रमा प्रकृति की माँग रूपी नदी में लालिमा का सिंदूर भर देता था,

तब मेहर अपनी पुरानी सखी प्रकृति से मिलन के लिए ललचा ललचा कर रह जाती थी और आनन्द के आँसुओं के मोती टपकाकर उसे भेंट करने के लिए हार बनाया करती थी। वह खड़ी होकर वसंत की अनुपम शोभा देखा करती थी और कभी घानों की क्यारी देख कर मन को प्रसन्न करती थी।

जब सुन्दर चाँदनी बिखर कर प्रेम के अमृत की वर्षा करती थी, जब चकोर की आँखें भी नींद के आलस से भर जाती थीं, जब फूलों की पंखुड़ियाँ एक दूसरी से लिपट कर सो रही थीं, जब संसार की हरेक वस्तु चाँदनी के दूध से धुलकर सुन्दर दिखाई देती थी,

पृ८१ “जब

गाकर ॥”

शब्दार्थ—खग बाला=छोटे पत्नी । विनिमय=बदला । कमला सी = लक्ष्मी सी, उपमा अलंकार । तरुणाई=जवानी ।

भावार्थ—जब पत्नी भी डालियों में बने घोंसलों में सोए भूला भूलते थे, उस सुहाग रात में जब दूल्हा फूलों की शय्या पर विहार करता था, तब वह भी प्रकृति से मनोरंजन करने की इच्छा से व्याकुल हो जाती । पर सारी रात बेबसी में काट कर चुपचाप जाकर सो रहती थी,

जब सवेरा होता था और ऊषा संसार भर के सोने को चुरा कर सुनहली बन कर आती थी तथा उसके बदले में ओस के मोती बिखेर देती थी, जब एक ओर तो नीलम सा अंधेरा था और दूसरी ओर लाल सी लालिमा शोभा पाती थी, जब सारे फूल मोहित से होकर चुपचाप मुँह खोले खड़े रहते थे,

जब फूल रूपी सागर से सुगन्धि रूपी लहरें उठती थीं, और उसमें से लक्ष्मी के समान सुन्दर तितलियाँ निकलती थीं, जब हर वृक्ष की जवानी वृक्षों के फूलों के रूप में छलकती दिखाई देती थी, जब लताओं का यौवन फूलों के रूप में भँवरों से क्रीड़ा कर रहा हो ।

जब कौड़िल्ला के फूल मोती के समान बिखरे हों, जब बनगोभी के फूलों से सारा टीला हल्दी से नहाया सा दिखाई देता हो, जब मंदार घुंघरू बजा-बजा कर नाच रहे हों, जब पच्ची जोड़ों में विहार करते करते मस्ती में गा रहे हों ।

“तब बन शोभा जिलाती ॥”

शब्दार्थ—प्रेमवारि=प्रेम का जल । खर कर=तेब किरण ।

भावार्थ—तब मेहर पहले के समान ही वन की शोभा में घूमने के लिए ललचा कर रह जाती थी । लेकिन बेचारी को दरवाजे से बाहर पैर रखने की इजाजत भी नहीं थी । वह उमंग के साथ कलियाँ चुनने को हाथ बढ़ाती थी लेकिन फिर ठडी साँस खींच कर मन मार कर रह जाती थी ।

वह पक्षियों का आजादी से उड़ना देख कर उनसे ईर्ष्या करती थी । तब उसकी आँखों से आँसू बहने लगते थे और वह शीशे में देखती तो उसे आँखों से भरना सा बहता दिखाई देता था । उसकी आजादी छीन ली गई थी । सारे सुख छिन गए थे । बस, झरोखे से प्रकृति की शोभा देखकर ही वह थोड़ा सन्तोष कर लेती थी ।

शाल के समान उसके हृदय को पहले सलीम के प्रेम रूपी जल ने खींचा था । लेकिन शेर अफगन रूपी सूर्य ने अपनी क्रोध की किरणों से उसका सारा जीवन रूपी जल खींच लिया था । वह बादल तो देखती थी लेकिन उसे जल नहीं नसोब होता । इसलिए वह सूखती चली जा रही थी । किन्तु वह आँखों से आँसुओं की वर्षा करके हृदय के धान को जीवित रखती थी ।

पृ० ८२ “विश्व-सृष्टि होकर हाला ॥”

शब्दार्थ—विश्वसृष्टि का उषा काल=संसार का आरंभिक युग । प्रकृति-नटी=कौमार्य कली=प्रकृति रूपी नर्तकी की कुमारीपन रूपी कली—रूपक । अलिंगण=भँवरे । दुकूलिनी=नदी । दुकूल=किनारा । चारु चितेरा=सुन्दर चित्रकार । अक्षत=बिना काटे हुए । हाला=शराब ।

संसार के आरंभिक युग रूपी उषा काल में जल एवं थल में सर्वत्र ही पवित्रता थी । तब प्रकृति रूपी नटी की कुमारीपन रूपी कलियों के साथ भँवरे छेड़छाड़ नहीं किया करते थे, कुमारियों को पुरुष नहीं छेड़ा करते थे,

जब संसार रूपी सागर अत्याचारी व्यक्तियों रूपी मगरों से नहीं भरा था, जब नदी के किनारे नगरों से पापमय नहीं हुए थे वरन् हरे भरे और पवित्र थे,

जब सूर्य चित्रकार बन कर नदी रूपी चित्रपट पर किनारों के वृक्षों, फूलों और लताओं का सुन्दर चित्र बनाया करता था, जब वृक्षों को कोई काटता नहीं था और वे बढ़ते रहते थे, जब लताएँ भी स्वच्छन्दता के साथ बढ़ा करती थीं, जब नदियाँ भी आजादी से बिना किसी बाधा के बहा करती थीं,

जब सागर की पवित्र छाती पर जहाजों को बढ़ाकर कोई मूँग नहीं दलता था, जब कोई भी जहाज नदियों की छाती नहीं चीरा करता था, जब सीता के दुखों से घग्गी की छाती नहीं भरी गई थी, जब किसी भी दुःशासन रूपी कठोर व्यक्ति ने इसकी शोभा का नाश नहीं किया था,

तब अंगूर रूपी बालाएँ लज्जा की मूर्ति के समान लताओं में छिपा करती थीं और वे शराब बन कर प्यालों में नहीं बहती थीं।

“हृदय-क्षेत्र

लाने को ॥”

शब्दार्थ—द्वेष=शत्रुता । सपिंडज=मानव । शातिकुल=जाति और कुल । तडित=बिजली । कर्णधार=मल्लाह, ईश्वर । आवर्त चक्र=भँवर । रसा=घरती । छद्मवेष=घोके का वेष ।

भावार्थ—उस युग में व्यक्तियों के हृदयों में ईर्ष्या, शत्रुता, मोह, और स्वार्थ नहीं था सब जगह केवल अनुगम था । सब के सब प्रेम से भरे रहते थे और समानता का ही साम्राज्य था ।

जड़ और चेतन को, पिता-पुत्र को, बहिन पत्नी को और भाई को सभी सम्बन्धियों को प्यार की डोरी ने परस्पर बाँध रखा था । हृदय स्नेह रूपी बिजली का केन्द्र था जहाँ से प्यार की वह बिजली चारों ओर फैलती थी ।

सब लोग जब संसार रूपी मंच पर अपनी जीवन-लीला पूरी कर लेते थे तो चल देते थे । सब के सब ईश्वर रूपी मल्लाह के नियमों के अनुसार ही जीवन रूपी नौका बढ़ाया करते थे । इसीलिए मार्ग से थिछड़ कर कभी भी छिपी हुई चट्टानों रूपी परेशानियों में नहीं फँसते थे और भँवरों में पड़कर बेकार व्याकुल भी नहीं होते थे ।

वे लोग स्वयं दुखी रहते थे लेकिन औरों को सुखी रखते थे । वे लोक-

सेवा के कठोर धर्म पर चलकर सब कुछ सहन कर लेते थे ।

और जो धरती कभी प्रेम से भरी थी और जहाँ आनन्द की धारा बहा करती थी आज उसी धरती पर खून की नदियाँ बहाई जा रही हैं । सब लोग अपने अपने स्वार्थों से भरे हैं । आज मनुष्य ने खून की नदियाँ बहाने के लिए पेड़ों को काट काट कर जहाज बनाए हैं । आज के लोग सीता जैसी पवित्र स्त्रियों को चुरा कर लाने के लिए धोके के रूप धारण करते हैं ।

पृ० ८३ “मथ डाला गिरते हैं ॥”

शब्दार्थ—कमला=लक्ष्मी, धन । मधुवर्षी=प्रेम बरसाने वाली ।

भावार्थ—मनुष्यों ने धन को पाने के लिए सारा सागर ही मथ दिया है । वे दूसरे देशों की आजादी हरने के लिए जाते हैं शान्ति फैलाने के लिए नहीं । कहीं पर विधवाएँ रो रही हैं कहीं अनाथ बालक तड़प रहे हैं । सभी के सभी एक दूसरे को अपने खून का प्यासा समझते हैं ।

हाय ! किसने संसार के हरे भरे खेल पर पाला डाल दिया है ? किसने रस बरसाने वाली प्रेम की वीणा का शान्त कर दिया है ? यह किसी और का काम नहीं है । जब से मेरी नीच सौत का जन्म हुआ है तभी से संसार में यह सारा तूफान फैला है ।

उसी ने शान्ति भरी इस धरती पर जहर की लता अंकुरित कर दी है । उसी ने लोगों को क्रोधित करके सारे युद्ध सिखलाए हैं । सारा संसार उसकी चमक दमक और उसकी लचक पर न्यौछावर है । वह जिधर एक बार निकल जाती है उधर कइयों के सर बिछ जाते हैं ।

मेरे पति भी उसी के अधीन हैं । हमेशा उसे बगल में लिए फिरते हैं । कितने ही सर फूलों के समान गिरने के लिए उस पर चढ़ते हैं ।

“मोह देवें ॥”

शब्दार्थ—बदजन=नीच ।

भावार्थ—मेरे पति को इस मोहने वाली ने मोह लिया है । जहर सा दुख देने वाली ने मेरे जीवन का सारा सुख लूट लिया है । हे सर्वसुन्दरी सखी ! तू ही बता मैं क्या करूँ ? उसने तो मेरे पति को पूरी तरह से अपना लिया है । उसी के कारण मेरे पति ने मुझ से अपना सम्बन्ध तोड़

दिया है।

इतने में शेर अफगन निकल आया और बोला—“मेहर, मैं छिपकर सब सुन रहा था। तू किस का नाम ले रही है ? तू जो मुझ पर इल्जाम लगा रही है वह सरासर झूठ है। कौन तुम्हारी सौत है ? तुमने मेरे साथ कौन सी पर-स्त्री देखी है ? तू बता किसने मुझे मोहित कर लिया है और मैं किसके हाथों बिका हूँ ?

या खुदा यह दुनिया कैसी है ? जो बात मैंने सपने भी नहीं सोची थी वही आज हो रही है। मेरी पत्नी ही नीच बनकर मुझ पर तोहमत लगाती है। तू जो मुझ पर यह दोष लगाती है तो शीघ्र ही अपनी सौत का नाम बता दे नहीं तो मैं या तो तुम्हें खत्म कर दूँगा या अपना जीवन समाप्त कर दूँगा।

मेहर ने उत्तर दिया “मेरा सर हाजिर है। आप इसे मेरी सौत के हवाले कर दें। अपने हाथ से मेरा खून बहा कर मेरी सौत की माँग में सिन्दूर भर दें।”

पृ० ८४ “है प्रत्यक्ष

सोवेगी ॥”

शब्दार्थ—प्रिय भाजन = प्यारी।

भावार्थ—मैं जो कह रही हूँ वह तो अब भी सामने है। फिर प्रमाण देने की आवश्यकता ही क्या है ? आप किसको बगल में लिये हैं ? यह कौन टेढ़ी सी तुम्हारी बगल में लटकी हुई है ?”

शेर ने उत्तर दिया “यह तो तलवार है। वह तुम्हारी सौत कैसे हो सकती है ?”

मेहर ने उत्तर दिया “यही तो आपकी प्यारी बनी हुई है। इसी के कारण तो लड़ाइयाँ हो रही हैं। इसी के प्रेम में फँस कर आपने सब प्रेम के नाते तोड़ दिए हैं। और आपकी यह उपेक्षा इतनी बढ़ गई है कि मेरा दिल ही टूट गया है।

बस बहुत हो चुका। अब एक म्यान में दो तलवार कभी नहीं रह सकती। आप ही बताइए स्त्रियाँ यह कैसे सह सकती हैं कि उनके पति किसी अन्य से प्रेम करें। अतएव आज आप निश्चय कर दें। हम दोनों में

मे एक को रखिए । या तो आप इसे अलग कर दीजिए या मेरा सर काट दीजिए ।”

शेर बोला “वाह ! वाह !! तुम्हें अच्छी सौत मिली है । तुम भला इसे देख कर क्यों मरना चाहती हो ? यह तो किसी अन्य की मौत बनेगी । तुम्हें इन पचड़ों में पड़ने से क्या काम कि दुनिया कैसे चलती है ? वह जिस प्रकार चलती है उसे चलने दो । तुम चुप रहो ।

जीते जी मैं तलवार को अलग नहीं कर सकता । सारी दुनियाँ और तू भी इसी तलवार के साए में होएगी ।”

“तुम्हे छोड़ दूँ छिपा लिया ॥”

शब्दार्थ—भ्रू तलवार=भौंह रूपी तलवार—रूपक ।

भावार्थ—“मैं तुम्हे छोड़ सकता हूँ । प्यारी से प्यारी चीज त्याग सकता हूँ । लेकिन यह तलवार कभी अलग नहीं हो सकती । तुम चाहे अपनी भौंह रूपी तलवार कितनी ही तानों मुझ पर उसका कोई असर नहीं हो सकता । तुम्हारे इन नखरों में फँसने वाला तो कोई दूसरा ही शिकार होगा ।”

यह सुनकर तो मेहर मानो कट कर रह गई । वह इन शब्दों की चक्की में पिस गई । उसकी आँखें भर आईं और वह दुख में इतनी डूबी कि उसे तन-बदन का होश नहीं रहा । इतने में उनकी पुत्री लैला धूल से भरी दीड़ती हुई आई । उसने जब पिता को क्रोध में देखा और माता को रोते देखा तो तुतला कर क्रोध में बोली—

“तूने मेली अम्मी को माला है । मैं तुम्हे घल से निकाल दूँगी और मैं भी तुम्हे मालूँगी और ।” शेर ने उसके वस्त्र भाड़ कर उसे दूर हटा दिया और लैला ने यह कह कर कि ‘अब्बा खलाब हैं’ उसे दाँतों से काट लिया ।

शेर क्रोध से भर गया और उसने उसे धरती पर फेंक दिया । माता ने उसे उठा कर तुरन्त छाती में छिपा लिया ।

पृ० ८५ “दोनों दुख की लवलेष ॥”

शब्दार्थ—बुभी जहर की=नीच । कीर = तोता । क्षत्रक=क्षत्रियों का ।

भावार्थ—शेर यह कह कर कि ‘दोनों ही नीच हैं’ बाहर चला गया । लैला जोर-जोर से रोने लगी और उसकी आँखों में आँसू छलछला आए ।

सर्व सुन्दरी ने आकर उसे गोदी में ले लिया और झूले में झुला कर लोरी गाने लगी ।

हे निन्दिया तू जल्दी आजा । लैला तुझे बुला रही है और इन्तजार में जाग रही है । जब तू आएगी तो लैला तुझे मिट्टी के पकवान बनाकर खिला-एगी और रेत का महल बना कर उसमें सुलाएगी ।

तुझे चम्पाकली पहना कर विजय की माला पहनाएगी और करोंदे के लटकन से तेरा कान सजा देगी । ऊषा से रंगीन चुनगी लेगी बादलों से बिजली लेगी, लहरों से करधनी लेकर और तोतों से कंठा लेकर—

वद तेरा शृंगार करेगी और तुझे दुलहिन बना देगी । और क्षत्रियों के से मंडप में गुड्डे के साथ तेरा ब्याह करेगी । और जब मैं तेरा मुँह देखूँगी तो मैं भी सपनों का देश माँग लूँगी जहाँ हमेशा वसंत रहता है और दुख तिल भर भी नहीं है ।

“आँख

पाई तब ॥”

शब्दार्थ—नखलिस्तान=रेगिस्तान के बीच का वह भाग जहाँ कुछ पेड़-पौधे उग आते हैं और जल भी मिल जाता है ।

भावार्थ—वह निन्दिया लैला की आँखें बन्द करती हुई परदे में छिप कर आ रही है । वह बहुत दूर से आती है इसलिए आते-आते थक जाती है । ध्रुव देश के बच्चे नहीं सोते क्योंकि माँ की पीठ के भोले में पड़े सर्दों के कारण काँप-काँप उठते हैं ।

उसकी माँ जमे हुए सागर में बिजली के प्रकाश के सहारे मछली पकड़ने की घात में बैठी रहती है । जब बर्फ के घर में जाकर बच्चे को भालू की खाल ओढ़ाई जाती है तभी नींद बच्चों को थपकी दे-देकर सुलाती है ।

रेगिस्तान के बच्चे ऊँटों के ऊपर माँ की गोद में बैठे-बैठे हिचकोले खाया करते हैं । इसीलिए वे भी नहीं सो पाते तथा प्यास के कारण ‘मम’ ‘मम’ चिल्लाया करते हैं । लू उनके मुँह को झुलसा देती है । धूप भी उनके चेहरों को जला रही है । और माँ अपने सूखे स्तन बच्चे के मुँह में देकर उसे बहलाने की कोशिश करती है ।

जब ये लोग नखलिस्तान में पहुँचते हैं और बच्चों को जल मिलता है

तथा ठंडक मिलती है तब कहीं जाकर नौद उन्हें सुला पाती है ।

पृ० ८६ “माँ सितारे थी ॥”

शब्दार्थ—शिशु खग = नन्हा पक्षी । शशिनौका = चौद रूपी नाव । दोल = झूला ।

भावार्थ—माँ बहुत समझाती है कि अब अंधेरा हो गया है और अब सो जाना चाहिए लेकिन नन्हा पक्षी तो मानता ही नहीं । वह इधर-उधर उड़ता फिरता है और शान्त होकर बैठता ही नहीं । फिर उसकी माँ उसे गीदड़ों की बोली सुनवा कर डरा कर लाई है । तब कहीं जाकर वह नन्हा पक्षी सोया है ।

इन सब को सुलाकर निंदिया बस अब लैला के पास आने ही वाली है । लो लैला भी जमुहाई ले-लेकर सो गई है । हे मेरी लैला तू चन्द्रमा की नौका के समान झूलने वाले पलने में सोजा । और मेरे नेत्रों के झूले में डोलने वाली पुतली के समान तू सोजा ।

नौद भी भँवरी बन कर तेरे कमल जैसे नेत्रों में सो गई है । अब चारों ओर मेरी लोरी धीमे स्वर से गूँज रही है ।”

इतने में ही उसने सुना कि कोई दूत आया है और उसने यह समाचार दिया है कि इस नश्वर संसार को छोड़कर अकबर परलोक सिंघार गए हैं । उनके बाद जहांगीर गद्दी पर बैठा है । बड़ा उत्सव हो रहा है और सारे देश में जहाँगीर के नाम का ही सिक्का चला दिया गया है ।

यह सुनकर सर्वसुन्दरी दौड़कर मेहर के पास जा पहुँची । वह तालाब के किनारे बैठी नीले आकाश की परछाई में अपने भाग्य के तारे देख रही थी ।

“तारे थाम ॥”

शब्दार्थ—अली = सखी । बाम = स्त्री ।

भावार्थ—उसके नेत्रों के तारे उन तारों की परछाई में पूंछदार सितारे से दिखाई देते थे और उसके आँसू की बूँदें तारों के समान ही टप-टप गिर रही थीं । जब सर्वसुन्दरी ने पीछे से आकर उसका हाथ पकड़ा तो वह चौंक गई । फिर जब उसने देखा कि पीछे उसकी सखी खड़ी है तो उसे धीरज बँधा ।

सर्व सुन्दरी ने हँसकर कहा “एक समाचार आया है कि अकबर शान्त हो गए हैं और जहाँगीर को सिंहासन मिला है ।”

मेहर ने आश्चर्य से पूछा ‘यह कैसे मालूम हुआ ।’ सर्वसुन्दरी ने उत्तर दिया ‘यह खबर सच्ची है क्योंकि अभी-अभी दूत पत्र लेकर आया है ।’

मेहर ने धीरे से आह भरकर कहा “अकबर नहीं रहा है । हे सखि मुझे क्या होगया है ? मेरा जी बैठा जाता है । मेरी तबीयत घबराती है और मेरे सर में चक्कर आता है ।

“मुझे सँभालो । देखो मैं गिर रही हूँ ।” यह कहते-कहते वह गिर पड़ी । सर्वसुन्दरी ने तुरन्त ही उसे अपने हाथों में थाम लिया ।

पृ० ८७ “आगे

व्यापार ॥”

शब्दार्थ—सतत = निरन्तर । कारागार=जेल । अनीति=अन्याय ।

भावार्थ—या खुदा आज मैं यह क्या देख रही हूँ ? और न जाने आगे क्या-क्या देखना पड़ेगा ? क्या मनुष्यों में एक दूसरे के प्रति प्रेम नहीं रह गया है ? क्या सारी दुनिया निष्ठुर हो गई है ? क्या स्त्रियों का दिल होता ही नहीं जो उन्हें पुरुषों ने अपने हाथ की कठपुतली बना रखा है ? क्या उनका जीवन यही है कि पुरुष जैसे चाहें वैसे ही वे नाचा करें ।

स्त्रियाँ निरन्तर जड़ बनी हुई घर की कैद के भीतर बन्द रहें ? उन्हें आजादी से घूमने का अधिकार भी नहीं मिला है । पुरुष तो मनमानी किया करते हैं और स्त्रियों को बोलने की भी छूट नहीं है । पशु भी आजादी से घूमते हैं लेकिन स्त्रियों पर विश्वास नहीं किया जाता और उन्हें कैदी के समान रखा जाता है ।

अन्याय की सीमा होती है । कैद की भी हद होती है । पुरुष अपने अहंकार और मद में चूर होकर अपने सामने सब को मूल्यहीन समझता है । माना कि स्त्रियों के कई कर्तव्य हैं और उन्हें अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए लेकिन उनके अधिकार भी तो हैं । कठोर पतियों ने पत्नियों पर बहुत अत्याचार कर लिया है । अब यह बन्द हो जाना चाहिए ।

यदि पति और पत्नी के बीच प्रेम नहीं है, अन्धका वर्ताव नहीं है तो निकाह स्त्रियों को छलने के साधन के सिवा और कुछ भी नहीं है ।

“अपना

दिखावेगा ॥”

शब्दार्थ—दम्पति=पति-पत्नी । वैभव=संपत्ति । विलास=आनन्द । मृग-
तृष्णा=मृगजल । जिल्लत=अप्रमान ।

भावार्थ—अगर पति-पत्नी अपना अपना कर्त्तव्य समझें तब तो शादी में सुख है । और अगर बिना प्यार के केवल व्यापार के तौर पर विवाह किया गया तो इसमें दोनों ही बर्बाद हो जाते हैं । मैंने प्रेम का निर्वाह किया । अपने पति के प्रति अपने सम्पूर्ण कर्त्तव्य का पालन किया । अपने दिल को कुचल कर भी मैं अपने मार्ग पर चलती रही ।

मैंने कभी भी अपने मन में कोई अनुचित बात नहीं आने दी । अपने प्रेम के अंकुर को कभी भी सिर न उठाने दिया । और राज्य की कल्पना, संपत्ति और आनन्द भी मेरे मन को अपने पथ से न डिगा सके । मैं बहुत कुछ नहीं चाहती थी । केवल यही आशा थी कि मेरे साथ मानवतापूर्ण व्यवहार किया जाएगा । यही इच्छा थी कि पति-पत्नी के जीवन की जो शान्ति और जो आनन्द है वे प्राप्त हों ।

लेकिन प्रेम तो मृगजल के समान मिथ्या निकला । फिर सुख और आनन्द कैसे प्राप्त हो सकता है ? और मेरे जीवन का बढ़ता हुआ पौधा प्रेम के प्रकाश के बिना अंधकार में घुट रहा है । मैंने अपने पति के अत्याचारों को बहुत सहन किया । लेकिन होते-होते बात यहाँ तक आ पहुँची कि आज उन्होंने मेरी बच्ची को पटक दिया ।

वे मेरे साथ ऐसा कठोर व्यवहार करें । नित्य ही मेरा इस प्रकार अपमान हो । इस आनादर के जीवन से तो अच्छा है अपने प्राण ही दे दूँ । आज के बाद कोई भी मेरे स्वाभिमान में ठोकर नहीं मारेगा । कोई भी मुझे इस प्रकार लाल आँखें दिखाकर नहीं धमकाएगा ।

पृ० ८८ “सर्व सुन्दरी

बनाई है ॥”

शब्दार्थ—इंगित=इशारा । आवेग=जोश । सुरसरि=गंगा । प्रलयंकर=भयंकर । वीचर्यों=लहरियों । सलिल-समाधि=जल की समाधि ।

भावार्थ—हे सर्वसुन्दरी तुम भी कुछ कहो । तुम्हारा क्या विचार है ? क्या मैं इसी प्रकार इस बुरी दशा में पड़ी रहूँ ? नहीं, नहीं अब मैं और नहीं

सहन कर सकती। अब मैं ऐसा नहीं होने दूँगी। मैं अपने कठोर पति के अन्याय को और अधिक सहन नहीं करूँगी।

अब उसके अज्ञानमय अहंकार के भय से मेरा सिर कभी नहीं झुकेगा। अगर प्रेम से कोई इशारा भी करदे तो मैं मर सकती हूँ। मैं अपनी इज्जत खोकर किसी के भी पाँव चाटने को तैयार नहीं हूँ। मैं अपने हाथों से ही अपनी यह गुलामी की बेड़ी काट दूँगी। अपने पति से अलग हो जाऊँगी।”

यह सुनकर सर्वसुन्दरी ने मेहर को समझाते हुए कहा—“हे मेहर तुम शान्ति धारण करो। तुम्हें इस प्रकार जोश और क्रोध में नहीं बहना होगा। तुम को तो धैर्य के साथ जीवन की सारी परेशानियों को सहन करना होगा। अगर वे खारे सागर के समान हैं तो तुम को गंगा के मीठे जल के रूप में बहना चाहिए।

अगर इन में सागर के समान ज्वार-भाटा आता रहे, क्रोध के तूफान आते रहें तो तुम गंगा के निर्मल मधुर लहरियों के समान बहती रहो और उनके मन में प्रेम पैदा करती रहो। सभी लोग खारा जल पीकर थूक देते हैं क्योंकि इससे किसी की भी प्यास नहीं मिटती। किन्तु फिर भी कितने ही प्राणी इसके भीतर रहते हैं। उसी प्रकार तुम भी उनकी कठोरता के बीच जीवन-निर्वाह करो।

“तेरा

तो क्या ॥”

शब्दार्थ—सुधा सलिल=अमृत सा जल। ऊसर=वह धरती जहाँ कुछ भी पैदा न होता हो। बेकल=व्याकुल, बेचैन। प्रांगण=आँगन। आली=सखी।

भावार्थ—तेरा जीवन अमृत सा प्रेम का जल बरसाता हुआ जिधर निकले उधर ही धरती पर और कूलों पर हरियाली लहलहा उठे, फूल खिल उठें। तेरा जीवन तो ऐसा होना चाहिए। तुझे तो धैर्यपूर्वक ऊसर के समान अपने पति को प्यार के जल से सींचना चाहिए और शान्ति के साथ उसके साथ रहकर उसकी बेचैनी दूर करनी चाहिए।

तुम्हें भयंकरता के आँगन में भी जल के समान बहना चाहिए। हे मेहर, तुम्हें शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत करना होगा।

मेहर ने फिर उत्तर दिया “हे सखी तू भूल रही है। तू बहुत भोली है।

इस प्रकार भी दुनिया के काम चला करते हैं ? दुनियाँ की तो यह रीति है कि जो स्वयं नम्र होता है उसे सब दबाते हैं। और जो क्रोध करता है उसके सामने सब झुक जाते हैं।

यहाँ तो सर्वत्र स्वार्थ का ही सम्बन्ध है। सभी अपना-अपना भला देखते हैं। और जो उदार बनते हैं वे भी मेरे समान ही मूर्ख बनकर दुःखमय जीवन बिताते हैं। जो मुझ से नफरत करता है अगर मैं उस पर मर भी जाऊँ तो इससे क्या होगा ? मैं चाहे कितने भी आँसू बहाऊँ, पत्थर कोमल नहीं बन सकता। मैं चाहे कितना भी प्रेम करूँ वे नहीं सुधर सकते।

पृ० ८६ “स्नेह तब इन्कार ॥”

शब्दार्थ—विद्युत=बिजली। प्रतिरोधी=विरोधी। हिम=बर्फ। सिकता=रेत। शिष्टता=सभ्यता। विवाहविच्छेद=तलाक।

भावार्थ—जब दो दिल एक दूसरे से मिलते हैं तभी तो प्रेम होता है। जब सूर्य की किरणें कमल को प्यार से थपथपाती हैं तभी तो वे खिलते हैं। और जब बिजली की दो विरोधी धाराएँ एक दूसरे से टकराती हैं तो उसका परिणाम यही निकलता है कि आग भड़क उठती है।

अब तो मेरे जीवन में भी यही आग भड़क उठी है। मैं अगर पूरब में हूँ तो वे पच्छिम में। दोनों एक दूसरे के ठीक विपरीत। वे तो आग के समान तेज होते ही चले जा रहे हैं और मैं शान्ति में बर्फ होती जा रही हूँ। अगर ऐसा ही चलता रहा तो मेरा नाश निश्चित है। मैं शीतल स्वभाव की हूँ। वे क्रोधी हैं। फिर हम दोनों एक साथ कैसे रह सकते हैं। तेलहीन रेत से कभी तेल नहीं निकल सकता। इसी प्रकार उनके बदल जाने की आशा करना भी बेकार है।

मैंने उनके साथ जो हो सकता था, किया; लेकिन कभी सफल नहीं हुई। वे अगर प्रेम नहीं करते तो सभ्यता का व्यवहार तो करें। और अब मैं लोहे का जवाब लोहे से देने के लिए तैयार हूँ। अब मैं नदी नहीं बनूँगी बल्कि तालाब बनकर रहूँगी और उसमें अपने प्रिय को विहार कराऊँगी। और इन से तलाक लेकर मैं अलग हो जाऊँगी।”

सर्व सुन्दरी ने उत्तर दिया—“हे सखि ! तुम ठीक कहती हो। अगर

निकाह व्यापार ही है तो लैन-दैन के आधार पर ही यह चल सकता है । अगर वे अपने शरीर और अपने मन को तुम पर न्योछावर करके तुम्हारा मूल्य नहीं चुकाते तो तुम भी उनसे प्रेम करने से इन्कार कर सकती हो ।”

“ब्याह तन मन ॥”

शब्दार्थ—मुआहिदा=निश्चय । विच्छेद कर=तोड़कर । दैहिक संसर्ग=शारीरिक मिलन । करार=वचन । हर्जा=नुकसान की कीमत, हर्जाना । युगल=दोनों ।

भावार्थ—अगर विवाह एक ऐसा निश्चय है जिसे सभी छोड़ सकते हैं, अगर इस धार्मिक बंधन को तोड़कर सभी अलग हो सकते हैं, तब तो तुम भी अपने पति को छोड़कर अलग होने में स्वतंत्र हो कि मनमाना सौदा कर लो । अगर यह वर पसंद नहीं तो कोई और खोज लो ।

लेकिन मेरा उद्देश्य दूसरा था । मैं तुम्हें देवी बनाना चाहती थी । मैं यह चाहती थी कि तुम नश्वर शारीरिक सुख को छोड़कर शाश्वत सुख के मार्ग पर चलो । लेकिन वह मार्ग बड़ा कठिन है । उसमें बड़ी कठोर प्रेम की परीक्षा देनी पड़ती है । उस मार्ग में निष्काम भक्ति की पूरी-पूरी शिक्षा मिलती है ।

मेरे धर्म के अनुसार तो विवाह का नाता अमर है । वह एक जीवन का नहीं, वरन् जन्म-जन्म का नाता है । कभी नहीं टूटता । विवाह केवल शारीरिक मिलन ही नहीं है वह सौदेबाजी भी नहीं है । और हर्जाना देकर विवाह को तोड़ देने की रीति भी अपने यहाँ नहीं है ।

हमारे यहाँ तो विवाह धर्म का बंधन है जिसमें दो जीवन एक दूसरे से मिल जाते हैं । यह वह धारा है जिसमें दो शरीर और दो मन परस्पर मिल जाते हैं ।

पृ० ६० “वर तरु सिखलाता है ॥”

शब्दार्थ—वर तरु=दूल्हा रूपी वृक्ष । विलग=अलग ।

भावार्थ—हमारे धर्म में तो स्त्री लता के समान दूल्हा रूपी वृक्ष से लिपट जाती है और उसके साथ एक होकर उसी के साथ मिट जाती है । वह अपना तन, मन और धन सब कुछ पति पर न्योछावर कर उसकी पूजा करती है

और उसी की सेवा में पूर्ण सुख पाती है।

उसे अपने सुख दुख का तो कोई ज्ञान ही नहीं रहता। वह तो प्रेम में पागल हो जाती है। वह अपने पति के सुख और दुख को ही सारी दुनिया समझती है। वह प्रेम में इतनी लीन हो जाती है कि वह अपनापन बिल्कुल मिटा देती है। वह अपने पति के स्वर में लीन होकर एक राग बन जाती है।

जब पत्नी पति से अलग ही नहीं तो फिर वह भले-बुरे की शिकायत क्या करे। जिस प्रकार जल वृद्ध को सींचता-सींचता उड़ जाता है उसी प्रकार वह भी पति की सेवा में अपना जीवन बलिदान कर देती है। यद्यपि वह कोमल है लेकिन उसमें पति-प्रेम की अपार शक्ति होती है। और इसी शक्ति के सहारे वे पतियों के साथ सती होकर भस्मसात् हो जाती हैं।

इसी प्रेम में पागल होकर फरहाद न्योछावर हो गया था और इसी प्रेम में पड़कर शरीर ने अपनी जान तक दे दी थी। मेरा धर्म यह शिक्षा देता है कि पति के साथ ऐसा ही प्रेम करना चाहिए और निष्काम भाव से पति की सेवा करनी चाहिए।

“मेरी अभिलाषा

सपने में ॥”

शब्दार्थ—प्रेमप्रसूनराशि=प्रेम के फूलों की राशि। पार्थिव-विलास=सांसारिक सुख। किरीट मणि=मुकुट की मणि।

भावार्थ—मेरी इच्छा थी कि मेहर ! तू भी इसी प्रेम में विभोर हो जाती और अपनापन भूल कर पति की सेवा में ही लीन हो जाती। तब तो मनुष्य-सुलभ सारी कमजोरियाँ दूर हो जाती और तू देवी बन जाती। ईश्वर करे तुझे पवित्र बुद्धि मिले और तू आदर्श स्त्री बन जाए।

तेरे प्यार के फूलों में अनेक क्रोध आदि के काँटे खो जाएँ और तेरे शान्त गगन के नीचे वे घरती के समान सोकर विश्राम करें। तू नित्य ही ऊपर-ऊपर उठती चली जाए। ऊपर उठने का मार्ग काँटों से भरा हुआ है। और इधर सांसारिक सुख बार-बार व्यक्ति को अपनी ओर खींच कर कहते हैं कि संसार बड़ा आकर्षक है।

लेकिन यह याद रख कि चार दिन की जिन्दगी है। इसलिए कभी भी अपने मार्ग से गिरना मत। तू अमूल्य हीरा है इसीलिए तो मुकुट के नग के समान सर्वश्रेष्ठ बन कर रह।”

सर्वसुन्दरी की ये सब बातें सुनकर मेहर को होश आया और वह बोली “हे! सखी मैंने जो अनुचित बातें कहीं हैं उनके लिए मुझे क्षमा करो। आखिर मैं स्त्री हूँ और दुर्बल भी हूँ। जीवन से संघर्ष करते-करते मैं हार गई थी। मैं मन पर पूरी तरह विजय नहीं पा सकी थी। मैं बहक गई थी। मेरा मन अपने आप में नहीं था क्योंकि वह संसार की वासना के भोकों में भूल रहा था।”

पृ० ६१ “तूने

आवेगा ॥”

शब्दार्थ—लगाम लगाऊँगी=वश में लाऊँगी। महा उदधि=विशाल सागर। दोलित=डगमगाती। मन-मारुत=मन की आँधी। प्राची-ललाट=पूर्व दिशा का मस्तक। पुरवाई=पूरब की वायु। उद्योग=प्रयत्न।

भावार्थ—“मैं पहले सो रही थी। लेकिन तू ने मुझे जगा दिया। तूने ही मुझे पतन की खाई में गिरने से रोक दिया। सचमुच तुझे पाकर मैं अपने आप को भाग्यशाली समझती हूँ। अब मैं फिर से मन के साथ युद्ध करूँगी और उसे वश में लाने की कोशिश करूँगी। हे मन तू जरा मुझे ढील दे मेरा आवेश कम करदे नहीं तो मेरा सारा जीवन ही बर्बाद हो जाएगा।

जब मेरी नाव अँधेरे में विशाल सागर में भटक रही थी, किनारा दूर था और आकाश में कोई तारा भी न था जिसके प्रकाश में मैं अपना मार्ग खोज लेती, जब मेरी नाव लहरों के भूले में डगमगा रही थी और मैं डौँड़ छोड़कर तथा पतवार तोड़ कर घबरा कर बैठी थी,

जब मन का तूफान मेरे जीवन की नाव को बड़ी तेजी से तलाक की ओर ले जा रहा था, तथा जब सागर उसे रोकने के लिए लहरों के पर्वत के रूप में बाधाएँ उपस्थित कर देता था, उसी समय तू पूर्व दिशा के मस्तक पर प्रातः कालीन तारे के समान चमक उठी। मेरे जीवन के अंधकार में तुम प्रातःकाल की लाली के समान चमक उठी और मुझे रास्ता दिखाया।

तू ने ही मुझे मेरी वास्तविक दिशा दिखाई और नाव को सही मार्ग पर

ले आईं । अगर तू न होती तो मेरी नाव न जाने किस विपत्ति के भँवर में फँस कर चक्कर खाती रहती । तुम्हारा उपकार मैं जिन्दगी भर याद रखूँगी । अगर मुझसे आगे भी भूल हो जाए तो मुझे सुधारने की कोशिश करना क्योंकि बाद में और पूरबिया में नाव खेना बहुत कठिन है ।

मैं यथाशक्ति प्रयत्न करूँगी । ईश्वर मेरी नाव पार लगाएगा । आशा है कि मेरा मन जो भटक गया है वह सही रास्ते पर आ जाएगा ।”



बारहवाँ सर्ग

कथासार—इस सर्ग में कवि शेर अफगन की कठोरता और अन्याय का चित्रण करता है। उसके सूबे में एक जमींदार था जिसका नाम नरहर था। उनका एक पुत्र था जिसका नाम विमल राय था। सर्वसुन्दरी उसी की पत्नी थी। वह बड़ा ज्ञानी और धर्मात्मा था। घर-घर उसके सदाचार की चर्चा होती थी और सब लोग उसका आदर करते थे।

एक बार सूबे में सूखा पड़ गया। सभी लोग परेशान हो गये। किसानों की बड़ी बुरी हालत थी। इसलिए वे पूरा कर नहीं दे पाए। कर न आने पर शेर को बड़ा क्रोध आ गया। और उधर मुल्लाओं ने भी अवसर जान कर उसे नरहर और विमलराय के खिलाफ खूब उभारा।

उन्होंने कहा कि विमलराय प्रजा में अशान्ति फैलाता है, सब को कर देने से रोकता है, राज्य के खिलाफ भड़काता है। अगर वह इसी प्रकार कार्य करता रहा और उसे रोका न गया तो क्रान्ति हो जाएगी। शीघ्र ही उसका इलाज होना चाहिए। इतना ही नहीं वह इस्लाम का विरोध कर अपने धर्म का प्रचार करता है। इस प्रकार वह हर प्रकार से दंडनीय है। उसे कठोर दंड मिलना चाहिए ताकि अन्य व्यक्तियों को भी कान हों।”

यह सुनकर शेर क्रोध में आगबबूला हो गया। तुरंत सेना को लेकर नरहर पर घावा बोल दिया। उसके घरों में आग लगा दी और उसे खूब पीटा। उसके बाद विमल राय को कैद कर वह अपने साथ ले आया और उसे जंजीरों में जकड़कर डाल दिया।

एक दिन उसे नंगी तलवार दिखा कर शेर ने कहा “हे ब्राह्मण ! तू बड़ा भोला बनता है मगर असल में तू बड़ा मक्कार है। तू मेरे विरुद्ध जनता को भड़काता है और षड्यन्त्र करता है। तू अपने धर्म की भी उन्नति करने की कोशिश करता है। मैं अभी तुझे हलाल करता हूँ। अभी तेरे खून से धरती को लाल कर दूँगा।

या तो तू कलमा पढ़कर इस्लाम धर्म मान ले नहीं तो मैं तुम्हें अभी समाप्त कर दूँगा। अगर तू मस्जिद में चलकर इस्लाम धर्म मान ले तभी तू बच सकता है, नहीं तो दुनिया की कोई ताकत तुम्हें नहीं बचा सकती। अगर तूने इन्कार किया तो यही तुम्हें खत्म कर दूँगा।”

उसकी बातें सुनकर विमलराय जरा भी भयभीत नहीं हुआ और हँस कर बोला—“तू मुझे क्या मार सकता है। मुझे तो कोई भी नहीं मार सकता। मैं आत्मा हूँ, अजर-अमर हूँ। तू मुझे शस्त्रों से नहीं काट सकता। तू जिसे मारना समझता है वह तो मेरी आजादी है। फिर मैं स्वच्छन्द विचरण करूँगा।

लेकिन मुझे यह नहीं मालूम हुआ कि मेरा क्या दोष है? क्यों तुम मुझे मारना चाहते? राजा तो प्रजा के लिए पिता के समान होता है। तुम्हें तो सब की रक्षा करनी चाहिए। और जो राजा प्रजा को बिना दोष के ही दंड देता है उस पर खुदा की मार होती है।

तुम्हें तो यह चाहिए कि प्रजा के दुखों को दूर करो। जो भूखे नंगे हैं उन्हें खाना और वस्त्र दो। अपना धन प्रजा की भलाई के लिए खर्च करो। तुम जैसे वीर और प्रतापी शासक के होते हुए भी यदि प्रजा दुखी हो तो यह कितने अफसोस की बात है। तुम्हें तो क्षमा अपनानी चाहिए।

• और एक बात यह भी याद रखो। तुम्हारा न्याय ही अन्तिम न्याय नहीं है। तुम्हारे कर्मों को भी कोई देखता है। खुदा की अदालत ही सबसे बड़ी अदालत है। वहीं सच्चा न्याय होता है। और खुदा न तो मस्जिद में कैद है और न ही मन्दिर में। वह तो सभी जगह है। जहाँ चाहो उसके दर्शन करो। चाहो तो अपने दिल में उसे पाओ और चाहो तो प्रकृति में उसकी शोभा देखो।”

उस समय मेहर भी विमलराय के कारण बड़ी परेशान थी। वह पति का स्वभाव जानती थी इसलिए और भी दुखी थी। किन्तु फिर भी साहस करके बोली “इसने अपने आपको ईश्वर में मिला दिया है। तुम उसे छोड़ दो। देखो तो इसकी जवान पत्नी सर्वसुन्दरी उसके लिए कितनी दुखी हो रही है। वह अपने नन्हें बच्चे को लिए रो रही है। उसका बूढ़ा बाप भी तड़प रहा

है। आज तो कुछ दया करो, कुछ पसीजो। विमलराय को छोड़कर सब की दुआएँ प्राप्त करो।”

शेर अफगान नाराज होकर बोला, “मुझे तुम्हारी सलाह की आवश्यकता नहीं है। तुम आराम से महल में रहकर भीतर का कार्य देखो। राज्य कैसे चलाया जाता है यह तुम क्या जानो। तुम मेरे कामों में दखल न दिया करो। यह काफिर है। इसे क्षण भर में मिटा दूँगा। तुम मुझे कमजोरी मत दिखाओ।”

यह कहकर वह उसका हाथ झिटक कर विमलराय के पास पहुँचा वह उसी प्रकार निडर था और हँस रहा था। यह देखकर शेर क्रोध से तमतमा गया। और उसने तलवार के एक ही हाथ में उसका सर धड़ से अलग कर दिया। उसकी पत्नी सर्वसुन्दरी उससे लिपट कर मूर्च्छित हो गई।

इसके बाद कवि ने रात के अँधेरे में जलती चिता का वर्णन किया है।

पृ० ६२ “शेर देते कर ॥”

शब्दार्थ—क्षति=हानि ।

भावार्थ—शेर अफगन के सूबे में एक जमींदार था जिसका नाम नरहर था। वह कर्तव्य के पालन में दत्तचित्त रहता था और बड़ा निडर और धर्मात्मा था। उसका एक पुत्र था जिसका नाम विमलराय था। वह बड़ा शानी और धर्मात्मा था। घर-घर उसके सदाचारों की प्रशंसा होती थी।

सूखा पड़ जाने के कारण प्रजा बड़ी दुखी थी और मालगुजारी भी न दे सकी थी। जब पूरा कर नहीं पहुँचा तो शेर का क्रोध भड़क उठा। अवसर देखकर मुल्लाओं ने भी इसे खूब उभारा।

उन्होंने कहा कि विमलराय प्रजा को क्रान्ति करना सिखाता है और किसानों में घूम-घूम कर उनमें क्रोध भर रहा है। वह इस्लाम का विरोध करके अपने धर्म की उन्नति कर रहा है। यह उसी का षड्यन्त्र है कि लोग कर नहीं देते।

पृ० ६३ “कुछ जाँच राम का जपना ॥”

शब्दार्थ—साँसत कर=परेशान कर । सरगना=नेता । जुन्नार=जनेऊ ।

भावार्थ—शेर ने इन सब बातों की जाँच करने की कोशिश न की। जो

कुछ उसे कहा गया वह सब सच समझ लिया। उसे अपने बल का बड़ा अभिमान था और शक्तिशाली सेना पर भी बड़ा घमंड था। ये सब बातें सुन कर वह आगबगूला हो गया और सेना के साथ उसने नरहर पर घावा बोल दिया।

उसकी सेना ने घरों में आग लगा दी। सब से कर मँग कर उनको पीटा गया। उसने नरहर को परेशान कर उसे भी पीटा। फिर वह विमलराय को पकड़ कर अपने साथ ले आया और उसे लांहे की जंजीरों में जकड़ कर अपनी कैद में रखा।

फिर नंगी तलवार उसे दिखा कर कहा “हे ब्राह्मण ! तू बड़ा भोला बनता है लेकिन है तू बहुत मक्कार। तू लोगों का नेता बना है। उन्हें बागी बना रहा है। तथा लोगों को संगठित कर अपने धर्म की उन्नति करता है।

तू मुझ को नहीं जानता। मैं अभी तुझे मारता हूँ और तेरे खून से यह घरती लाल किए देता हूँ। अपना जनेऊ तोड़ कर तू मुसलमान बन जा कलमा पढ़ ले और राम का जपना छोड़ दे।

“तो

रिआया ॥”

शब्दार्थ—हममजहब = समान धर्म वाला। अनल = आग। पावक = आग।

• भावार्थ—अगर तू मुसलमान हो जाएगा तो शायद समान धर्म वाला समझ कर मैं तुझे नहीं मारूँगा। और अगर तू इन्कार करेगा तो तुझे तलवार के घाट उतार दूँगा। अगर जीवित रहना चाहता है तो मस्जिद में चल कर कलमा पढ़ ले। नहीं तो तुझे अभी तलवार के हवाले किए देता हूँ।”

विमल ने बिना डरे सर झुका कर तथा हँसते हुए उत्तर दिया—“मैं मरने से नहीं डरता। लो मेरा सर हाजिर है। तू मुझे क्या मारेगा। मैं तो अमर, अनन्त हूँ। मुझे कोई भी नहीं जीत सकता। मैं जल के समान, आग और हवा के समान हूँ। तू क्या करेगा।

आँधी में मैं गिर नहीं सकता, आग में जल नहीं सकता, जल में गल नहीं सकता और इथियारों से कट नहीं सकता। तू इस शरीर को भले ही नष्ट कर दे। मैं फिर कपड़ों के समान ही नया शरीर धारण कर लूँगा। इस

कैदखाने को छोड़ कर मैं आजाद घूमूँगा ।

किन्तु एक बात यह है कि आपके क्रोध का कोई भी कारण नहीं समझ सका । प्रजा तो राजा पर आश्रित होती है और उसकी सन्तान के समान होती है ।”

पृ० ६४ “मत सुनो

प्रजा दुखारी ॥”

शब्दार्थ— तत्काल=सॉप ।

भावार्थ—“तुम किसी की बात मत सुनो । स्वयं जाकर प्रजा की दशा देखो । निर्दोष व्यक्तियों को मारकर तुम क्यों खुदा के क्रोध को बुलाते हो । सूखा पड़ने के कारण तुम्हारी प्रजा तरस रही है । वह तो दाने-दाने को मुह-ताज है फिर भला तुम्हारा कर कैसे अदा करे ।

तुम स्वयं जाओ और सब दुखियों को धीरज बँधाओ । भूखों को भोजन दो तथा नंगों को वस्त्र दो । राजा के खजाने के असली मालिक तो वही हैं । राजा तो उसकी रक्षा भर करता है । वह तो उस धरोहर पर ऐसे बैठता है जैसे सॉप, जो अपने लिए कुछ भी खर्च नहीं करता ।

खजाने की पाई-पाई उनके भले के लिए खर्च करो । इस पैसे को उनके विरुद्ध मत खर्च करो । जहाँ तक हो सके भलाई हो करनी चाहिए । वे दूसरों को अनाज पैदा करके खिलाते हैं और स्वयं भूखे रहते हैं । तुम महलों में सुख से रहते हो और वे दर-दर भटकते फिरते हैं ।

वे तो अपनी विपत्ति सुनाने तुम्हारे पास आते हैं और तुम उन्हें खाल में बंदी कर देते हो । उनका खून चूस-चूस कर अपना खजाना बढ़ाते हो । यह बात खुदा को अच्छी नहीं लगती । वह भी दया से प्यार करता है । कितने दुख की बात है कि तुम जैसे प्रतापी शासक के होते हुए भी प्रजा दुखी है ।”

“तुम खून

महिलाएं ॥”

शब्दार्थ—भूषण=गहना । रमा=लक्ष्मी । स्वजन=सम्बन्धी । बुत=मूर्ति ।

भावार्थ—“तुम जैसे वीर और शक्तिशाली के लिए तो दया और क्षमा ही गहने हैं । जहाँ प्यार से शासन किया जाता है वहीं पर तो लक्ष्मी का वास होता है । हिन्दू और मुसलमान दोनों ही राजा के लिए बराबर हैं ।

राजा को दोनों पर समान प्रेम रखना चाहिए ।

राजा को न्याय की मूर्ति के समान बैठना चाहिए । न्याय की तुला की डंडी बराबर होनी चाहिए । एक भी पलड़ा भारी नहीं होना चाहिए । कहीं जरा सा भी पासंग नहीं होना चाहिए । राजा के न्याय की तराजू में धनवान, गरीब, अपना-पराया कोई भेद नहीं होना चाहिए । जब खुदा सभी में वास करता है तो फिर भेदभाव कैसा ?

खुदा तो एक-एक ज़र्रे में है । हरेक फूल में उसी की सुगन्धि है । यह सारी दुनिया तो उसी जादूगर का जादू है । फिर काबा में जाने की क्या ज़रूरत ? उसे सिर्फ मस्जिद में ही रखने की क्या आवश्यकता है ? उसे मन्दिर में भी कैद नहीं करना चाहिए । और फिर तुम मूर्ति से क्यों डरते हो ?

यह सारी दुनिया ही खुदा की प्रतिमा है । मैं नदियाँ, ये पहाड़, ये मनुष्य और ये स्त्रियाँ सभी तो उसी के विविध रूप हैं ।”

पृ० ६५ “सब में है रखकर ।”

शब्दार्थ—घूँघट का पट=अज्ञान का पर्दा । मौला=खुदा ।

भावार्थ—“सभी में उस खुदा का प्रकाश है । तुम अज्ञान का पर्दा हटा कर देखो तो तुम्हें मालूम हो जाएगा । यदि तुम दिल के बाट से सब को तोलोगे तो सभी तुम्हारे अपने होंगे ।” यह कह कर वह चुप हो गया ।

मेहर खुद भी इस घटना से बड़ी परेशान और भयभीत थी । पति की कठोरता देखकर आँखों में आँसू भर कर बोली—

“जिसने अपने को उस खुदा से मिला दिया है, जिसने उसके प्रेम में अपने आपको लीन कर दिया है, जो उसी में मस्त रहता है, उस गरीब को मत मारो । वह जो गम्भीर बात कह रहा है उस पर ध्यान से विचार करो ।

देखो तो उसकी जवान सुन्दर पत्नी सर्वसुन्दरी अपने बच्चे को लिए हुए कैसी रो रही है । उसका बूढ़ा बाप भी रो-रोकर जान दिए दे रहा है । जो भी इन लोगों की हालत देखता है वह आँसू भरता है ।

यह विमलराय उस बूढ़े की आँखों का तारा है । यह अंधे की लकड़ी के समान उसका एकमात्र सहारा है । इस बच्चे का मुख देख कर ही कुछ दया करो । इस अभागिन के मुहाग की रक्षा कर इन सबकी रक्षा करो ।”

“सबकी

हस्ती ॥”

शब्दार्थ—सर=जीतना ।

भावार्थ—“इस वक्त विमल को छोड़कर सबकी लाखों दुआएँ लो । जो तलवार से नहीं जीता जा सका उस पर प्रेम से विजय पाओ ।”

यह सुन कर शेर ने कहा—“बस बहुत हुआ, मैंने तुम्हारी बुद्धि की गहराई नाप ली है । यह सत्य है कि स्त्री को दिमाग नहीं मिला है । तुम अपनी सलाह अपने पास ही रखो और जाओ घर का काम-काज देखो । शासन के कामों में तुम्हें बिल्कुल दखल नहीं देना चाहिए ।

धर्म के विषय में वाद-विवाद नहीं हो सकता क्योंकि यह बुद्धि से परे की चीज है । तुम मेरे कामों में दखल मत दो । भीतर जाकर चुपचाप बैठो । मैं दया करना नहीं जानता । मैंने यह सबक पढ़ा ही नहीं । कभी सीधी उँगली से भी धी निकलता है ।

इन बेइमानों को सर उठाने दो मैं सब को पाँव के नीचे कुचल दूँगा । मैं कोड़ों से मार-मार कर एक-एक की खबर लूँगा । तू समझती है कि वह काफिर विमलराय खुदा का बन्दा है । यह गलत है । उस पागल की ओकात ही क्या है । उसे तो अभी मैं चुटकी में ही मसल दूँगा ।”

पृ० ६६ “हे क्षमा

लिपट कर ।”

शब्दार्थ—फसाद=भगड़ा ।

भावार्थ—“दया और क्षमा तो दुर्बलता की निशानी है । उसे तो जनाने और हीजड़े ही अपनाते हैं । यह तुम क्या उलटा पाठ पढ़ाने आई हो । मैं तो मर्द सिपाही हूँ और मौत से खेला करता हूँ । चाहे दुनिया मेरे खिलाफ हो जाए फिर भी मैं डरता नहीं हूँ ।

मैं तो डंडे की शक्ति पर विश्वास करता हूँ और इसी से बड़े-बड़े भूतों को भगा देता हूँ । और अपनी शक्ति के भरोसे मैं किसी से भी ताल ठीक कर भिड़ सकता हूँ ।

तुम मुझे इन भूखों और नंगों का डर दिखाने के लिए आई हो । मुझे यह सिखाने आई हो कि मैं इन पर अपना सारा खजाना छुटा दूँ । मैं और कुछ भी सुनना नहीं चाहता । बेकार समय बर्बाद न करो । तुम्हें दूसरों की

क्या चिन्ता । जाओ और आराम से सो जाओ ।

अब मैं विमलराय का फैसला करने जाता हूँ । मुझे रोको मत । उसके मरते ही अपने आप सब भगड़ा शान्त हो जाएगा ।” यह कह कर वह मेहर का हाथ भटक कर बाहर आगया और देखा कि विमलराय हँसता हुआ वैसे ही निडर खड़ा है ।

यह देख कर वह क्रोध से काँप उठा, उसे ठोकर मारी और उसकी गर्दन पर तलवार का भरपूर वार किया । उसका घड़ अलग गिर पड़ा और सर अलग जा गिरा । यह देख सर्वसुन्दरी उससे लिपट कर मूर्च्छित हो गई ।

इसके बाद कवि ने रात में विमलराय की चिता का वर्णन किया है ।

“अंगारे करता ॥”

शब्दार्थ—भँवा-भँवाकर = सुलग सुलग कर । छार = राख । रजत = चाँदी ।

भावार्थ—पश्चिम के आकाश की अंगारों सी लालिमा जल-जल कर राख सी अधियारी में बदल गई है । भरने जो पहले सुनहले पानी वाले दिखाई देते थे अब सफेद चाँदी की धारा के समान दिखाई देते थे । वृद्धों की छाया किरणों के साथ ही सोने के लिए चली गई क्योंकि उसे अलग रहना अच्छा नहीं लगा ।

पक्षियों का समूह जो दिन भर इधर-उधर उड़ता फिरता था, अब ईश्वर को धन्यवाद देकर घोंसलों में विश्राम कर रहा था । केवल एक कौवे का जोड़ा काँव-काँव करता घबरा कर इधर-उधर उड़ रहा था ।

पृ० ६७ “नहीं बसेरा संसार ॥”

शब्दार्थ—बायस=कौए । रसना=जिह्वा । विभावरी=रात । कमलावाहन = उल्लू । रजनीगंधा=रात की रानी । करारा=किनारा । टिट्टिभ=टिट्टहरी ।

भावार्थ—इस अंधकार में उस जोड़े को अपना घोंसला नहीं मिल पा रहा है । वे अंधकार में एक-एक वृद्ध को ध्यान से देख रहे हैं । वे आकाश से आते आते खाने में पिछड़ गए थे । इसीलिए अब वे तेजी से इधर-उधर उड़ते जा रहे हैं ।

वृद्ध सब शान्त हैं । शोर मचाने वाले पक्षों की जिह्वा भी चुप है । रात

अपने केशों को खोलकर चली आ रही है। भँवरे फूलों से बात नहीं करते। तितली बिना पर हिलाए शान्त है। नींद सब की आँखें बन्द करती हुई एक परदा सा डाल रही है।

जब रात की रानी की कली कहीं भी चटकती है तो उसकी आवाज सुनकर उल्लू एकदम आँखें निकाल कर चिल्ला उठता है। तारे नदी रूपी शय्या पर सो गए। लहरें उन्हें थपकियाँ दे रही हैं। नदी का स्वर भी धीमा पड़ गया है जैसे मोथा और सिवार से उसका गला रुँध गया हो।

घास की जड़ कटे हुए किनारे से लटक रही है। जब हवा चलती है तो उसके हिलने से खड़खड़ाहट होती है। जब कभी अँधेरे के कारण नाव रेत में अड़ जाती है तो मल्लाह उसे पकड़ कर धकेलता है और आगे बढ़ाता है।

जब कभी उसका पाँव टिटहरी के अड़े पर पड़ जाता है तो वह शोर मचा-मचा कर आकाश को सर पर उठा लेती है। दूर गाँव से कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आ रही है, पास के खेत में गीदड़ चिल्ला रहे हैं। इनके शोर से शान्ति नष्ट हो रही है। चारों ओर धुँआँ भी फैलता जा रहा है।

एक चिता जल रही है जिसका धुँधला प्रकाश आ रहा है। कोई उसके पास ही मूर्च्छित पड़ा है। उधर किनारा अँधेरे से भरा है उधर उसका संसार अंधकार से भर गया है।



तेरहवाँ सर्ग

कथासार—इस सर्ग में कवि ने जहाँगीर की मनोदशा का चित्रण किया है। जहाँगीर अकेला बैठा सोच रहा है—“आज मैं भारत का सम्राट् बन गया हूँ। सारी संपत्तियाँ और सुख प्राप्त हैं। कल तक मैं कुछ भी नहीं था। केवल दूसरे के इशारों पर चलने वाला दास। मेरी कोई हस्ती न थी। मेरी इच्छा का कोई मूल्य नहीं था। कोई आजादी नहीं थी। हर वक्त दूसरे के आदेश का भय लगा रहता था।

आज जमाना बदल गया। अब मैं उस ताज का मालिक हूँ जिसके सामने कभी मैं सर झुकाता था। पहले मैं सिंहासन का आश्रित था, आज सिंहासन मेरा मुहताज है। मैंने अपने पिता के आदेश के कारण ही वह रत्न खो दिया है जिसे अब पाना असंभव है। उन्होंने मेरी एक ज़रा सी इच्छा भी नहीं पूरी होने दी।

यह सारा राज्य भी उसके सामने तुच्छ है। मेरे पास सब कुछ है। ऐशो आराम है। परियों सी सुन्दरियाँ मेरे एक इशारे पर जान न्यौछावर करने को तैयार हैं। महफिलें हैं। दोस्त हैं। हकूमत है। फिर भी दिल उदास है। मन वेबस सा उचाट हो जाता है।

ये वही बाग हैं जहाँ हम कलियाँ तोड़ा करते थे। कुंजों में बैठकर प्रेमालाप किया करते थे। प्रेम की मस्ती में भूमा करते थे। आँखमिचौनी खेला करते थे। किन्तु इन सब में अब वैसी खुशी नहीं, वैसी बहार नहीं। एक मेहर के बिना सब सूना-सूना लगता है।’

फिर अचानक ही उसे ध्यान आया कि मैंने नाहरसिंह को बुलाया था वह अभी तक नहीं आया। इतने में ही वह आ गया और बोला—सरकार आपकी सूचना मिलते ही हाजिर हो गया हूँ। क्या आज्ञा है ?

जहाँगीर ने उत्तर दिया “मैं तुमसे एक काम करवाना चाहता हूँ। और

तुम्हें सैनिक से सेनानायक बना दिया जाएगा। इज्जत मिलेगी, धन मिलेगा, ऐशो-आराम मिलेगा। बस मेरे मार्ग का एक कौंटा दूर कर दो” यह कहकर उसने उसके कान में कुछ कहा और दो तोड़े दे दिए। वह कार्य करने के लिए चल दिया।

घर पर पहुँच कर नाहरसिंह ने अपनी पत्नी से कहा, “प्रिये, मैं बंगाल एक कार्यवश जा रहा हूँ। वहाँ एक कार्य पूरा करना है और फिर बस तुम रानी बन जाओगी। यह लो दो तोड़े रखो और मुझे जाने की आशा दो।”

उसकी पत्नी ने कहा—“ऐसा कौन सा युद्ध आरम्भ हो गया है जहाँ आप जा रहे हैं? जो भी हो मैं कामना करती हूँ कि आप युद्ध में सफल हों। क्षत्रियों के धर्म के अनुसार मैं आपको हँसी-खुशी बिदा करती हूँ। जब आप विजय की पताका फहराते हुए वापिस आएँगे तो मैं गर्व के साथ आपके चरणों की पूजा करूँगी। अच्छा यह तो बताइए कि आप कौन सा कार्य करने जा रहे हैं?”

नाहरसिंह ने उत्तर दिया—“घबराओ नहीं। मैं युद्ध के लिए नहीं जा रहा हूँ। बस एक दुष्ट व्यक्ति को मार कर शीघ्र ही वापिस आऊँगा। अगर सफल हुआ तो पद और सम्मान मिलेगा नहीं तो वीरगति प्राप्त कर लूँगा।”

उसकी पत्नी ने रोष में कहा—“क्या आप हत्या करने जा रहे हैं! यह आपने क्यों स्वीकार किया? क्या ऐसा करने से क्षत्रिय कुल का सारा मान नष्ट नहीं हो जाएगा? हमारे पूर्वज हमें नहीं धिक्कारेंगे? क्या थोड़े से धन के लिए आप अपने कुल की हँसी कराएँगे? अगर एक बार आपने मर्यादा का उल्लङ्घन कर दिया तो जीवन भर आप उसे नहीं पा सकेंगे।

ऐसे धन से तो अच्छा है कि हम भीख माँग-माँग कर मर जाएँ। हमें हमेशा ईश्वर से डरना चाहिए। पशुओं के समान हत्याएँ करने में क्या बहादुरी है।

अगर मरना ही है, अगर शस्त्र उठाना ही है तो शत्रुओं पर उठाइए। अपने धर्म और जाति की रक्षा के लिए उठाइए। अपनी वीरता दिखा कर जन्मभूमि का गौरव बढ़ाइए। विधर्मियों से अपने धर्म और सदाचार की रक्षा करते हुए वीरगति प्राप्त करें। ऐसी कायरता सुनने से पहले मैं मर क्यों न

गई। यह नीच कार्य करने के बाद मुझे मुँह न दिखाना। अगर आप इस कार्य के करने पर अड़े ही हैं तो पहले कटार लेकर मुझे मार दीजिए।”

पत्नी की ये बातें सुनकर नाहरसिंह को भी पश्चात्ताप हुआ और वह तुरन्त जहाँगीर के पास गया तथा तोड़े वापिस कर क्षमा माँगी। फिर पता नहीं, पत्नी को लेकर किधर चला गया।

पृ० ६८ “सम्राट्

दुस्तर ॥”

शब्दार्थ—विभूतियाँ=संपत्तियाँ। आनन्द-अर्क=आनन्द रूपी सूर्य। क्लेश-शर्वरी=दुख रूपी रात—सांगरूपक अलङ्कार। जनकदेव=पिता। दुस्तर=कठिन।

भावार्थ—जहाँगीर सोच रहा है “आज मैं भारत का सम्राट् बन गया हूँ। सारी संपत्तियाँ प्राप्त हो गई हैं। आनन्द रूपी सूर्य का उदय हुआ है और दुख की रात बीत गई है। मैं कल क्या था और आज क्या हूँ? इन दोनों अवस्थाओं में बहुत अधिक अन्तर है। कल तक मैं जिस ताज को सर झुकाता था आज वही ताज मेरे सर पर है।

कल मेरी क्या हस्ती थी? कुछ नहीं। मैं सिर्फ सिंहासन की छाया पलने वाला मामूली व्यक्ति था। मुझे अपनी आजादी तक न थी। कदम-कदम पर गुलामी थी। मुझे कोई अधिकार प्राप्त नहीं था। केवल आज्ञाएँ ही पालन करनी पड़ती थीं। बस पिता के इशारों पर ही बेबस होकर चलना पड़ता था।

• उस मेहर को अपनाने में भी मेरी इच्छा ठुकरा दी गई। उनकी इच्छाएँ तो पूरी हुईं किन्तु मेरी इच्छा का किसी को कोई ध्यान न था। कितना अन्याय और कितना अपमान सहना पड़ता था। इस गुलामी की वेदी पर मैंने मेहर रूपी वह रत्न खो दिया है जिसे अब पाना बहुत कठिन है।”

पृ० ६९ “यह राज

अकेले हैं ॥”

शब्दार्थ—हृदय-बाट = हृदय रूपी पत्थर। रत्नाकर = सागर। मन-वांछित = मन को प्रिय। शिशुपन=बचपन।

भावार्थ—यह राज-पाट, सिंहासन और धन सब मिलकर भी उसके मूल्य के बराबर नहीं हो सकते। मेरे हृदय रूपी बाट को छोड़कर और किसी की आँख रूपी काँटे उस का मूल्यांकन नहीं कर सकते। हाँ अब मैं आजाद हूँ।

सारी दुनिया मेरी ओर ही ताका करती है। मेरे इशारों पर ही दुनिया का शासन चलता है।

संसार भर के चुने हुए फूलों के समान सुन्दर स्त्रियाँ मेरे महल में हैं। इस रत्नों के सागर में मैं अपने मन की इच्छाओं को पूरा करता हूँ। ये इच्छाएँ इस सागर में उठने वाली तरंगों के भूले हैं। फिर भी पता नहीं क्यों मेरा मन उचाट हो जाता है। किनारे पर आता-आता फिर भाटे के जोर से सागर के बीच जाकर भटकने लगता है।

इस अपार संपत्ति और शान में भी मुझे किसी की कमी देखकर पीड़ा होती है। उसके बिना सारे सुख फीके से लगते हैं। मन को प्रिय जितने भी सुख के साधन हैं वे सब मेरे पास हैं लेकिन फिर भी मेहर रूपी दीपक के बिना मेरे हृदय के अन्तःपुर में अंधकार छाया हुआ है।

यह वही तो बाग है जहाँ से हम फूलों की कलियाँ चुन-चुन कर लाया करते थे। यह वही नहर है जिसमें हम बचपन की नावें चलाया करते थे। ये वही कुंज हैं जहाँ छिपकर हम आँखमिचौनी खेला करते थे। अनेक सुन्दरियाँ हैं लेकिन फिर भी मैं अपने आप को अकेला सा महसूस करता हूँ।

“उस भूले

होगा ॥”

वाक्यार्थ—दोलित करनी=भुलाती। रसना=जिह्वा। पारावत=कबूतर। सेनानी=सेनानायक।

भावार्थ—उस भूले की पेंगो की स्मृति आज भी मन को भूला भुलाती है। हरेक वृत्त के पत्तों की आवाज सुनकर बीते दिनों की कहानियाँ याद आ जाती हैं। अब मैं उस कबूतर को कैसे पा सकूँगा जो मुझे फँसाकर स्वयं निकल गया है। मैंने बहुत कोशिशें कीं लेकिन बदकिस्मती से सब असफल हुईं।

वह मेरा जासूस आरहा है। इसने बहुत देर लगा दी है। “क्यों नाहर-सिंह ! तुम इतनी देर से कैसे आए ? हमने तो तुम्हें बहुत देर से बुलवा भेजा है।”

नाहरसिंह ने उत्तर दिया—“सरकार मैं तो सूचना मिलते ही सर के बल

दौड़ा आया हूँ । हुजुर ने मुझे कैसे याद फरमाया ? मेरे योग्य क्या सेवा है ?

“नाहरसिंह, मैंने तुम्हें सेनानायक बनाने के लिए बुलाया है । आज मैं तुम्हारी उन्नति कर तुम्हें सैनिक से नायक बना दूँगा । बस थोड़ा सा साहस दिखाओ और यह पद तुम्हारा हो गया । मेरे मार्ग का एक कौंटा है । बस उसे रास्ते से हटाना है ।

तुम मेरे विश्वास के आदमी हो । यह काम बहुत चुपचाप करना होगा । बहुत होशियारी से पाँव आगे बढ़ाना ।”

पृ० १०० “कुछ काम समझाया ॥”

शब्दार्थ—विकट = कठिन । मुहिम=कार्य ।

भावार्थ—“कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है । बस एक क्षण का काम है । और कार्य करने के बाद जो इनाम माँगोगे वह मिलेगा ।”

फिर कुछ इधर-उधर देखकर उसने नाहरसिंह के कान में कुछ समझाया और फिर एक आह भरी । ‘तुम्हारा कार्य सफल हो’ यह कहकर उसे विदा किया और सफर खर्च के लिए दो तोड़े दिए । फिर एक कुंज में बैठकर कुछ सोचता हुआ किसी चिन्ता में डूब गया ।

नाहरसिंह अपने घर आकर पत्नी से बोला, “हे प्रिये ! मैं एक कार्यवश बंगाल जा रहा हूँ । तुम्हें रानी बनाने के लिए मैं यह कार्य कर रहा हूँ । ये दो तोड़े ले लो । यह मत सोचो कि ये कहाँ से आए । और जब मैं अपना कार्य करके आऊँगा तब तुम जयमाला पहनाना ।

अगर मैं वापिस आ गया तो हम दोनों मिल कर राज्य करेंगे । और वापिस न आया तो भी न घबराना ।”

“सुनते ही आता ॥”

शब्दार्थ—समर=युद्ध । विमल=उज्ज्वल ।

भावार्थ—उसकी बात सुनते ही उसकी प्रिया व्याकुल होकर बोली—“कहाँ युद्ध आरम्भ हो गया है जो आपने लड़ाई की तैयारी कर दी है ? अगर आप युद्ध में जा रहे हैं तो जाइए और क्षत्रिय-धर्म का पालन करके अमर हो जाइए, विजय प्राप्त कीजिए ।

हे प्रिय ! जब तुम उज्ज्वल पताका फहराते हुए वापिस आओगे तो गर्व से तुम्हारी आरती करूँगी और चरणों की पूजा करूँगी । सिपाही की जिन्दगी भी क्या जिन्दगी है । हर वक्त हथियार सजाए रहता है और सब सम्बन्धों को त्याग प्राण हथेली पर लिए रहता है ।

जब आप युद्धों में चले जाते हैं तो मैं तारे गिन-गिन कर रात काटती हूँ और सूर्य देख कर दिन काटती हूँ । केवल आपकी मंगलकामना करती हूँ, आपके दर्शन करने को जीती रहती हूँ । अच्छा यह तो बताइए कि आप कहाँ क्या कार्य करने जा रहे हैं ? क्या ईश्वर हमको दो दिन भी साथ नहीं रहने देना चाहता ?”

नाहर बोला—“घबराओ नहीं, मैं युद्ध में नहीं जा रहा हूँ । बस एक दुष्ट व्यक्ति को मार कर शीघ्र ही वापिस आऊँगा ।”

पृ० १०१ “या तो कहीं है ॥”

शब्दार्थ—पतित = नीच ।

भावार्थ—“या तो उसे मारकर धन और पद पाऊँगा । और अगर मैं मारा गया तो क्षत्रिय के समान वीरता को मौत पाकर स्वर्ग प्राप्त कर लूँगा ।”

यह सुनकर उसकी पत्नी दुःख से बोली, “तो क्या तुम कायरों के समान छिपकर किसी की हत्या करने के लिए जा रहे हो ? यह नीच कार्य करके क्यों क्षत्रिय कुल के अभिमान को मिट्टी में मिलाते हो ? तुम्हें यह नीच काम करने में जरा भी शर्म नहीं आई ? धन की खातिर तुम अपने पूर्वजों की हँसी करवाने के लिए तैयार हो गए हो ?

इस प्रकार बुरे साधनों से पैदा किया हुआ धन कब तक रह सकता है ? और फिर धन तो वैसे ही नश्वर है, फिर भी पा लोगे । लेकिन यदि एक बार मर्यादा का नाश हो गया तो वह फिर नहीं मिलने की । यदि मरना ही है तो चोरों के समान इस प्रकार मरने से क्या लाभ ? धन के लालच में धर्म और कर्त्तव्य का नाश करके मरने से क्या लाभ ?

अन्यायी व्यक्ति के स्वार्थ की सिद्धि का साधन बनकर मरना भी कोई मरना है ? ऐसी भी सेवा क्या जिसमें व्यक्ति अपनी आत्मा को ही बेच डाले ? सेवक तो हैं लेकिन आप स्वामी की दरेक आज्ञा मानकर मत मरिए । सैनिक भी जो

कार्य कर सकता है उसकी भी तो सीमाएँ होती हैं ।

इसलिए तुम इस नीच नौकरी को छोड़ो, जहाँ ज्ञान का नाम नहीं है । ऐसे गिरे राज्य को छोड़ो जहाँ शासक को स्वाभिमान की ही चिन्ता नहीं है ।”

“ऐसे धन से बचाओ ॥”

शब्दार्थ—अलख जगाना = निर्गुण ब्रह्म का नाम लेना । श्रियों से= शत्रुओं से ।

भावार्थ—“ऐसे धन से तो भीख माँगकर जीना अधिक अच्छा है । ऐसी जिन्दगी से तो अच्छा है कि मनुष्य योगी बन जाए और वन-वन में निर्गुण का ध्यान लगाए । उसमें सदैव आजादी तो है और ईश्वर से भी डरना चाहिए । कायरों के समान इस तरह हत्या करने और पशुओं के समान मारे जाने में भी कोई जीवन है ।

अगर तुम्हें मरना ही है तो देश की खातिर जान दो । गुलामी को नष्ट कर दो । केवल स्वार्थ के लिए विदेशियों का पॉव मत चाटो । चाहे महाराणा प्रताप के समान वन में दाने-दाने को तरसते रहो लेकिन आजादी की लड़ाई में पॉव पीछे नहीं पड़ना चाहिए ।

अगर मरना ही है तो शत्रुओं का सामना करके मरो । अपनी शक्ति दिखाकर जन्मभूमि की शक्ति की धाक शत्रुओं पर जमा दो । जब युद्ध का बाजा सुनकर अपनी जाति शत्रुओं के विरुद्ध डट जाए तब तुम मेघ के समान आगे बढ़ो ताकि दुश्मन काई के समान तितर-बितर हो जाए ।

अगर मरना ही है तो धर्म की खातिर मरो । इससे तुम्हें इस लोक में भी यश मिलेगा और परलोक में भी । और साथ ही तुम विधर्मियों के अत्याचारों से अपने पवित्र धर्म की रक्षा भी कर सकोगे ।”

पृ० १०२ “ऊँची नापा ॥”

शब्दार्थ—भीना है=समाया है । कृतकृत्य=सफल ।

भावार्थ—“तुम्हें ऐसे हाथ दिखाने चाहिए कि तुम्हारी विजय हो और तुम्हारी कटार हमेशा ऊँची रहे । चाहे तुम्हें ईंटों में चुन दिया जाए लेकिन तुम अपने धर्म की राह कभी न छोड़ो । जिसकी नस-नस में पवित्र धर्म समाया हुआ है यदि वह धर्म युद्ध में मारा भी जाए तो यह मौत भी उसका जीवन

ही है ।

मैं तुमको हत्या करने के लिए नहीं जाने दूँगी । इस प्रकार मरने-मारने के लिए बंगाल नहीं जाने दूँगी । आप तो स्थयं सब जानते हैं । फिर मैं क्या समझाऊँ । अच्छा होता यदि मैं ऐसी कायरता की बात सुनने से पहले ही मर जाती ।

यह नीच कार्य करके मुझे अपना मुख मत दिखाना । और अगर तुम ज़िद्द करके जाना ही चाहते हो तो पहले मुझे मार गिराओ ।”

ये बातें सुन नाहर को होश हुआ और वह बोला—“मैं ने जो यह नीच कार्य करने की हामी भर ली सचमुच मैं ने बहुत बड़ी कायरता दिखाई है । अब तुम मुझे और लज्जित न करो । हे वीर स्त्री ! आज तू ने मेरे धर्म की रक्षा करली है । नहीं तो मैं तो अपने कुल का नाम डुबा ही चुका था ।

तुम सी देवी को पत्नी रूप में पाकर मेरा जीवन सफल हो गया है ।

हे प्यारी, मुझ से भारी अपराध हुआ है । मुझे माफ़ कर दो । मेरा तो ऐसा पतन हो गया है कि तुझको मुख दिखाने की इच्छा नहीं होती । जी में आता है कि कटार मार कर यहीं मर जाऊँ ।”

उसकी पत्नी बोली “हे प्रियतम आज तुमने मेरे मुख की गौरव की लाली की लाज रख ली है । कटार का क्या काम । मेरी भुजाएँ अब तुम्हारा हार बनेंगी ।”

इतना कहकर उसने भुजाएँ पति की ओर फैला दीं । उसने प्रेम की लता के समान उसे छाती से लगा लिया । फिर जहाँगीर के पास गया, तोड़े वापिस किए, क्षमा माँगी और छुट्टी लेकर वापिस आया । फिर अपनी पत्नी को लेकर पता नहीं किस ओर चल दिया ।



चौदहवाँ सर्ग

कथासार—संध्या का समय है। जहाँगीर उसकी शोभा देख रहा है। लेकिन वह उदास भी है। उसे रह-रहकर मेहर की याद आती है। वह समझ नहीं पा रहा है कि आखिर उसने क्यों आँखें फेर लीं। क्यों उसने मुझे भुला दिया ?

वह सोच रहा है—“पहले तो उसने बिजली के समान मुझे अपनी ओर आकर्षित किया। किन्तु फिर वह मेरी ओर नहीं आई और मुझे छोड़ गई। वैसे तो स्त्रियों का दिल बड़ा मधुर होता है। लेकिन पता नहीं क्यों मेहर ने आँखें मिला कर फिर आँखें चुरा ली। महारानी होने की इच्छा भी उसके मन को चंचल नहीं बना सकी।

पता नहीं क्यों उसने मेरी दुनिया में अँधेरा कर दिया है। मैंने लाख कोशिश की कि उसे भुला दूँ लेकिन इसमें कभी भी सफल नहीं हो पाया। उसके बिना तो मुझे सारी संपत्ति ही फीकी लगती है। हे जमीला ! तू ही बता मैं क्या करूँ ? उसे कैसे पाऊँ ? मुझे तो उसका रहस्य कुछ समझ में आता नहीं है।

जमीला ने उत्तर दिया कि “अगर उसे आपसे प्रेम होता तो मेरे समान ही वह आप पर तन-मन-धन सब न्यौछावर कर देती। आपके सिवा और किसी का नाम ही नहीं लेती। आपके एक इशारे पर मरने को तैयार हो जाती।”

जहाँगीर ने कहा “तो जमीला क्या मैं विश्वास कर लूँ कि तू मुझ पर मरती है। तुझे मेरे साथ सच्चा प्यार है। मेरा तो हृदय हीन है लेकिन क्या तू दिल से मुझे प्यार करेगी। क्या सचमुच मेरे एक इशारे पर ही मर जाएगी। खूब सोच कर जवाब दो। प्रेम निभाने के लिए तो सर हथेली पर रखना पड़ता है। सोच-समझ कर उत्तर दो।”

जमीला ने कहा — “अगर आप मुझे स्वीकार करें तो मैं लाख बार आपके एक इशारे पर मर सकती हूँ।”

“अच्छा मैं तुम्हें अपनाता हूँ।” यह कह कर जहाँगीर ने सिपाहियों को आवाज दी। जब सेवक उसके पास आ गए तो उसने कहा “अपनी-अपनी तलवारें म्यान से निकाल लो और जैसे ही मैं इशारा करूँ, जमीला का सर काट कर गिरा दो।”

जैसे ही तलवारें चमकीं, जमीला जहाँगीर के पाँव पर गिर पड़ी। क्षमा माँगने लगी और अपनी भूल पर पछताने लगी। उसकी यह हालत देखकर जहाँगीर ने कहा — “तू तो मेरे एक इशारे पर जान देने को तैयार थी न। अब तेरा वह प्रेम कहाँ चला गया? तू मेरी सच्ची प्रेमिका होकर तलवारों से मत भयभीत हो। प्रेम का नाम बदनाम न कर और खुशी खुशी सिर झुका दे।”

जमीला ने कहा — “मुझे तो अपना जीवन प्यारा है। मैं तो केवल बातों-बातों में ही आप से ऐसा कह रही थी। कृपा कर मेरी जानबख्शी कीजिए। अब मैं कभी भी प्रेम का यह नाटक नहीं करूँगी।”

जहाँगीर बोला — “हे कायर तू इसी प्रेम पर गर्व करती थी। तू प्रेम को जानती ही नहीं, क्या चीज है। अच्छा जा मैं तुम्हें मार करता हूँ। और तेरी वासना प्यासी न रहे इसलिए मैं कुतुबुद्दीन के साथ तेरा विवाह भी करता हूँ।”

यह कह कर उसने कुतुबुद्दीन को बुलाया और उसके हाथ में जमीला का हाथ दिया। फिर उसे आज्ञा दी “बंगाल में प्रजा बड़ी दुखी है। विमल-राय के खून की फरियाद लेकर लोग यहाँ तक आए थे। इसलिए तुम जाओ और शेर अफगान से वहाँ की सूबेदारी ले लो। और मेहर अगर यहाँ आना चाहे तो उसे यहाँ भिजवा देना। वैसे भी उसकी खबर भेजते रहना।”

यह सुनकर कुतुब प्रणाम कर वहाँ से चला गया। जमीला बहुत प्रसन्न थी। बोली, “मेरे मन की सब इच्छाएँ पूरी हुई हैं। क्या हुआ जो कुतुब चालीस साल का है। उसे सब अनुभव है। और मैंने तो उसे पूरी तरह अपने बस में कर रखा है। लातें खाकर भी वह गुस्सा पी जाता है।

बस, अब मैं उस पर राज्य करूँगी और अपनी सब इच्छाएँ पूरी करूँगी। जो चाहूँगी करूँगी। कोई भी मुझे रोकने वाला नहीं होगा। मुझ से अगर कोई पूछे तो युवतियों को बूढ़ों से ब्याह करना चाहिए और फिर चाहे वे अच्छा करें या बुरा, सब चलेगा।”

पृ० १०३ “उस तारा

आकर ॥”

शब्दार्थ—तम-परदा=अंधकार का परदा। चन्द्रमुखी=चन्द्रमा के समान मुख वाली—मेहर। मानस=दिल। विरचा है=बना है। विद्युत=बिजली। विद्युत का केन्द्र=बिजली का केन्द्र, मेहर।

भावार्थ—जहाँगीर कहता है “हे संध्या रूपी सुन्दरी! तुम तारे के छोटे से दीपक के रूप में प्रकाश दिखाकर अंधकार के परदे में कैसे ओभल हो जाती हो! रुको! अगर तुम चन्द्रमा जैसे मुख वाली मेहर को कहीं देख पाओ तो मेरी दो बातें उस तक पहुँचा देना।

लेकिन तुम तो अंधकार फैला कर चली गईं। क्या सब स्त्रियों का दिल पत्थर का ही बना होता है? मैं आज तक स्त्री के हृदय का रहस्य नहीं समझ पाया। उसका प्रेम बिजली के समान एक बार प्रकट होकर फिर छिप जाता है।

वह स्वयं तो ध्रुव के समान शान्त रहती है लेकिन चारों ओर अपने आकर्षण का प्रकाश फैलाया करती है। इसी कारण सारे संसारवासियों के मन की सुई उसी ओर घूम जाती है। तब बिजली के केन्द्र के समान मेहर ने पहले तो मुझे चुम्बक बनाया, मेरी ओर वह आकर्षित हुई लेकिन फिर मेरी ओर न आकर किसी दूसरे की ओर खिंच गई।”

पृ० १०४ “रमणी

लीला ॥”

शब्दार्थ—सम्राज्ञी = महारानी। हृदयाम्बुधि=हृदय रूपी सागर। राज-अंशुमाली=राज्य रूपी सूर्य-रूपक। दिवाकर=सूर्य

भावार्थ—“स्त्री का हृदय तो बड़ा प्रेमभरा होता है। फिर पता नहीं कैसे प्रेम दिखा कर, आँखें मिलाकर तथा दिल चुराकर मेहर बिल्कुल बदल गई। महारानी होने की इच्छा आनन्द, सुख और संपत्ति भी उसके मन को चंचल नहीं कर सकी। क्या ऐसा भी संभव हो सकता है।

जो भी हो कठोर मेहर ने ऐसा रँग बदला है कि मैं आज तक उसके दिल के सागर की गहराई नहीं नाप पाया। क्या राज्य रूपी सूर्य और धरती के सिंहासन का सुख दोनों मिल कर मेहर के चन्द्रमा रूपी मुख पर ग्रहण सी छाया नहीं डालते ? क्या इनसे वह चंचल नहीं होती ?

यह तो खुदा ही जाने। लेकिन उस चन्द्रमा ने तो आकर मेरे आनन्द रूपी सूर्य को ही ग्रस लिया है। बहुत कोशिश करने पर भी मैं उसे भुला नहीं पाया। उसके बिना मुझे संसार का ऐश्वर्य भी फीका-फीका लगता है।

हे जमीला, तू ही बता अब मैं क्या करूँ ? उसे कैसे प्राप्त करूँ ? अभी तक मैं उसके हृदय के रहस्य को नहीं समझ पाया हूँ।”

“कुछ भी

मरती है ॥”

शब्दार्थ—निसार करे=न्यौछावर कर दे।

भावार्थ—जमीला ने उत्तर दिया—“यदि मेहर का महाराज से थोड़ा सा भी प्यार होता तो वह मेरे समान ही आपके कदमों पर तन और मन न्यौछावर कर देती। अगर किसी से प्यार हो तो उसी पर दिलोजान से मरना चाहिए। उसे अपने प्रियतम के ऊपर अपना सब कुछ निछावर कर देना चाहिए।

सच्ची प्यार करने वाली तो वह है जो प्रियतम के वियोग में अपने जीवन को ही भार समझे तथा जो अपने प्रिय की एक नजर पर अपना सर्वस्व अर्पित कर दे।”

जहाँगीर ने उत्तर दिया—“तो क्या मैं यह विश्वास कर लूँ कि जमीला मुझ से प्यार करती है। सुख और धन का प्रेम छोड़कर तू मुझ पर दिल से मरती है।”

पृ० १०५ “हृदयहीन

तू कर ॥”

शब्दार्थ—प्रणय=प्रेम। लुद्र=मामूली।

भावार्थ—मेहर तो हृदयहीन है। हे जमीला, क्या तू अपना दिल मुझे दिखाएगी। क्या सचमुच मेरे एक इशारे पर ही मर जाएगी ? खूब सोच लो। प्राणों को हथेली में लेकर प्यार निभाना पड़ता है। अभी मन में सच-समझ कर उत्तर दो। नहीं तो पीछे पछताना पड़ेगा।”

जमीला ने उत्तर दिया “अगर सरकार मुझे प्रेम के साथ अपनाएँ तो मैं लाख बार दिल-जान से मरने के लिए तैयार हूँ।”

जहाँगीर ने कहा “अच्छा, मैं तुम्हें अपनाता हूँ।” यह कहकर उसने आवाज़ दी। सुनते ही हथियार लेकर कई सेवक उसके पास आ पहुँचे। जहाँगीर ने आज्ञा दी—

“अपने हाथों में तलवारें नंगी करके थाम लो और मेरा इशारा होते ही जमीला का सर धड़ से अलग कर दो।”

जब नंगी तलवारें चमकने लगीं तो वह उसके पैरों पर गिर पड़ी और बोली—“अब मुझे माफ़ कीजिए। मेरी जान पर दया कीजिए।”

जहाँगीर मुस्करा कर बोला—“यह क्या कहती हो ! तुम तो मुझ पर जान देती हो। अभी तो मेरे एक इशारे पर तू अपनी जान निछावर करने को तैयार थी। मेरी सच्ची प्रेमिका होकर तू अब तलवारों से क्यों डरती है। अपनी इस मामूली जान के लिए प्यार का मज़ाक मत उड़ाओ।”

“चिल्लाकर

ही वर ॥”

शब्दार्थ—करुणा=दया। मोरु=कायर। चय=चुनना।

भावार्थ—जमीला ने चिल्ला कर तथा रोकर कहा—“हे दयानिधान ! मुझ पर दया करो। मुझ में मरने की शक्ति नहीं है। मेरी जान क्षमा कीजिए। अब मैं कभी भी प्रेम करने की बात नहीं करूँगी। प्रेम पर मरने की बात जुबान पर भी न लाऊँगी। यह हीसला कभी न करूँगी।

जिस प्रकार प्रेमी और प्रेमिका सौ बार बातों ही बातों में एक दूसरे पर मरते हैं उसी प्रकार मैं भी बातों में ही मरने को तैयार थी। अभी तक मेरा काम भौंहों की तलवारों से ही पड़ा था। आज पहली बार मैंने लोहे की तलवारें देखी हैं।

आज मुझे यह सीख मिली है। अब कभी यह गलती नहीं होगी। मैं हाथ जोड़कर क्षमा माँगती हूँ। आप मुझे प्राणों की भीख दीजिए।”

जहाँगीर ने कहा—“इसी प्रेम पर तू गर्व करता थी। हे कायर दिल वाली, तू जा, तुझे माफ़ किया। अभी जीवित रहकर और भी सुख के फूलों को चुन। मुझ को छोकर तेरी वासना प्यासी न रहे इसलिए मैं तेरे योग्य ही यह पति

तुझे देता हूँ ।”

पृ० १०६ “कुतुबुद्दीन अभिवादन कर ॥”

शब्दार्थ—अक्रद=विवाह । गौह=मोती । सुबुकदोश कर=अलग करके ।

भावार्थ—“कुतुबुद्दीन तेरी खातिर मजदूर बना घूमता है । तेरी उपेक्षा देखकर वह आहें भरा करता है । मैं उसी के साथ तेरा विवाह कर देता हूँ । यह सोचकर कि वह बड़ा जोहरी है, तुझ सा मोती उसके हवाले करता हूँ ।” जहाँगीर के बुलवाने पर कुतुबुद्दीन सर झुकाए आ उपस्थित हुआ । कुछ लजाती हुई जमीला का हाथ उसके हाथ में देकर जहाँगीर ने कहा—“मैं ने तुम दोनों को विवाह के बंधन में बाँध दिया । तुम्हारा यह बन्धन कभी न टूटे ।

हे कुतुब ! मैं तुम्हें ढाका का शासक नियुक्त करता हूँ । तुम दोनों शीघ्र ही वहाँ जाओ और चैन से राज्य करो । शेर अफगन के अत्याचारों ने सारी प्रजा में बहुत भारी तूफान सा खड़ा कर रखा है ।

वहाँ असन्तोष की आग लगी हुई है । चारों ओर हाहाकार मचा है । लोग विमलराय के खून की परियाद लेकर यहाँ तक आए हैं । उस शेर को अलग करके सूबे के सारे अधिकार ले लेना । और मेहर को भी सब समाचार देकर समझा देना ।

यदि मेहर वहाँ अपने सम्बन्धियों से मिलना चाहती हो या शेर के कठोर व्यवहार से दुखी हो तो उस दुखिया को तुरन्त यहाँ भेज देना । वैसे भी उसके समाचार देते रहना । मेरा मन लगा रहेगा ।”

जमीला आश्चर्य में भरकर पाँव के नाखून से धरती पर कुछ लिखती रही । कुतुब आज्ञा पाकर और अभिवादन कर प्रिया को साथ ले खुशी-खुशी चल दिया ।

“क्या

खाए है ।”

शब्दार्थ—मुराद=इच्छा ।

भावार्थ—जमीला सोच रही है—“मेरे भाग्य का तारा भी खूब चमका है । मन-मोगी इच्छा पूरी हुई । कुतुब सा पति मिल गया है । सारी इच्छाएँ

पूरी हुई'। यद्यपि उनके बाल खिचड़ी के समान पक गए हैं फिर भी उनकी आयु अधिक नहीं है। उनकी दाढ़ी ने तो अभी चालीस सदियों ही देखी हैं।

पृ० १०७ "दुनिया बघाई है।"

शब्दार्थ-- सफेद या स्याह=भला या बुरा।

भावार्थ-- उनको सारे संसार के अनुभव हैं। वे कभी भी क्रोध नहीं करते। बातें सहने की तो बात ही क्या, वे मेरी लातें सह कर भी क्रोध पी जाते हैं। मुझे भी रूठकर उन्हें तरसाने में तथा बातों-बातों में उन पर रौब जमाने में खूब आनन्द आता है।

उनकी आँखों में रहकर खूब आनन्द मनाऊँगी। अपना काम बनाने को मैं उन्हें बुलबुल के समान अपने ऊपर मोहित कर लूँगी। कौन पागल होगी जो दासी बन के सेवा करने के लिए तथा कैद में रहने के लिए किसी युवक से ब्याह करेगी।

हे स्त्रियो, मेरे अनुभव से लाभ उठाओ। हे युवतियो, वृद्धों से ब्याह करो। फिर तुम से कोई नहीं पूछेगा चाहे भला करो चाहे बुरा करो। मेरी तो खूब बन आई है। जीवन आनन्दमय है। अब तो मेरा राज्य होगा। हे मेरे भाग्य, तुझे लाखों बधाइयाँ हैं।



पन्द्रहवाँ सर्ग

कथासार—जब कुतुबुद्दीन शेर अफगन से अधिकार लेने को पहुँचा तो वह क्रोध में आगबबूला हो गया और बोला “शेर अफगन से सूबा लेना आसान काम नहीं है। क्या तुम यह सोचते हो कि मैं स्त्रियों के समान चुपचाप यह अपमान सह लूँगा? नहीं, नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा। मैंने इस पदवी को महाराज अकबर से प्राप्त किया है। और अपने खून से सींच-सींच कर मैंने यहाँ राज्य के वृद्ध को शक्तिशाली बनाया है।

मैंने कौन सा विद्रोह किया है? क्या अपराध किया है जो जहाँगीर ने यह आशा मेजी है। जब तक जहाँगीर मुझे मानता रहा तब तक मैं भी राजभक्त था, लेकिन अब जहाँगीर ने मेरे साथ यह अन्याय किया है तो मैं अपने को स्वतंत्र समझता हूँ। अगर वह मुझे राजद्रोही समझता है तो राजद्रोही सही। लेकिन यह तो बताओ कि अकाल के समय भी मैंने खजाना भरा रखा है। फिर मुझ पर यह कलंक क्यों?

और तुम क्या सोचकर यहाँ के शासक बनने आए हो? क्या तुम्हें अपनी इज्जत प्यारी नहीं? अगर तुम्हें अपनी इज्जत प्यारी है तो तुरन्त वापिस चले जाओ और जहाँगीर से मेरा यह सन्देश दे दो कि मुझे युद्ध में हरा कर ही यह देश वह पा सकता है। मेरी यह तलवार ही इसका निर्णय करेगी। कोई भी शक्ति आए उसे मैं खून से नहला दूँगा।”

कुतुब ने शान्त भाव से समझाते हुए कहा---

“मैं मानता हूँ कि तुम्हारे सिपाही बड़े बहादुर हैं। युद्ध में कभी भी पीछे नहीं होंगे। लेकिन तुम्हीं बताओ ये अपने शहंशाह के खिलाफ कैसे तलवार उठाएँगे? जिसका नमक खाते हैं उस पर कैसे तलवार चलाएँगे?

यह देखो जहाँगीर की आशा है। अब मैं ही अधिकारी हूँ। सेना, राज्य-कोष सब पर मेरा अधिकार है। मैं ही अब यहाँ पर बादशाह का प्रतिनिधि

हूँ । और मैं जो आदेश तुम्हें दूँगा, तुम्हें वही मानना पड़ेगा । देखो भाई, यह युद्ध का अवसर नहीं । तुम युद्ध की बातें क्यों करते हो ?”

यह सुनकर शेर अफगन ने क्रोध में भरकर और मूँछों को ताव देते हुए कहा “अभी इस का निश्चय हो जाता है । देख लो मेरा सेना पर कितना अधिकार है । सेना मेरी आज्ञा का पालन करेगी, तुम्हारी आज्ञा का नहीं । हे सेनापति ! आज तुम इन्हें अपने हाथ दिखाओ । सेना से कह दो कि तलवारें लेकर मेरे साथ आएँ ।”

यह सुन सेनापति ने कहा—“अब मुझे माफ कीजिए । मुझे आपकी आज्ञा मानने से कोई इन्कार नहीं है । लेकिन राजा का सेवक हूँ । मजबूरी है । राजा के विरुद्ध कैसे हो सकता हूँ । आप चाहे यह भूल करें, मैं उनके खिलाफ नहीं जा सकता । बादशाह जिसे भी यहाँ की गद्दी पर बिठाएँगे मैं उसी को सर झुकाऊँगा और उसी की आज्ञा मानूँगा । आप इस प्रकार की बातें करके क्यों अपयश लेते हैं !”

यह सुनकर शेर अफगन के तन-बदन में आग लग गई । बोला—“सेना-नायक ! तूने आज मेरे सारे अहसान भुला दिए । यह तूने क्या किया ? क्या तुझे याद नहीं कि मैंने ही तुझे सैनिक से सेनापति बनाया था ? यह नमकहरामी है ? खैर हे मुसाहिबो, तुम अपनी तलवारें निकाल लो और इन सब का काम तमाम कर दो ।”

यह सुनकर सबके सब मुसाहिब ढीले पड़ गए और धीरे-धीरे खिसकने लगे । जब किसी ने साथ न दिया तब शेर को अपनी वास्तविकता मालूम हुई । पश्चात्ताप में भरकर बोला—

“कल तक दुनिया मेरे साथ थी और आज मैं अकेला हूँ । यह भी क्या किस्मत के खेल हैं ! मैंने अपने जिन झूठे मित्रों के कहने में आकर प्रजा पर अत्याचार किए वही आज मेरे खिलाफ हो गए । अगर मैंने प्रजा के साथ प्यार का सलूक किया होता तो आज वह मेरे साथ होती और इनका मुकाबिला करने में मेरा साथ देती ।

मेहर मुझे कितना समझाया करती थी । लेकिन मैं उसकी एक न समझता था । उलटा उसे डाँटता था अपमानित करता था । लेकिन फिर भी वह

मेरे साथ कैसा प्यार करती थी। अब क्या मुख लेकर उसके सामने जाऊँगा ? खैर कुतुब, लो यह शाही मुहर। मैं अपनी हार मानता हूँ।”

यह कह कर वह मेहर के पास चल दिया। कुतुब ने उसे बहुत रोका लेकिन वह नहीं माना। मेहर के पास जाकर वह उसके चरणों पर गिर पड़ा और माफी माँगने लगा।

मेहर यह हालत देख कर दंग रह गई। आँसू भर कर उसे बार-बार सम-भाती रही। “बोली—“तुम क्यों घबराते हो ? हम यहाँ से दूर चले जाएँगे। नदी के किनारे किसी गाँव में कुटिया बनाकर रहेंगे। कोई बन्धन नहीं होगा। प्यार में सारा जीवन सुख से कट जाएगा। पक्षियों के समान खुली प्रकृति में विचरण करेंगे।

चलो, शासन की मुसीबत और पाप से छुटकारा मिला। अब हम पवित्र वातावरण में रहेंगे। सुख के राज्य में रहेंगे। मैं तुम्हारी सेवा करूँगी और तुम्हारी एक दृष्टि पर अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दूँगी। हम एक नई दुनिया बसाएँगे। गाँव के सुखमय जीवन का पूरा-पूरा आनन्द भोगेंगे।”

ये कहकर वे दोनों पैदल ही वहाँ से चल दिए। अभी थोड़ी दूर ही पहुँचे थे कि विधवा सर्वसुन्दरी योगिनी का वेश धारण किए सामने उपस्थित हुई और शेर से बोली—“यह तो अभी तुम्हें पहली ही मुसीबत उठानी पड़ी है। आगे देखो क्या-क्या देखना पड़ेगा। एक दिन आएगा जब तुम्हारी पत्नी भी मेरे समान विधवा होकर तड़पेगी।”

यह कहकर गुस्से से भरकर वह वहाँ से चली गई। ये लोग उसकी बातें सुनकर सन्न रह गए और जब उसे बुलाने के लिए मुख उठाया तो वह बहुत दूर जा चुकी थी।

पृ० १०८ “शेर

किया ॥”

शब्दार्थ—राजशृङ्ग=राज्य रूपी पैद। दुर्मिच्छ = अकाल।

भावार्थ—जब कुतुब ने शेर के पास जाकर जहाँगीर का सन्देश दिया तो वह क्रोधित होकर बोला—“मुझ से सूबा लेलेना कोई आसान काम नहीं है। क्या तुम यह समझते हो कि मैं यह अपमान चुपचाप सह लूँगा ? नहीं ऐसा नहीं होगा। अकबर बादशाह ने यह पदवी मुझे दी है। और मैंने भी

राज्य रूपी वृक्ष को बड़े परिश्रम से अपना खून दे-दे कर बढ़ाया है ।

मैंने कौन सा विद्रोह किया है ? राज्य के खिलाफ क्या साजिश की है ? जो जहाँगीर ने यह अनुचित आदेश भेज दिया है । जब तक जहाँगीर ने मुझे अपना माना तब तक मैं राजभक्त था । लेकिन जब उसने मेरे साथ विद्रोहियों का सलूक किया है तब अब मैं अपने आपको आजाद समझता हूँ ।

लेकिन तुम्हीं बताओ क्या मैं राजद्रोही हूँ ? मैंने ही तो बड़ी बड़ी जटिल परिस्थितियों में अपने भुजाओं की शक्ति से शत्रुओं की सेनाओं का सामना कर राजपताका की रक्षा की थी । इस अकाल के समय में भी मैंने खजाने को भरा रखा । और मैंने आन्दोलनों को कुचल कर जिस राजा के लिए अपनी जान तक खतरे में डाल दी थी ।”

पृ० १०६ “वही मुझे

घरा का मैं ॥”

शब्दार्थ— उपहार=भेंट । परवाना=पत्र । सूबा=सूबेदार । घाम=महल ।

भावार्थ— “वही बादशाह जिसके लिए मैंने इतना कुछ किया आज मुझे विद्रोही समझता है । क्या यही मेरी सेवाओं का फल है ! अच्छा मैं विद्रोही ही सही । अब मैं विद्रोह करने को तैयार हूँ ? कुतुब ! तुम क्या सोच कर यहाँ के सूबेदार बनने के लिए आए हो । तुम बेकार ही अपनी दाढ़ी की इज्जत नष्ट किया चाहते हो ।

तुम वापिस चले जाओ और बादशाह को विद्रोही शेर का यह सन्देश दे देना कि युद्ध में मुझे हरा कर ही ढाका का सूबा कोई लेगा । मेरी यह तलवार ही इसका निश्चय करेगी । जो भी सेना मेरे खिलाफ आएगी, उसे यह खून से नहला देगी ।”

यह सुनकर कुतुब ने शान्तभाव से कहा— “भाई यह सब ठीक है । ये सिपाही बड़े बहादुर हैं । युद्ध में पीछे हटने वाले नहीं हैं । शेर के समान हैं । किन्तु मुझे विश्वास है कि ये अपने राजा के खिलाफ ही तलवार नहीं चलाएँगे । उनका नमक खाकर इस प्रकार उन्हें नहीं भुला दूँगे ।

देखो यह जहाँगीर का पत्र है । इसमें शाही मुहर लगी है । इसी के अनुसार मैं यहाँ का सूबेदार होकर आया हूँ और तुम भी सुन लो, आज से यहाँ का शासक मैं हूँ । मैं ही राजा का प्रतिनिधि हूँ और धन, धरती और

महल सब मेरे आधीन हैं ।

“हुआ सैन्य

यह भूल ॥”

शब्दार्थ—राज-निर्देश=राजा की आज्ञा । प्रतिकूल=विरुद्ध ।

भावार्थ—इस राज-आज्ञा के अनुसार सारी सेना मेरे आधीन होगई है । और तुम्हें भी आज्ञा माननी ही पड़ेगी । इसलिए तुम राजाशा को तोड़कर युद्ध की बातें मत करो । यह युद्ध का अवसर नहीं है ।”

यह सुन शेर अफगन ने मूँछों पर ताव देकर और कड़क कर कहा “चलो आज ही इसका निर्णय हो जाता है । मेरा प्रभाव देखो । सेना मेरी आज्ञा मानेगी और तुम्हारी एक भी न सुनेगी । हे मीर मुअज्जम सेनापति ! आज फिर एक बार तुम अपने हाथ दिखा दो ! सेना से यह कह दो कि शस्त्र लेकर मेरे साथ आए ।”

मीर ने नमस्कार करके कहा—“सरकार मुझे माफ करें । आपकी आज्ञा मानने में मुझे कोई इन्कार नहीं है । लेकिन इस समय मैं बेबस हूँ । राजा का सेवक हूँ और इसलिए जहाँगीर के खिलाफ मैं नहीं हो सकता । आप भले ही यह भूल करें ।”

पृ० ११० “मेरे हाकिम

हुई सवार ॥”

शब्दार्थ—हठात्=जबर्दस्ती । शह=बढ़ावा ।

भावार्थ—“मेरा राजा जिसे भी यहाँ का शासक बनाएगा, उसी के सागने मैं सिर झुकाऊँगा । यही मेरा कर्तव्य है । मैंने बादशाह का फरमान देख लिया है । अब कुतुबुद्दीन मेरे मालिक हैं और आप से इस प्रदेश का शासन छीन लिया गया है ।

इसलिए मैं उनकी आज्ञा का ही पालन कर सकता हूँ और समय आने पर राज्य की खातिर अपने प्राण भी दे सकता हूँ । आप तो स्वयं समझदार हैं ! फिर ऐसी छोटी बात क्यों कहते हैं ? क्यों जबर्दस्ती सब से बैर मोल लेते हैं तथा क्यों बदनामी लेते हैं ?”

शेर बोला “मीर, तुम्हारे इस उत्तर का क्या मतलब है । तुमने तो मेरे सारे एहसानों पर पानी फेर दिया है । मैंने ही तुम्हें एक सिपाही से उठाकर सेनापति बनाया है । अब मेरे टुकड़ों पर पल कर मुझे ही शिर्चा देने चला है ।

ठहरो अभी इस विश्वासघात का मजा तुम्हें सिखाता हूँ । एक-एक करके सब से बदला लेता हूँ । सिपाहियो ! तुम अपनी तलवारें क्यों नहीं निकालते क्या कुतुब का बढ़ावा पाकर तुम पर भी मौत नाच रही है ?”

“अच्छा देखो शामत घेरे ॥”

शब्दार्थ—मुसाहिब=खुशामदी दोस्त । हौलदिल=दिल का दौरा ।

भावार्थ—“खैर अभी तुम्हें मजा चखाता हूँ । हे मेरे वीर मुसाहिबो, ऐसे अवसर पर तुम क्यों चुप बैठे हो ? तुम सब कमर कस कर तलवारें लेकर इधर आ जाओ । मैं अभी इन सब को इस शेखी का मजा चखाता हूँ ।

जुलफिकार, अहमद सईद, हाफिज मुरादखॉ, नूरुलऐन, जाफर अल्ली, अमान उल्ला, रमजान मुहम्मद, जुलकरनैन, मियाँ जकरिया, यूसुफ अघमी, सैयद अली कुरेशी आदि जो मुसाहिब हमेशा मेरी खुशामद करते थे, आज तुम सब जरा अपने-अपने हाथ दिखा दो ।”

यह सुनते ही सब मुसाहिबों का दिल भय से धड़कने लगा । कुछ तो इधर-उधर देव चुपचाप वहाँ से सरक गए । और कुछ थर-थर काँपते बोले-हम तो कब से बीमार हैं । हमें दिल का दौरा पड़ता है इसलिए लड़ने से लाचार हैं ।”

एक ने कहा—“मैं तो दोनों का सेवक हूँ ! कौन बेवकूफ होगा जो दो शासकों की लड़ाई के बीच अपनी टाँग अड़ा कर मुसीबत लेगा ।”

पृ० १११ “दो शेरों में हूँ लाचार ॥”

शब्दार्थ—जंगजदल=लड़ाई-भगड़ा । दून की हॉकना=उलटी-सीधी कहना ।

भावार्थ—“जब दो शेरों में लड़ाई हो वहाँ हम जैसे गीदड़ों का क्या काम ? आप दोनों का तो बड़े बहादुरों में नाम है । आप दोनों में युद्ध होगा तो मैं दूर खड़ा होकर अपनी दुआ मनाऊँगा । आप में जो जीतेगा उसी के गुणों का गान करूँगा ।”

एक दूसरा मुसाहिब बोला—“यह तो ठीक है कि हुजूर मुझ पर बड़े मेहर-बान थे । लेकिन क्या बताऊँ, कुछ रोज पहले ही मेरा विवाह हुआ है । मैं

अब अपनी नई दुल्हन को किस पर छोड़ कर मरूँ । वह तो मेरे बिना पल भर भी नहीं जी सकती ।

इसी से मैं असमंजस में हूँ । मेरे मन के सामने तीन रास्ते हैं । इधर तो आप दोनों मालिक हैं और उधर पत्नी का प्रेम है । समझ में नहीं आता कि किसे अपनाऊँ ।’

उसके एक मुसाहिब का नाम मौलाना हाशिम नोमानी था । वह बड़े नेता बनते थे तथा नित्य ही शेर के लिए शहीद होने की कसमें लिया करते थे । धर्म के नाम पर खूब पाप किया करते थे । शेर को उकसा कर वेगुनाह लोगों का खून बहाया करते थे । जो बड़ी मित्रता और स्वामिभक्ति दिखा कर इधर-उधर की बातें किया करते थे ।

वह बोले “खुदा की कसम है मैं तो हज करने जा रहा हूँ । इसलिए खुदा की राह पर जाते समय खून कैसे बढ़ा सकता हूँ ?”

“हिन्द छोड़ मानो सीसा है ॥”

शब्दार्थ—सलामत=प्रसन्न । पाक=पवित्र ।

भावार्थ—“अब मैं भारत छोड़कर घर जा रहा हूँ । अरब देश की खाक छानूँगा । और खुदा से प्रार्थना करूँगा कि वह सब को प्रसन्न रखे ।”

यह कह कर वह भी चला गया । शेर अफगन स्तब्ध रह गया । पहले तो गुस्से में भर गया और फिर अपने भाग्य को कोसने लगा । बोला -

“कल तक तो सारी दुनिया मेरी थी । क्या अब मेरा कोई साथी नहीं रहा । समय के बदलते ही सब खुशामदी मित्र बदल गए । अब तक मैं अहंकार में भ्रमित था । मुझे शक्ति का बड़ा घमंड था । और फिर इन भूटे मित्रों की धोकेबाजी ने मुझे अंधा कर दिया था । मैं अपना-पराया भी नहीं पहचान सका ।

इन खुशामदी दोस्तों ने ही मेरा नाश करवाया है । अब समझ में आया है कि दुनिया में किसी का कोई विश्वास नहीं करना चाहिए । प्रजा मेरी हो सकती थी अगर मैं उससे भलाई करता । अगर वह मेरे साथ होती तो इन मुट्ठी भर सिपाहियों को मैं यों ही खत्म कर देता ।

किन्तु बदकिस्मती से मैंने प्रजा को इतना कष्ट दिया है कि दुख के कारण

उसका दिल सीसे के समान हो गया है ।

पृ० ११२ “रही मेहर फिर है भर ॥”

शब्दार्थ—हताश=असमर्थ । आघात=चोट ।

भावार्थ—मेहर इतना समझाती रहती थी । अगर मैं प्रजा के साथ अच्छा व्यवहार करता तो आज अवश्य ही मेरे लिए वह जान तक देने को तैयार हो जाती । किन्तु मैंने अपनी पत्नी की एक बात भी नहीं मानी । उसका खूब अपमान किया और कभी भी प्रजा के कष्टों पर ध्यान नहीं दिया ।

आज मैं उनको क्या सुख दिखाऊँ ? जिन पर मेरा विश्वास था वे सब स्वार्थी मित्र आज मेरा साथ छोड़ कर मुझे असमर्थ बना गए हैं । हे कुतुब ! मैं अपनी गलती मानता हूँ । यह शाही मुहर लो । सुख से राज्य करो । लेकिन इन स्वार्थियों से होशियार रहना ।”

यह कहकर वह चल दिया । कुतुब ने उसे रोकने की कोशिश की लेकिन वह बात करने तक को नहीं रुका । उसे इस परिवर्तन से तथा अपनी गलतियों का स्मरण कर ऐसी चोट पहुँची थी कि वह अन्दर जाकर मेहर के पाँवों पर गिर पड़ा और बार-बार अपने अपराधों के लिए उससे क्षमा माँगने लगा ।

मेहर यह देखकर बड़ी हैरान थी । फिर भी उसे बार-बार गले से लगा कर आँसू भरे नेत्रों से उसे समझाती रही । अनेक प्रकार से उसका मन बहलाती रही । वह बोली “खुदा का शुक्र है जिसने हमारा यह बोझ हलका किया है । हम दोनों के दिलों को मिलाकर हमें फिर से सुख और शान्ति दी है ।”

“दूर नगर से समाऊँ मैं ॥”

शब्दार्थ—पर्णकुटी=पत्तों की कुटिया । कलरव=मधुर आवाज़ । प्रस्तर=पत्थर । वातायन=भरोखे ।

भावार्थ—“चलो हम शहर से दूर नदी के किनारे पत्तों की कुटिया बना कर रहेंगे और पक्षियों की आवाज़ के साथ सुर मिलाकर गाएँगे । इन पत्थर की दीवारों के बने कैदखाने से आज़ाद होकर हम दोनों मिलकर नदी के समान ही स्वतन्त्र होकर बिहार करेंगे ।

यहाँ रह कर जालीदार संगमरमर के भरोखों से जो मलय-पवन मुश्किल

से आने पाता है अब मैं आनन्द के साथ वनों और बगीचों में उसके साथ ही घूमूँगी। अब मैं इस गंदे वातावरण में बन्द नहीं रहूँगी।

हम अपनी एक आजाद कुटिया बनाएँगे। उसी में अपने धर्म का निर्वाह करेंगे और प्यार के साथ जीवन बिता कर आनन्द में भर जाएँगे। हे प्रिय ! चलो अब यह पापभरा कार्य छूटा। तुमको मैं हाथों से प्यार का ताज पहनाऊँगी।

तुम आजादी के सिंहासन पर बैठना और मैं प्यार का चँवर झुलाऊँगी। तुम्हारी एक चितवन पर मैं अपार आनन्द पा लूँगी।”

पृ० ११३ “दम्पति

चख ॥”

शब्दार्थ—दम्पति-जीवन=पति-पत्नी का जीवन। रसघन=आनन्द के मेघ। मंजुलता=सुन्दर लता। चख=नेत्र।

भावार्थ—“हम दोनों गृहस्थ जीवन के आनन्द का पान कर मस्त बन जाएँगे। जवानी में सावन के आनन्द भरे मेघों को देखकर मोर के समान हर्ष-विभोर हो नाचेंगे। चलो हम बर्दवान में चल कर नए जीवन का आरम्भ करेंगे। और वहाँ सीधे-सादे गाँव के जीवन के सुखों का उपभोग करेंगे।”

यह कहकर वे दोनों पैदल ही चल दिए। संसार उनकी करनी का यह फल आश्चर्य से देख रहा था। इतने में ही एक योगिनी इनका मार्ग रोक कर खड़ी हो गई। उसकी आँखें लाल हो रही थीं। उसके बाल उसके माथे पर बिखरे थे।

सिंदूररहित उसकी माँग में धूल भरी हुई थी। उसका शरीर गहनों से हीन था। और उसकी सारी इच्छाएँ मर गई थीं। उसके गेरुए वस्त्रों से उसका दिली दर्द प्रकट हो रहा था। वह उस सुन्दर लता के समान थी जो पतझड़ के पीले पत्तों से ढकी हुई थी—उपमा अलंकार।

शेर अफ़ग़ान ने जब उसे देखा तो उसके पति विमलराय का खून याद आ गया। डर और शर्म के मारे उसकी आँखें ऊपर उठी ही नहीं।

“मेहर बेचारी

केवल छाया ॥”

शब्दार्थ—बिछोह=वियोग। उन्मादिन=पागल। तड़ित सी=बिजली सी—उपमा अलंकार।

भावार्थ—उसे देखकर मेहर तो काँप उठी। पति की बाँह का सहारा लेकर वह सँभली। उसकी साँस रुक सी रही थी। उसका दिल तेज़ी से धड़क रहा था।

वह योगिनी दाँत पीस कर क्रोध से भर उठी। उसकी आँखों से अंगारे निकलने लगे और वह बोली—“ओ पापी, ओ अहंकारी, तू इस प्रकार कहाँ मन मारे जा रहा है ? तेरी वह तलवार, वह सेना, वह शासन सब कहाँ है जो तू आज भिखारियों के समान पत्नी के साथ पैदल चला जा रहा है।

पता नहीं तू निडर होकर किन सपनों में खोया था। अभी आगे देखना क्या होगा। अभी तो यह तुम्हारे आगे के जीवन का पहला ही अंक है। अभी तो बड़ी-बड़ी परेशानियाँ तुम्हें देखनी होंगी। जिस प्रकार मैं अपने पति के वियोग में तड़प-तड़प कर पागल बन गई हूँ। उसी प्रकार तुम दोनों भी इन्हीं आँखों से ऐसा ही दिन देखोगे।”

यह शाप देकर और बिजली सी तेज़ नजर उन पर डाल वह अपना लटका वस्त्र सँभाल कर एक ओर चुपचाप बढ़ गई। जब शान्ति हुई और इन्होंने कहने का साहस कर ऊपर देखा तो वह बहुत दूर जा चुकी थी। केवल दूर पर उसकी छाया दिखाई दे रही थी।



सोलहवाँ सर्ग

कथासार—मेहर और शेर अफगन जब गाँव में जाकर बसे तो उनका जीवन सुख से कटने लगा। वहाँ नगर सा कोलाहल नहीं था। शहरों में जो छल-कपट होता है, धोखा-धड़ी होती है, उसका तो वहाँ पता ही नहीं था। वहाँ ऐसे लोग नहीं रहते थे जिनके दिल में तो ज़हर भरा है पर जिनकी बातों में मिठास है। सर्वत्र सरलता और सादगी का राज्य था।

प्रकृति का तो वहाँ पूरा जोबन निखर उठा था। खेतों, वनों और बगीचों की अनुपम शोभा थी। उन्हें देख व्यक्ति उनमें लीन हो जाता था। एक अलौकिक सुख के दर्शन करता था। विविध पक्षियों के मधुर संगीत से गाँव गूँज उठा करता था। ऐसे स्वस्थ, सुन्दर और स्वतन्त्र वातावरण में उनका जीवन बड़े सुख से कट रहा था।

एक दिन संध्या का सुनहला प्रकाश चारों ओर छाया था। ऐसे समय में शेर अफगन को किसी ने बुलाया। उसकी आवाज पहचानी सी लगी। जब बाहर आकर देखा तो वह उनका एक पुराना सेवक था जो कुतुब का सन्देश कहने के लिए आया था।

पूछने पर उसने बताया कि “कुतुबुद्दीन स्वयं आए हैं और आप से मिलना चाहते हैं। वे पास ही एक पेड़ के नीचे खड़े आपकी राह देख रहे हैं। इससे अधिक मुझे कुछ मालूम नहीं।”

यह सुनकर शेर उससे मिलने के लिए चलने लगा। मेहर ने समझाया ‘कहीं यह कोई नया धोका न हो। सभी तो अपने दुश्मन हैं। इसलिए तुम अकेले मत जाओ। पता नहीं क्यों मेरा मन बैठा सा जाता है। कुछ सूना-सूना सा लग रहा है। तुम मत जाओ।’

शेर ने हँसकर उत्तर दिया—“मेरी पत्नी होकर तुम्हें ऐसा डरपोक नहीं होना चाहिए। जब वह घर तक आया है तो उससे मिल ही लेना चाहिए।

तुम चिन्ता न करो । बस मेरी तलवार दे दो । ’

यह कह कर वह चल दिया । मेहर पीछे रो-रोकर खुदा से दुआ माँगती रही ।

कुतुब ने शेर से कहा कि जहाँगीर मेहर से विवाह करना चाहते हैं । इसलिए उन्होंने मुझे मेहर को लेने भेजा है ।

यह सुनकर शेर के तन-बदन में आग लग गई और वह कड़क कर बोला “जहाँगीर की इतनी हिम्मत जो वह दूसरे की स्त्री पर बुरी नज़र डाले । अगर वह खुद यहाँ होता तो उसे मज़ा चखा देता । लेकिन तुमने यह बात कहने की हिम्मत कैसे की ? तुम्हें तो मैं इसका मज़ा अभी चखाता हूँ ।”

यह कहकर उसने तलवार से उसका काम तमाम कर दिया । उसके बाकी साथी उस पर टूट पड़े । वह बहादुरी से लड़ता रहा । कईयों को मार गिराया आखिर सबने मिलकर उसे मार डाला ।

मेहर यह सुन कर बहुत दुखी हुई । उसका दिल टुकड़े-टुकड़े हो गया । वह आँसू बहाती, बिलखती पति की लाश के पास खड़ी थी । इतने में सर्व-सुन्दरी योगिनी का रूप धारे वहाँ आई ! वह उसे समझाने लगी—

“जीवन का अन्त यही है । अब चाहे जितना रोओ, जाने वाला वापिस नहीं आएगा । अब तुम्हें अपने शेष जीवन में सदाचार का सहारा लेना चाहिए । ये सब तो ईश्वर के खेल हैं । आदमी का क्या बस है । उसने सारा जीवन अहंकार में खो दिया । लेकिन तू अपने जीवन की खेती को बुरी वासनाओं से बचा कर रखना ।”

इस प्रकार बहुत समझा-बुझा कर वह चली गई । उसके चले जाने के बाद मेहर को जहाँगीर के महल में ले जाया गया ।

इस सर्ग में सर्वसुन्दरी की बातों में थोड़ा सा चिन्तन दिखाई देता है ।

पृ० ११४ “नगरों का चेतन था ।”

शब्दार्थ—कृत्रिम=नकली । तृप्त=शान्त । प्रेरा=प्रेरित । रसना=जिह्वा । वाक्यपटुता = बोलने की कुशलता । शुचि=पवित्र ।

भावार्थ—कवि गाँव के जीवन और शहर के जीवन की तुलना करता हुआ यह सिद्ध करता है कि जहाँ शहर का जीवन पाप और स्वार्थ से भरा है,

वहाँ गाँव का जीवन पवित्रता और सरलता से विभूषित है ।

शहरों में नकलीपन होता है, झूठा दिखावा होता है । शहर में रहने वाले लोगों में ऐसा लोभ और धोकेबाजी होती है जो कभी शान्त नहीं होते । सब के दिल में दूषित वासना होती है, कामुकता होती है और सब लोगों के मन में केवल स्वार्थ साधने की ही चिन्ता रहती है ।

शहरी लोगों की बातों में बड़ी सम्यता होती है, देखने में वे बड़ी पवित्र मूर्तियों से लगते हैं किन्तु उनकी वे बातें केवल मुख से ही निकलती हैं । दिल के साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता । गाँव में रहने वाले लोगों में ऐसे लोग नहीं मिलते । यद्यपि हम उन्हें गाँवार कहते हैं लेकिन वे शहरियों से ऊँचे हैं तथा अपने पूर्वजों के बनाए नियमों के अनुसार अपने सीधे सादे जीवन को बिताते हैं ।

मेहर ने जब गाँव में आकर वहाँ का यह जीवन देखा तो उसे बड़ा सुख और सन्तोष हुआ । वह शहरीपन बिल्कुल भूल गई । गाँव में विद्यालय का महान भवन नहीं था । वहाँ तो प्रकृति का हर जड़ और चेतन अवयव मनुष्य के लिए शिक्षा के मन्दिर के समान था । मनुष्य सीधे प्रकृति से ही शिक्षा लेते थे ।

पृ० ११५ “पंचों का

जान हैं लेते ॥”

शब्दार्थ—व्ययहीन=जिसमें खर्च न हो । प्राचीर=परकोटा । वाद्य यंत्र=बाजे ।

भावार्थ—गाँव में कचहरियों का सा दिखावा और परेशानियाँ नहीं थीं । वहाँ तो बिना खर्च के ही पंच भगड़ों को निपटा दिया करते थे । वहाँ बाजारों से होकर चौपड़ के समान सीधी सड़कें नहीं जाती थीं । वहाँ तो पगडंडियों से अथवा गाड़ियों के निशानों से मार्ग की पहचान होती थी ।

गाँव में कोई भी शहरों के समान दीवारों के भीतर फूल-क्यारियाँ नहीं लगाता था और न ही उनके उठाने के लिए नौबत एवं शहनाइयाँ बजा करती थीं । इनके लिए तो पेड़ ही नौबतखानों के समान थे । और उन पर विविध पक्षियों का मधुर संगीत विविध बाजों की आवाज की मनोहरता लिए था ।

वसंत स्वयं आकर ही गाँव की लताओं और पौधों को सजा दिया करता था और अनेक प्रकार के जंगली फूलों से सारी घरती को सुशोभित कर देता था। अपनी खेती-बारी देखकर सब गाँव वालों का मन खुशी से नाच उठता था। वे हरे खेतों की ब्यारियाँ देखकर बहुत प्रसन्न होते थे।

यहाँ समय घड़ियों और घंटों से नहीं जाना जाता। अरुणशिखा, भुजंग और दहियल आदि पक्षी ही इन्हें सबेरे जगा दिया करते थे। रात को तो तारों की चाल देखकर समय जान लेते हैं और दिन को पेड़ों की परछाईं देख कर समय बता देते हैं।

“उनकी पुष्ट

जलाकर ॥”

शब्दार्थ—पुष्ट = शक्तिशाली। आवरण=पर्दा। आसव=रस। प्रमोद-भवन=मनोरंजन का स्थान। वट वृक्ष=बड़ का पेड़।

भावार्थ—उनकी शक्तिशाली देह खुली धूप में नहाया करती थी। गोभी के समान ही वह अपने ऊपर किसी तरह का पर्दा नहीं रखती थी। मलय पवन खेती की हरियाली तथा फूलों के रस को पहले तो स्वयं पान करता और फिर सब गाँववासियों को भी पिला-पिलाकर उन्हें स्वस्थ रखता था।

यहाँ शहर के महलों के समान भाड़-फानूस नहीं जला करते। मिट्टी के घरों में मिट्टी के दीपक जला करते हैं। इसके प्रकाश में घर की स्त्रियाँ चरखा चलाकर सूत कात लेती हैं और फिर उससे कपड़ा बुनवा लेती हैं।

यहाँ नगर के समान मनोरंजन के लिए क्लब आदि भी नहीं हैं। यहीं पर संध्या को या रात में बैठकर सब लोग कथाओं, आलोचनाओं और वाद-विवाद से अपना समय व्यतीत कर देते थे।

सर्दों के दिनों में जब किसान काम पूरा कर लेते थे तो संध्या में सर्दों से बचने के लिए अलाव जलाकर उसके चारों ओर बैठ जाते थे।

पृ० ११६ “ऊँच नीच

भरता जाता है ॥”

शब्दार्थ—केकियों का=मोरों का। चार चन्द्रिका=सुन्दर चाँदनी। प्रवास करते=विदेश जाते। द्विजगण=पक्षी। विनम्र=भुकी हुई।

भावार्थ—वहाँ कोई ऊँच-नीच का भाव नहीं रखता। सभी भाईचारे को अपनाते हैं। नीच जाति का बूढ़ा भी बाबा कहलाता है। वह बड़े प्यार

के साथ पुरानी कथाओं को बढ़ा-बढ़ा कर सुनाया करता था। और कोई ख़ाँसकर अपने जीवन की ही कहानी सुनाने लगता था।

मेहर भी ऐसे सरल और शान्त जीवन में मन का प्यार भुलाकर पति-पत्नी के जीवन का आनन्द पाती हुई समय व्यतीत कर रही थी।

अब मोर नए पंखों से अपना शृङ्गार करने लगे। मौलभी और पारिजात के पेड़ों पर भी अपार शोभा छा गई। आकाश में सुन्दर चाँदनी में पक्षियों के समूह के समूह मधुर गीत गाते हुए चले जाते हैं।

कपास भर गई, कमल मुरझाने लगे और ईख भी रस से भर गई। धानों पर सोने का पानी सा चढ़ा जा रहा था। जवानी के भार से झुकी बालियों में तोतों का तौता सा लगा रहता है। उनका रँग भी सुनहला है। ऐसा लगता है मानो उन बालियों में भी सोना सा भरता जा रहा है।

“अरहर हिल हिल कर ॥”

शब्दार्थ—कमला=लक्ष्मी।

भावार्थ—अरहर कल्लों से भरी कलियों के कारण झुकती जा रही है। इस शोभा के सागर में सर्वत्र लक्ष्मी ही लहराती दिखाई देती है। सरसों भी दानों की लड़ियों के भार से दाँहरी होती चली जाती है। वह अपने इन गहनों का बोझ नहीं सँभाल पाती इसलिए उसकी कमर झुकी जाती है।

उसकी चोटी हिरनखुरी के फूलों से गुँथकर बड़ी सुन्दर दिखाई देती है। पोलंगा बिना बुलाए ही उसके पास आ-आकर इशारे करता है—जैसे कोई युवक किसी युवती से छेड़-छाड़ कर रहा हो।

पृ० ११७ “हैं मसैं भींगतीं जला डाला ॥”

शब्दार्थ—अलियाँ=भँवरों। कनक=सोना। अहिबालाएँ=साँप की पुत्रियाँ। तक्षक=साँप। तुषाराघात=पाला पड़ा। पात्रक=आग।

भावार्थ—गेहूँ की मसैं सी भीग रही हैं। उस पर भी जवानी आ रही है। बालियाँ फूट रही हैं। मटर की बेल भी यौवन की मस्ती में भँवरों से आँख लड़ाने लगी है। सुन्दर चने भी इठला रहे हैं और घुँघरू बजा-बजाकर होली गा रहे हैं। उनकी कलियों की आवाज घुँघरू की आवाज के समान होती है।

तालाबों के ढालू किनारों पर घास के भवन बने हैं जिनमें साँप की पुत्रियों के समान नागबेलि सुनहरा रंग धारण किए तपस्या सी करती प्रतीत होती है। और कंद के पौधे अपने कोष (अपनी जड़) को धरती में दबाकर धरती से ऊपर ऐसे भूम रहे हैं, जैसे तक्षक सर्प अपने रखे धन की रक्षा करता हो। (उपमा अलंकार)

जो तितली मेंथी पर घूम रही थी वही सोये में आकर सो गई। उसकी सुगन्धि की मस्ती में सब कोई अपने आप को भूल जाता था। जहर भरा पोस्त का पेड़ भी अपने फल का कलसा सर पर दिखला कर सब को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। उसका शत्रु आगे बढ़कर उसकी गंध को कष्ट कर देता है।

ऐसी लहराती हुई खेती पर एक बार पाला गिर पड़ा। किसानों की उमंगों पर मानो किसी ने वज्र गिरा दिया हो—(उत्प्रेक्षा अलंकार) उनके सारे अरमान मर गए और बर्फ की ठंडक ने आग बनकर सारी खेती को जला दिया।

“अरहर सारी

मायापति है ॥”

शब्दार्थ—पियराई थी=पीली हो गई थी।

भावार्थ—एक रात में ही अरहर के खेत खड़े-खड़े सूख गए। सब कंद-मूलों की हरी लताएँ पड़े ही पड़े जल गईं। सब फलियों के दाने जलकर काले हो गए हैं। पाले ने सारे खेतों को भी जला दिया था।

वे जवान गेहूँ की बालियाँ जो अभी-अभी ऐसी पीली हो गई थीं जैसी कि किसी बाला की लगन हुई हो। वह उस बाला के समान ही विवाह की हल्दी में नहा कर पीली हो गई थीं जिस प्रकार विवाह वाली बाला अपने पति के स्वागत के लिए माला लिये रहती है उसी प्रकार उसने भी ग्रीष्म रूपी पति के स्वागत के लिए माला धारण की थी, वह पता नहीं किस विरह की आग में इस प्रकार जल कर भस्म हो गई।

वे सारे पौधे सूख गए। पल भर में ही सारे फल मुरझा गए। ईश्वर की भी क्या महिमा है। वह जो चाहे दिखा दे। भविष्य में क्या होने वाला है यह कोई भी व्यक्ति नहीं बता सकता। बस माया का स्वाधी वह ईश्वर ही इन

सब खेलों का चलाने वाला है ।

पृ० ११८ “जलता

छोड़ो ख्याल ॥”

शब्दार्थ---सोध=खोज । प्रतीचिका=पश्चिम । आगंतुक=आने वाला ।

भावार्थ---सूर्य दिन भर अपनी प्रिया की खोज में जल रहा था और चक्कर दे रहा था । जब वह पश्चिम दिशा में आ पहुँचा तभी उसे संध्या रूपी प्रिया मिली । उसे पा कर उसकी छाती ठंडी हो गई और वह प्रसन्न हो गया । संध्या रूपी सुन्दरी भी पति को देख लज्जा से लाल हो गई ।

तब सूर्य ने बड़े प्यार से उसे चूमा । उसे अपने सुनहले हाथों में भर लिया । और फिर प्रकाश का दीप बुझा कर उसे साथ लेकर अन्तरिक्ष के पर्दे में सो गया । मेहर और शेर भी उसी प्रकार आनन्द-सागर में बहते जाते थे और अपनी साँसों की डोरी में सुख के मोती पिरोया करते थे ।

इतने में बाहर से किसी ने आवाज दी । शेर ने पूछा कि कौन है ? मेहर भी आश्चर्य से बाहर देखने लगी । आने वाले ने भीतर प्रवेश करके नमस्कार किया और कहा---“मुझे ज्ञात करें जो मैंने आप को इतना कष्ट दिया है । मैं ढाका के शासक के दूत के रूप में उनका सन्देश देने के लिए आया हूँ । वे स्वयं ही पधारें हैं और मिलने के लिए उन्होंने आप को तुरंत बुलवाया है ।

आप चलने का कष्ट करें । वे पास ही बाग में ठहरे हैं । उन्होंने आपको बड़े आग्रहपूर्वक याद किया है ।”

शेर ने कहा---“मेरा अब उनसे क्या सम्बन्ध है ? वे क्यों आए हैं और क्यों मुझसे मिलना चाहते हैं ?

दूत ने कहा “मैं दूत हूँ । जो मुझ से कहा गया था वह मैंने आपसे कह दिया है । इससे अधिक मुझे और कुछ भी मालूम नहीं ।

शेर ने उत्तर दिया---“अच्छा चलो मैं तलवार लेकर अभी आया । जो घर आए उस से मिल ही लेना चाहिए । यही सम्म्यता है ।” अन्दर आकर उसने तलवार उठाई और मेहर से कहा---“मैं कुतुब से मिलने जा रहा हूँ । उसने मुझे बुलाया है । उससे मिलकर मैं अभी आता हूँ ।”

यह सुनकर मेहर आश्चर्य से भर गई और उसकी राह रोक कर खड़ी हो

गई। बोली “जरा रुको। उससे मिलने की ऐसी क्या जल्दी है? वह तो हमारा दुश्मन है। फिर उसका तुमसे क्या काम? सब सोच समझ कर आगे बढ़ो क्योंकि आजकल हमारा भाग्य ही उलटा है।

इसमें जरूर कोई भेद है। उसे हम से क्या सम्बन्ध। अगर मिलना ही है तो वह स्वयं घर आए। तुम वहाँ मत जाओ।”

पृ० ११६ “जाओ मत मूर्ति का ध्यान ॥”

शब्दार्थ—भीरु=कायर, डरपोक। परिहास=मजाक। जगदाधार=संसार का आधार, खुदा। पाषाणमूर्ति=पत्थर की मूर्ति, शेर अफगन।

भावार्थ—तुम मत जाओ। मैं हाथ जोड़ती हूँ। पहले यह तो पता कर लो कि मिलने का यह बहाना किस लिए निकाला है। मैंने रात बुरे-बुरे सपने देखे हैं। मेरा कहना मानो। मत जाओ। मुझे उस दुष्ट से बड़ा भय लगता है।”

शेर ने उत्तर दिया—“मेरी पत्नी होकर तू इतने डरपोक दिल वाली बनती है। मैं वीर हूँ। मैं मरने से जरा भी नहीं डरता हूँ। तू क्या सोचती है? जब तक तलवार मेरे हाथ में है तब तक कुतुब की क्या मजाक कि वह कुछ भी कर जाए। वह मेरे सामने किस खेत की मूली है?

कोई बात नहीं। मत घबराओ और न चिन्ता ही करो। मुझे जाने दो। मन में किसी प्रकार की परेशानी मत आने दो।”

मेहर उसे रोकती ही रही लेकिन वह इसकी बातों का मजाक उड़ा कर मुस्कराता चल दिया। वह उदास खड़ी रह गई। उसने आँखों में आँसू भर कर तथा ऊपर देख कर कहा—“हे संसार के आधार! इनकी रक्षा करना। मन में बार-बार चिन्ता उठ रही है।

वे अकेले ही गए हैं। उनके साथ कोई भी नहीं। हे रहमान, कुशल करना।” इसी प्रकार शेर अफगन का ध्यान कर वह उस पत्थर की मूर्ति पर पर आँसुओं का जल चढ़ाती रही।

“ऐसी बात

घाट उतार ॥”

शब्दार्थ—कराल=कठोर। जूझ गया=युद्ध में मर गया।

भावार्थ—कुतुब ने शेर से कहा कि “जहाँगीर मेहर को अपनी पत्नी

बनाना चाहते हैं इसलिए उसे मेरे हवाले कर दो ।” यह सुनते ही शेर का गुस्सा भड़क उठा और वह बोला—

“तेरी इतनी हिम्मत कि तू मुँह से ऐसी बात निकलता है । क्या तेरे सर कठोर काल नाच रहा है ? जहाँगीर आज यहाँ नहीं है वरना मैं उसे भी खूब सीख देता और दूसरे की स्त्री पर बुरी नजर रखने का खूब मचा चखाता ।

अगर वह नहीं है और तू बेहज्जती करने आया है तो पहले तुझ से ही निपटता हूँ । तलवार खाकर हमेशा के लिए सो जा ताकि फिर कभी तू ऐसी बात न कर सके ।” यह कह कर उसने तलवार का एक वार किया जिस से कुतुब का सर उसके धड़ से अलग गिर पड़ा और तड़पने लगा ।

कुतुब के रक्त शेर पर झपट पड़े और तलवारे चलाने लगे । वह भी बहादुरी से लड़ता रहा । और कहीं को तलवार के घाट उतार कर स्वयं भी वीरगति को प्राप्त हुआ ।

पृ० १२० “फूला हुआ लतिके रो-रो ॥”

शब्दार्थ—बुदबुदे=बुलबुले । स्नेह=तेल । मरघट का अनल=श्मशान की आग । हिमखंड=बर्फ का टुकड़ा । तड़ित=बिजली । शव का पाश=लाश का बंधन । लतिके=लता, मेहर ।

भावार्थ—मेहर को जब यह सूचना मिली तो वह रोती-बिलखती वहाँ पहुँची । उसी समय सर्वसुन्दरी भी वहाँ आ गई और बोली—

“हे बुलबुले के समान शेर ! तू घमंड में कितना भरा था लेकिन अब समाप्त हो गया । प्राणों के मोती बिखर गये हैं और जीवन का धागा टूट गया है । तेरी सम्पत्ति, घमंड, शक्ति सब कुछ ही तो नष्ट हो गया । तू तो दुनिया को लूट रहा था । तुझे कौन लूट ले गया है ?

अब तू तैलरहित मिट्टी के दीप के समान पड़ा है । तेरी वह जीवन-ज्योति कहाँ चली गई है । तू श्मशान की आग के समान सबको जला रहा था । अब तू स्वयं कहाँ छिप गया है ? तूने सागर में बहते बर्फ के टुकड़े के समान कितने ही जीवन के जहाज डुबा दिए थे । हे पत्थर के समान कठोर, उसी सागर की एक लहर ने तुझे भी समाप्त कर दिया ।

बिजली ने तेरे भवन के मंडप को तोड़कर नष्ट कर दिया है । आज तेरा

सर शरीर से अलग होकर पथराए नेत्रों से धड़रूपी अपने बंधन को देख रहा है। तू किनारे के पेड़ के समान ही नश्वर था। लेकिन तूने यह कभी नहीं सोचा। और अपनी ऊँचाई के अभिमान में सामान्य जनता रूपी घास को नफरत से देखा करता था। तू पहले आकाश तक ऊँचे सिंहासन पर बैठ कर सब से नफरत किया करता था।

किन्तु मृत्यु की धारा ने आज तुझे धरती पर गिरा ही दिया है। तेरे गर्व के फूल को मृत्यु रूपी माली ने तोड़ लिया है। हे मेहर ! वह वृक्ष जिस पर तेरे जीवन की लता ने आश्रय लिया था वह आज गिरकर धरती पर सो रहा है। अब तू अकेली रह गई है। लेकिन रो-रोकर अपना जीवन न समाप्त कर।

“मुझको देख

वह भगवन्त ॥”

शब्दार्थ—अलक्ष=निराकार, अदृश्य। सिरजन=निर्माण। संहार=नाश। ब्रह्म सलिल ही में आसीन=ब्रह्म जल में ही विराजमान है। परिधि=सीमा। आदिबिन्दु=जन्मदाता।

भावार्थ—मेरी ओर देखो। मेरा भी कोई आसरा है। मेरे जीवन के आनन्द को भी तेरे पति ने ही छीन लिया था। आज तेरा स्वामी भी अपने इस शरीर को छोड़ गया है और मेरे उस परदेसी पति से भेंट करने को गया है।

हम दोनों की दशा पतवारहीन नौका के समान है। जिस प्रकार पतवारहीन नौका जल के थपेड़ों के साथ-साथ चक्कर खाती रहती है उसी प्रकार हमें भी समाज के थपेड़ों के साथ-साथ भटकना पड़ेगा। तुम उस अदृश्य शक्ति की महिमा देखो। सभी उसके आधीन हैं। कुतुब और शेर दो लहरों के समान टकरा कर नष्ट हो गए हैं।

जीवन की धारा दिन और रात रूपी किनारों के बीच बहती रहती है। उसमें व्यक्तियों की असंख्य लहरों का निर्माण और नाश होता रहता है। इसी प्रकार ब्रह्म उस जल में विराजमान होकर कभी जीव रूपी लहर में प्रकट हो जाता है और फिर वह जीवन रूपी ब्रह्म में लीन हो जाता है।

यह न दिखाई देने वाली यात्रा की सीमा है, उसका क्षेत्र है। उसका

कहीं कोई आदि या अन्त नहीं है। सभी इस माया के चक्र में भ्रमित से घूम रहे हैं। सब का मूल जन्मदाता तो वह ब्रह्म ही है।

पृ० १२१ "इस

विराम ॥"

शब्दार्थ—आलोक=प्रकाश, जीवन। प्रपंच=माया। यति=विराम।
विराम=विश्राम।

भावार्थ—असंख्य लोग उसी ब्रह्म रूपी मंदिर की परिक्रमा करते हैं। मैं उस महाप्रकाश को नमस्कार करती हूँ जिससे सब लोग जीवन का प्रकाश पाते हैं। हे मेहर ! तू अब उसी का ध्यान कर। अब इस माया के चक्कर में मत पड़। तुम खुद ही देख रही हो कि जीवन का अन्त यही राख है।

पवित्र कर्म जीवन रूपी नाव के लिए डौड़ का काम करते हुए उसे आगे बढ़ाते हैं। पाप कर्म भारी पत्थर बन कर जीवन की नाव डुबा देते हैं। जिस प्रकार सूर्य के डूबने के बाद भी आकाश में सुन्दर रंग रह जाता है, उसी प्रकार अच्छे व्यक्ति के मर जाने के बाद भी वह संसार में आनन्द की लहर छोड़ जाता है।

लेकिन बुरा व्यक्ति काली रात के समान जाते जाते भी संसार में आग लगा जाता है, सबको परेशानी में डाल जाता है। रात जैसे जाते-जाते भी फूलों को, घास आदि को ओस के आँसुओं में डुबो जाती है, उसी प्रकार बुरा व्यक्ति जाते-जाते भी संसार को दुखी कर जाता है। बस थोड़े दिन ही जीवित रहना है। यह सोचकर तुम पवित्र जीवन व्यतीत करना। कभी भी ग़रीब को न सताना और सब का भला करना।

इस लाश पर अब तुम क्या रोती हो। यह तो सब के जीवन का अन्त है। यह तो जीवन रूपी वृक्ष का पतझड़ है। फिर भी इस पर वसंत आएगा यह तो महाकाल की लीला है। यह मृत्यु नहीं, यह तो जीवन का विकास है। यह तो समय रूपी मस्तक पर भाग्यविधाता के मस्तक के विकास की रोक है।

मृत्यु तो सदैव एक सी गति से चलने वाले दिल को थोड़ा आराम देती है। यह तो महाकाव्य के एक छंद की एक पंक्ति का विराम है। जैसे उस विराम के बाद महाकाव्य फिर आगे बढ़ता है उसी प्रकार मृत्यु के विराम के

बाद जीवन पुनर्जन्म द्वारा फिर आगे विकसित होता है ।

“उस विराट तू कर ॥”

शब्दार्थ—महानाट्य=महानाटक । पटाक्षेप=पर्दा गिरना । अहम्मन्यता=अहंकार । बच, खेती=शेष जीवन । बनचर=जंगली जानवर । पावन अनाज=पवित्र अनाज, पवित्र कर्म ।

भावार्थ—मृत्यु तो उस विराट ब्रह्म के महानाटक के दृश्यों की एक भाँकी है । यह उस गायक के गीतों की एक टेक के समान है । यह जीवन रूपी नाटक के पर्दे का गिरना है । जीवन रूपी रात में शुक्र का उदय होना । रात के बाद फिर दिन आएगा । मृत्यु के बाद फिर जीवन आता है । यह सागर के भाटे के समान है, इसके बाद फिर जीवन का ज्वार आता है । यह तो लहर का उठकर जल में गिरना है । फिर लहर उठेगी और उसी प्रकार फिर जीवन मिलेगा ।

यह लाश क्या है ? अपने मार्ग पर चले गए यात्री के पाँव से उठी हुई धूल है । इस मिट्टी पर रोना तो भारी भूल है । बाँसुरी वाला भगवान् कृष्ण एक व्यक्ति के जीवन रूपी छिद्र का स्वर तो बन्द कर देता है लेकिन शेष छिद्रों से स्वर फूँकता रहता है ।

जो होना था वही हुआ । इसने जैसा बोया वैसाही काटा । इसने अपना सारा जीवन अहंकार और स्वार्थ में ही खो दिया था । तू अब होश कर और अपने शेष जीवन की खेती की रखवाली वासना रूपी जंगली जानवरों से करती रहना । तू फिर अपने जीवन को सुनहले एवं पवित्र अनाज रूपी कर्मों से भर ले ।

पृ० १२२ “होना मत दिया ॥”

शब्दार्थ—हृदयस्थ यान=अपने भीतर चलने वाला जहाज । भुजगी=सर्पिणी—यह प्रसिद्ध है कि सर्पिणी स्वयं ही अपने बच्चे खा जाती है । तत्क्षण=उसी समय । प्रस्थान किया=चल दी ।

भावार्थ—तुम उस लहर के समान मत होना जो उठ-उठ कर अपने भीतर चलने वाले जहाज को उसी प्रकार नष्ट कर देती है जैसे सर्पिणी अपने

बच्चों को खा जाती है। तुम अपनी के साथ कभी ऐसा व्यवहार न करना। तुम तो धीरे-धीरे बहने वाली लहर के समान होना। जब वह भाप बनकर उड़ जाती है तब वह नीचे की रेत पर अपना निशान छोड़ जाती है। उसी प्रकार तुम्हारा जीवन भी जब समाप्त हो जाए तब तुम समाज के दिल पर अपनी मधुर याद छोड़ जाना।”

इस प्रकार ज्ञान देकर सर्वसुन्दरी उसी समय वहाँ से चल दी। मेहर, बुझे हुए दिल को आँचल में लेकर हृदय के प्यार से जलाने का असफल प्रयास करती रही।

“नक्षत्रों के

रस से ॥”

शब्दार्थ—विग्रह=संघर्ष, युद्ध। पुष्पोद्यान=फूलों के बगीचे। वाजिगज शाला=घोड़ों और हाथियों का स्थान। भूगर्भशास्त्र=पृथ्वी की भीतरी अवस्था से सम्बद्ध विज्ञान। ज्योतिर्विद्=ज्योतिष के जानकार। कम्पवाहन=वायु। उदधि=सागर। मंजुल कंज=सुन्दर कमल।

भावार्थ—जब नक्षत्र टकराते हैं तो बड़ा भयंकर भूचाल आ जाता है। इसके भोंके की शक्ति से द्वीप का द्वीप सागर में छिप जाता है। उस पर जितने प्राणी रहते थे, जड़-चेतन जितने प्राणी थे, मणियों के बने महल और अटारियाँ, फूलों के बगीचे, घोड़ों और हाथियों के स्थान, राजा और भिलारी।

धरती पर खिली विविध अन्न की खेती, आकाश को चूमने वाली पर्वतों की चोटियाँ, ज्वालामुखी पर्वत और तलहटियाँ, सृष्टि के आरम्भ से बहने वाली नदियाँ और पक्षियों का समूह, ईश्वर के परमभक्त और ईश्वर से विमुख सब ज्ञानी,

धरती की भीतरी दशा से सम्बद्ध विज्ञान के वेत्ता, ज्योतिष (भविष्य) के जानकार और वैज्ञानिक सब के सब उस द्वीप के साथ ही डूब जाते हैं। किसी का बस नहीं चलता। किसी का भी निशान तक बाकी नहीं रहता।

किन्तु ईश्वर के अटल नियमों के अनुसार ही वह स्थान खाली नहीं रहता। जब एक स्थान जल में डूब जाता है तो जल के भीतर से एक नया द्वीप निकल आता है। जैसे ही वरुण को पवन लेकर ऊपर आता है तभी

सत्रहवाँ सर्ग

कथासार—जब मेहर जहाँगीर के महल में पहुँच जाती है, वहाँ भी वह अपने दुख को नहीं भूल पाती। पति की याद में रोया करती है। बीमार भी रहने लगती है। जहाँगीर उसे खुश करने की लाख कोशिश करता है लेकिन उसका दिल फिर भी बेचैन रहता है। अतएव सर्ग के आरम्भ में उसकी माँ उसे समझाती हुई कहती है—

“हे बेटी ! समझ नहीं आता कि तुम्हें यहाँ क्या दुख है। सभी कुछ तो है यहाँ। सुन्दर रहल है, बाग-बगीचे हैं, खाने पीने, पहनने को सब कुछ है, अपार वैभव है, दास दासियाँ हैं और फिर भी तुम उदास हो। देखो तो महलों की दीवारों पर कैसी सुन्दर तस्वीरें लगी हैं। स्तम्भों पर लताएँ चढ़ी हुई हैं। शीतल तालाबों में गुलाब के फव्वारे छूट रहे हैं। धरती पर कोमल कालीन बिछे हैं जिन पर हीरे-मोती चमक रहे हैं।

यह महल तो कला का परम सुन्दर नमूना है। फिर भी तुम्हें यह सूना लगता है। ऐसे सुरम्य वातावरण में भी क्यों दुख की घटाएँ तुम्हारे मन में उठा करती हैं। क्यों ठंडी साँसें भरा करती हो ? और पूछने पर भी कुछ उत्तर नहीं देती हो।

बादशाह सलामत स्वयं तुम्हें खुश रखने की चिन्ता में रहते हैं। वे नित्य ही तुम से दो बातें करने के लिए मेरे साथ आते हैं लेकिन तुमने आज तक उन्हें आँख उठा कर भी नहीं देखा। और वे तुम्हारी यह हालत देखकर चुपचाप चले जाते हैं।

जब तुम बीमार थीं तब तो उनकी व्याकुलता देखी भी नहीं जाती थी। हमेशा वे ठंडी साँसें लिया करते थे। और उनके आँसू बरबस आँखों से बह निकलते थे। तुम कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा के समान नित्य ही कमजोर होती रहों लेकिन उनकी आँखें चकोर के समान अपलक तुम्हें ही देखा करती थीं।

तेरी नाड़ी के अनुसार ही उनका दिल धड़कता था। जब तुम स्वस्थ होने लगती तो आनन्द से भर जाते। उन्होंने तुम्हारी खातिर पानी के समान रुपया बहाया था।

जब पहली बार तुमने आँख खोलकर उनकी ओर देखा था उनका मन हर्ष से विभोर हो गया था। और वे तुरन्त उठकर बाहर आ गए। उन्हें डर था कि कहीं फिर तुम्हारा सोया भाव उनके विरुद्ध न जाग उठे। अब भी वे अपनी बदकिस्मती को कोसा करते हैं। वे तो अपने मन रूपी मन्दिर में तेरी ही मूर्ति सजा कर उसकी पूजा किया करते हैं।

तुम सरस हो, समझदार हो, फिर यह कठोरता क्यों। चाँदनी तो दो दिन की ही होती है। फिर तो अन्धकार ही होता है। अब तुम्हें धैर्य धारण करना चाहिए। सोई हुई रूई रोने से जागा नहीं करती। धर्म कहता है कि व्यक्ति को स्वयं अपना शरीर इस प्रकार नहीं गलाना चाहिए। जान बूझ कर दुखी मत रहो। तुम हमारी इजाजत समझकर जहाँगीर को अपनाओ और भारत देश की महारानी बनकर अपनी सारी इच्छाएँ पूरी करो।”

इसके बाद एक रोज लैला मेहर से कहती है “माँ क्या अब तुम अपने घर नहीं चलोगी ? हमारे अब्बा कहाँ गए हैं ? उन से मुझे बड़ा डर लगता है। वे प्यार भी करते हैं तो बड़ा कठोर। अच्छा तुम यहीं रहो। मेरे सारे साथी यहीं हैं। सोने का ताज धारण करने वाले भी मुझे प्यार करते हैं। वे कहते हैं कि मेरा ब्याह कुमार से कर देंगे। उनसे कहकर मेरा ब्याह करवा दो ना।”

ये बातें सुन मेहर ने उसे गोद में लेकर चूम लिया और बोली—“तेरी यही भोली बातें मुझे जीवित रखती हैं। पता नहीं तेरा ब्याह कौन करेगा ? किससे और कब करेगा ?” यह सोचकर उसके जीवन की एक समस्या और भी बढ़ गई।

मेहर एक बार फिर बीमार पड़ गई। उसे भयंकर बुखार है। बहुत परेशान है। पन्द्रह दिन से उसने कोई भोजन नहीं लिया है। अनेक इलाज हो रहे हैं। हकीमाँ का दल का दल आता रहता है। लेकिन उसकी नाड़ी बहुत हल्की है।

भयंकर काली रात है। चारों ओर भयानक सन्नाटा है। बस उल्लू बोल रहे हैं। सारी दुनिया सो रही है। केवल जहाँगीर मेहर के बिस्तर के किनारे बैठा है। वह इकटक उसका मुख देख रहा है। उसके दिल का दुख घना हो गया। आँखों में आँसू उमड़ आए। उसके आँसुओं से मेहर का बुखार हल्का हो गया। थोड़ी देर बाद उसने बड़े हल्के स्वर से पानी माँगा।

उसे बोलते सुन जहाँगीर गद्गद् हो गया। उसने तुरंत उसे उठा कर पानी पिलाया। उससे मेहर के गर्म दिल को कुछ शान्ति मिली ! अपने आप उसके नेत्र खुल गए और जहाँगीर के नेत्रों से मिल गए। एक बार उसके नेत्र शरमा कर झिझके किन्तु फिर तुरन्त ही मिल गए। दोनों की आँखों में आँसू भर आए।

इसके बाद मेहर अच्छी हो गई। उसके मन में जहाँगीर का सोया प्यार जाग उठा। उसका दिल उसकी ओर खिंचने लगा। मन में मधुर भाव जागने लगे। फिर रात को उसे सपने आने लगे। उसने देखा वे ही परियों आई हैं जो एक बार पहले भी आई थीं। अब के उन्होंने इसे ताज पहना दिया था। किन्तु यह चिन्ता में भर कर यह सोचने लगी कि शायद मुझ पर परियों का साया है। किसी को दिखाना चाहिए।

मेहर चिन्ता में रहती। दुविधा में रहती। एक बार वह अपने मन को समझाती हुई बोली 'तेरे लिए जाल फैलाया गया है। तू सावधान रहना। इसमें फँस मत जाना। यह जो मधुर आवाज है वह तुझे फँसाने के लिए है। एक बार तू फँस गया तो फिर वह तुझ पर राज्य करेगा। नहीं-नहीं, तू किसी को भी अपना शासक मत बनाना। अभी मैं तेरी चंचलता का अन्त किए देती हूँ।' यह कहकर वह तालाब में डूब कर मरना ही चाहती है कि जहाँगीर उसे पीछे से आकर पकड़ लेता है।

वह बोला—“तुम क्यों अपना अमूल्य जीवन मिटा देना चाहती हो ? आखिर रहस्य तो बताओ। कुछ कहो तो आखिर, तुम क्यों मुझ से नाराज़ हो ? पुराना प्यार याद करो। आज तुम्हें मेरी बात माननी होगी। तुम्हें इस कठोरता का कारण बताना होगा।”

मेहर ने कहा—“क्या तुम कारण नहीं जानते। जो बात सारी दुनिया

जानती है वह मेरे मुँह से सुनना चाहते हो। तुम्हीं ने मेरे पति की हत्या करवाई है। इन खूनी हाथों से मेरा स्पर्श मत करो।”

यह सुन जहाँगीर ने उसके पाँवों पर गिर कर कहा—“रानी मुझे क्षमा कर दो। मैं प्यार में अंधा हो गया था। भूल गया था कि मैं क्या कर रहा हूँ। मैंने दोष किया है। मैं तुम्हारा गुनहागार हूँ। जो भी सजा दो, सहने को तैयार हूँ। लो उसका बदला ले लो। इसी तलवार से मेरा काम तमाम कर दो।”

मेहर ने कहा—“मैं तुम्हें क्यों मारूँगी। और तुम्हारा दोष क्या है? दोष तो मेरी किस्मत का है। मैं नहीं चाहती थी कि मैं अपने मन की विवशता से तुम्हारे आधीन हो जाऊँ। इसीलिए मरने जा रही थी। सो तुमने मुझे मरने भी नहीं दिया। मैं तो दूर से ही आपकी पूजा किया करूँगी।”

जहाँगीर ने कहा—“मैं जीकर क्या करूँगा जब तुम मुझ से घृणा करती हो। अगर भक्ति की बात कहती हो तो वह कैसे हो सकती है। मैं तो तुम्हारे योग्य नहीं। अगर तुम ऐसा नहीं समझती तो मेरी इच्छा पूरी कर दो। इसे छोड़कर और कुछ नहीं माँगूँगा।”

मेहर ने कहा “मेरा जी अभी अच्छा नहीं है। आपकी यह बात फिर सुनूँगी।” यह कह कर वह कुछ सोचती और पीछे बार-बार देखती हुई चल दी।

इस सर्ग में मेहर और जहाँगीर के चरित्र का चित्रण ही मुख्य है।

पृ० १२४ “बेटी

ऊपर ॥”

शब्दार्थ—रम्य=आकर्षक। पाषाण कोट=पत्थर का किला। दिव्य = अलौकिक। वेदिका=शाला।

भावार्थ—मेहर जहाँगीर के महल में आकर भी उदास रहती है। उसकी यह दशा देखकर उसकी माँ उसे समझाती है—

हे बेटी ! पता नहीं तुम्हें यहाँ क्या दुख है ? जितने भी सुख संभव हैं वे सब प्राप्त हैं फिर भी तुम उदास रहती हो। नजर बाग में जाकर मन बहलाओ। देखो तो सही वह कितना आकर्षक और सुन्दर है। और जिस महल में तुम रहती हो यह तो पत्थर के किले रूपी अँगूठी में जड़े नग के

समान है ।

इस महल की दीवारों पर अलौकिक तस्वीरें बनी हैं । खम्भों पर मणि की लताएँ बल खा-खाकर चढ़ी हुई हैं । ऊपर शहतीरों के ऊपर सुनहली डाटें लगी हैं । सभी रास्तों पर बैठने के लिए जालीदार शालाएँ बनी हैं ।

ठंडे तालाबों में गुलाब के फव्वारे छूट रहे हैं । नीलम के बने आकाश पर तारे हीरों के समान चमक रहे हैं । नीचे धरती पर तरह-तरह के कोमल कालीन और गलीचे बिछे हैं जिनके ऊपर और नीचे हीरे जड़े हैं ।

पृ० १२५ “स्वाभाविक कहती ॥”

शब्दार्थ—विहग=पक्षी । स्नानागार=गुसलखाना । टोड़ा=छाजन को सहारा देने वाले । अलिन्द=छत । वास्तुकला=भवन-निर्माण-कला । पराकाष्ठा=श्रेष्ठता ।

भावार्थ—यहाँ प्राकृतिक रंगों से बनाए गए पक्षियों के समूह का चित्र है । वह मूर्ति तो ऐसी बनी है कि प्रतीत होता है बस बोलने ही वाली है । वह सुन्दर झिलमिल के भीतर सुन्दर गुसलखाना है । इसमें से होकर गुलाब जल की धारा बहा करती है ।

वे कलश और कँगूरे सोने से चित्रित हैं । वह तोरण की सुन्दर झालर लगी है । सुन्दर सजे हुए टोड़ों के ऊपर छत है जो यमुना के ऊपर तक जाती है । यह महल तो भवन-निर्माण-कला की सुन्दरता की हृदय है । अनुपम है । फिर भी तुम्हें यह सूना-सूना लगता है ।

स्वर्ग के समान सुन्दर इस महल में रह कर भी तुम्हारे मन में क्यों दुःख की घटाएँ उमड़ा करती हैं । दासियाँ तुम्हारी आज्ञा की प्रतीक्षा में चारों ओर खड़ी रहती हैं । यहाँ भोग करने के लिए तथा मन को बहलाने के लिए सभी साधन हैं, सभी प्रकार के भोग उपस्थित हैं ।

फिर भी तुम ठंडी साँसें ले-लेकर उदास रहती हो । बहुत पूछने पर भी अपने दुःख का कारण नहीं बताती ।

“रखने बहाया ॥”

शब्दार्थ—बरौनी=आँखों के बाल । कुष्ण पक्ष=वे पंद्रह दिन, जिनमें अमृतमा घटता जाता है । पाख भर=पूरे पंद्रह दिन । पीत राग=पीला रंग ।

उपचार=इलाज ।

भावार्थ—बादशाह स्वयं तुम्हें खुश रखने के लिए परेशान रहते हैं । रोज ही मेरे साथ तुम से दाँ बातें करने आते हैं । किन्तु तुमने कभी आँख उठाकर भी उनकी ओर नहीं देखा, तुम्हें हमेशा इसी प्रकार दुखी पाकर वे चुपचाप उठकर चल देते हैं ।

जब तुम बीमार थीं तब तो उनकी व्याकुलता यहाँ तक बढ़ गई थी कि देखी तक भी नहीं जाती थी । हमेशा ठंडी साँसों को लहरों से उनकी छाती चंचल रहती थी । उनकी आँसुओं की बड़ी-बड़ी बूँदें आँखों के कोनों में नहीं समा सकती थीं और उनकी बरौनियों को छू-छूकर वे गिरते और तेरे अंचल को भिगो देते ।

तुम पन्द्रह दिन तक कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा के समान नित्य ही दुर्बल होती रहती किन्तु उनके नेत्र चकोर के समान हमेशा तुम्हें ही देखा करते थे । हम सब सो भी जाते थे, किन्तु उन्हें कभी नींद नहीं आई । इससे उनकी आँखों के कोने लाल हो गए थे । और उनकी वह लाली तुम्हारे पीले रंग को भी लाल बनाया करती थी ।

तेरी नाड़ी की चाल देखकर उनका दिल घड़कने लगता था और जब तेरे स्वास्थ्य में जरा भी सुधार होता था तो उनके अंग खुशी से फड़कने लगते थे । वे सदैव तुम्हारे इलाजों में लगे रहते थे और धन को तुम पर न्यौछावर करके उन्होंने उसे पानी के समान बहाया था ।

पृ० १२६ “प्रथम बार

सारी ॥”

शब्दार्थ—सुप्त भाव=सोया हुआ भाव, जहाँगीर के प्रति उदासीनता का भाव । चारु-चन्द्रिका=सुन्दर चाँदनी । वनमाली=जहाँगीर । पुरवो=पूरी करो । सार्धे=इच्छाएँ ।

भावार्थ—जब पहली बार आँखें खोलकर तुमने उनकी ओर देखा था तब उनके आनन्द का अनुमान कोई भी नहीं लगा सकता था । तेरी दृष्टि का सुख पा कर वे तुरन्त ही बाहर आ गए क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं उनके प्रति उदासीनता का सोया भाव तेरे मन में न जाग उठे ।

अपनी बदकिस्मती देख-देख कर उनके मन में बड़ी ग्लानि हुआ करती

है। वे अपने मन रूपी मन्दिर में तेरी मूर्ति को सजा कर उसकी पूजा किया करते हैं। तुम स्वयं समझदार हो, मन में प्रेम भी है फिर क्यों यह कठोरता करती हो। सोचो तो चार दिन की ही मधुर चाँदनी होती है और फिर तो अँधेरा ही अँधेरा है। इसलिए इस सुख-वैभव को न ठुकराओ।

मैं जानती हूँ कि तुम्हें बहुत दुख था और तुम उस के लिए खूब रो भी चुकी हो, चार बरस से शोक मना रही हो। लेकिन इस रोने से क्या लाभ! जो रुहे सो जाती हैं वे रोने से थोड़े ही जागा करती हैं। धर्म बताता है कि अपने शरीर का स्वयं गलाना पाप है। जीवन और मृत्यु का प्रश्न तो ऐसा है कि मनुष्य इसमें विवश है।

इसलिए तुम सोचो। जीवन थोड़ा है। उसे भी रोक कर काट देना कहाँ की बुद्धिमानी है। हे लता, अब तुम पतझड़ के वियोग में अधिक मत रोओ। जो नया वसंत आ रहा है उसका स्वागत करो। माली के समान जहाँगीर दूर खड़ा है। दौड़ कर उसे खू लो। जानबूझ कर दुखी मत बनी रहो। बीती हुई बातें भुला दो।

यह तो हमारे समाज की रीति है कि तुम फिर विवाह कर सकती हो! खुदा की भी आज्ञा है और हमारी भी इजाजत है। इसलिए अब तुम भारत की महारानी बनकर मन की सारी इच्छाएँ पूरी करो।

“अम्मी

लाते ॥”

शब्दार्थ—सोने की टोपी वाले=ताज वाले, जहाँगीर।

भावार्थ—लैला अपनी माँ से कहती है—“अम्मी, अब्बा कहाँ गए हैं? क्या अब घर नहीं चलींगी? लेकिन वे मुझे मारते हैं इसलिए मुझे उनसे बहुत डर लगता है। जब वे मुझे प्यार करते हैं तब भी मुझे बड़ा दुख देते हैं। अपनी दादी के कड़े बाल मेरे गालों में चुभा देते हैं।

अच्छा अब तुम यहीं रहो। यहाँ मेरे साथी और सहेलियाँ हैं। ये सब मेरे साथ खेला करते हैं और मुझें बड़े प्यारे भी लगते हैं। सोने की टोपी वाले भी मुझे बहुत प्यार करते हैं और मेरे खेलने के लिए रोज नए खिलौने लाकर देते हैं।

पृ० १२७ “मुझे

इससे ॥”

शब्दार्थ—उलभन=ममस्या ।

भावार्थ—वे मुझे उठाकर पेड़ों से फल तुड़वाते हैं । रंग-बिरंगी तितलियाँ तोड़ कर मुझे दे जाते हैं । मैं उन तितलियों के परों के रंगों को हाथ में लगा लेती और जब वे मुझे चूमने लगते तो उनके मुँह पर मल देती थी ।

वे मुझे खूब मिठाई देते हैं, बहुत से खिलौने देने हैं और कहते हैं कि वे मेरा विवाह कुमार से कर देंगे । शादी में खूब बाजा बजता है । हे माँ, मुझे दुलहिन बना दे और उनसे कहकर शीघ्र ही मेरा विवाह करवा दे ॥”

यह सुन मेहर ने उसे गोद में उठाकर चूम लिया । उसके नयन सबल हो गए । वह बोली---“तेरी ये भोली-भाली बातें ही तो मुझे जीवित रखती हैं । पता नहीं तेरा विवाह कब होगा और कौन तुझ से विवाह करेगा ।” यह सोच मेहर के जीवन की एक समस्या और बढ़ गई ।

“विषम

उलूक ॥”

शब्दार्थ—विषम=तेज । ज्वर=बुखार । कुहू=अभावस्या की रात । प्रभञ्जन=वायु । भयावह=भयानक । उलूक=उल्लू ।

भावार्थ—मेहर को तेज बुखार है और वह नेत्र बन्द किए पड़ी है । पन्द्रह दिन हो गए । उसने कुछ भी आहार नहीं लिया है ।

अनेक इलाज हो रहे हैं । हकीमों का ताँता लगा रहता है । उसकी नब्ब बहुत मंद है । वह बेहोश पड़ी है ।

अभावस्या की रात है । दीपक का प्रकाश हल्का है । वायु भी शान्त है । रात साँय-साँय कर रही है । धरती बड़ी भयानक लगती है । दीपक की जिह्वा भी शान्त है, लौ हल्की और स्थिर है । हाँ, केवल उल्लू बोल रहा है ।

पृ० १२८ “मूर्ति

हार ॥”

शब्दार्थ—प्रसित=झूठा हुआ । जीवन=जल, जिन्दगी, श्लेष अलंकार । क्रान्ति=विद्रोह । उद्भ्रान्त=पागलों के समान । सुदृढ़ कोट=मजबूत किला । दग-गोलों=गोलों के समान आँसू ।

भावार्थ—केवल जहाँगीर हाथों से अपने सर को सँभाले हुए उसकी शय्या के निकट अपार चिन्ता में झूबा बैठा है । उसका सर झुका है और वह

दुख से बेचैन है ।

वह ठंडी साँसें ले-लेकर घंटों तक उसका मुख देखा करता है । आखिर उसकी आँखों से आँसू बरस ही पड़े और मेहर के चन्द्रमा जैसे मुख को भिगोने लगे ।

शोक के बादल तेजी से आगए और उन बादलों ने आँसू बरसाए, जिनसे मेहर को जिन्दगी मिली । आखिर आँसू धैर्य का बाँध तोड़कर उस से विद्रोह करके तेजी से गिरने लगे ।

उन आँसू रूपी गोलो की मार से ज्वर का वह मजबूत किला टूट गया । ज्वर हल्का हो गया और अन्त में हार कर भाग गया ।

“सहायक

घाये ॥”

शब्दार्थ—चेती=होश में आई । विह्वल=मतवाला । कल=चैन ।

भावार्थ—जहाँगीर के सहायता करने वाले नेत्र मेहर के बेहोश नेत्रों से कहने लगे कि अब जाग उठो । मेहर को होश आया, फिर वह अलसाई और बहुत हल्के स्वर से पानी माँगा ।

उसी समय खुशी से मतवाला होकर सोने के पात्र में जहाँगीर ने जल लिया, मेहर को सहारा देकर गोदी में उठाकर, उसके बिखरे बालों को माथे से हटाकर, उसे जल पिलाया । जल पीकर उसके जलने दिल को थोड़ी शान्ति मिली ।

अपने आप ही मेहर के नेत्र खुल से गए । सामने ही उसने जहाँगीर का सुन्दर रूप देखा । पहले तो उसके नेत्रों ने थोड़ा संकोच किया, थोड़े शरमाए । लेकिन फिर उसके नेत्रों से मिलने के लिए ऊपर उठे ।

पृ० १२६ “तुरत

छलती है ॥”

शब्दार्थ—वारि=जल । दृग-तरणी=नेत्ररूपी नाव---रूपक अलंकार । कल-निनाद-कुंजी=सुन्दर आवाज रूपी कुंजी । मुकुट=शिव के परिवार का एक गण, कोई नक्षत्र ।

भावार्थ—जैसे ही दोनों की आँखें चार हुईं उनके नयनों में जल भर आया । मेहर ने अपने नयनरूपी नाव को बन्द कर उन आँसुओं में डुबा दिया और तुरंत सुन्दर हृदय पर वस्त्र धारण कर लिया ।

मेहर सोच रही है कि कौन और किस स्थान से परिचित स्वरों में प्रेम का गीत गा रहा है। उसके आनन्द में मेरा मन विवश होकर घुलमिल जाता है। उसकी मधुर आवाज रूपी कुंजी ने कानों के द्वारा उसके नयन रूपी तालों को अचानक ही खोल दिया। उसने सोचा कि अब क्या बज रहा होगा ?

उसने सोचा, जरा देखूँ तो अब ओस गिर रही है और ढल रही है। सोया हुआ मलय पवन जाग उठा है और मणि से मुकुट नक्षत्र का प्रकाश व्यक्ति को धोके में डाल देता है।

“उत्तर

साया ॥”

शब्दार्थ - मानस=मानसरोवर, आकाश। हंस=हंस पक्षी, सूर्य--श्लेष। श्रवण, धनिष्ठा, मिथुन, सुकन्या, अनुराधा, ज्येष्ठा=नक्षत्रों के नाम। वृश्चिक चाल=वृश्चिक राशि में आ गए हैं। निहित=छिप। सप्तर्षि=सात तारे। प्रतीचि=पश्चिम। चित्रा=नक्षत्र। प्रवासी=दूसरे देश में जाने वाला।

भावार्थ—उत्तर पूर्व के नीले आकाश में सूर्य मानसरोवर में हंस के समान तैर रहा है। श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र उदित होकर पूर्व दिशा में बढ़ते जा रहे हैं। मिथुन छिप गया है और सुकन्या आकाश के बीच आ गई है। अनुराधा और ज्येष्ठा वृश्चिक राशि में चलने लगे।

अब उत्तर-पश्चिम दिशा में कर्क राशि के प्रजापति नाम के तारे नहीं हैं। थोड़ी देर पहले जो दिखाई दे रहे थे अब वे सब छिप गए हैं। क्या ये सात स्वर इन्हीं तारों से निकल रहे हैं।

फिर किसी ने पंचम के स्वर में अलाप लिया और फिर स्वरलहरी को उतार कर सम पर आकर तोड़ दिया। चित्रा पश्चिम दिशा में चित्र से बना रही थी और ऊषा के सपने को जगाने के लिए उसी की खोज में जा रही थी।

अब मेहर की आँखों में नींद नहीं रही। थी। वह तो विदेश जाने वाले पक्षी के समान ही थोड़ी देर विभ्राम कर सपने के टूटने के साथ ही खो गई। रात फिर उसने सपने में देखा कि वे ही परियाँ आई हैं और उन्होंने उसे ताज पहना दिया है। वह सोच रही थी कि “किसी सयाने से पूछूँगी कि कहीं मेरे

ऊपर परियों का साया तो नहीं है ।”

पृ० १३० “पहिले

मुभको ॥”

शब्दार्थ मधुवर्षा=रस बरसाने वाला । गज काननचारी=जंगली हाथी । सिंधुर=हाथी । उदर=पेट । गर्त=खाई । परचाएगा=सिखाएगा । सर=पराजित ।

भावार्थ - “पहले भी एक बार परियों को देखकर मैं डर गई थी । अब वे फिर आई हैं । ब्याह रचाकर ये हँस-हँस कर गाती हैं और मुझे दुल्हन बनाती हैं । यह अच्छा ही हुआ कि किसी के संगीत ने मुझे बचा लिया । भय को तोड़ कर उन परियों को दूर भगा दिया है ।

इसी बगीचे से यह आवाज आ रही है । जरा देखूँ तो सही कि कौन रंगीला व्यक्ति मधुर राग को छेड़कर रात की नींद को तोड़ रहा है । क्या यह परिचित है ? हाँ परिचित ही तो है । कितना मधुर स्वर है । उसकी आवाज मीठी है, बोल भी बड़े प्यारे हैं वह तो सचमुच रस बरसाने वाला भरना ही है ।

इसके बाद मेहर अपने मनरूपी हाथी को समझाती है । जंगली हाथी को पकड़ने के लिए शिकारी एक गढ़ा खोद देते हैं उस पर घास आदि डाल देते हैं । हाथी जब उसके ऊपर से निकलता है तो उसमें फँस जाता है । फिर एक हथिनी भेजकर उसे सिखलाते हैं और अन्त में अंकुश लेकर उस पर सवार होते हैं ।

हे मेरे मन रूपी जंगली हाथी, आगे मत बढ़ । तुम्हें फँसाने के लिए आगे एक गढ़ा खोदा गया है । उसके ऊपर घास का कोमल परदा डाल दिया है । और यह स्वर रूपी हाथी ही तुम्हें बहका कर आगे ले जा रहा है ।

जैसे ही तुम आगे बढ़ोगे, घोंके की टट्टी टूट जाएगी और वह खाई अपना मुख खोलकर तुम्हें अपने भीतर रख लेगी । फिर शिकारी मनुहार और घनरूपी हथिनी भेजकर तुम्हें सघाएगा और अन्त में तुम्हारे ऊपर अंकुश लेकर सवारी करेगा ।

“नहीं

बोलो ॥”

शब्दार्थ—आज्ञा उल्लंघन कर=मेरे आदेश को अस्वीकार करके ।

भावार्थ—नहीं-नहीं, कोई भी क्यों न हो अब मैं तुम्हारे ऊपर किसी को भी शासन नहीं करने दूँगी । फिर से कौन गुलामी का जीवन व्यतीत करते हुए टंडी साँसें भरा करेगा, हे मेरे पाँव, रुक जाओ । तुम क्यों उस ओर बढ़ते ही जाते हो ? आज क्यों मेरे पाँव को रोकने के लिए रास्ते के काँटे नहीं आ जाते ।

जब मेरा मन ही मेरी आज्ञा की उपेक्षा करके बिल्कुल विद्रोही हो गया है तो फिर मैं किस पर शासन कर सकती हूँ । अच्छा अगर तू नहीं मानता तो मैं तेरी समाप्ति किए देती हूँ । इस सरोवर में डूबकर अपनी लज्जा की रक्षा कर लेती हूँ ।”

यह कह कर जैसे ही वह सरोवर में पाँव बढ़ाती है, कोई मजबूत हाथ उसे पकड़ कर पीछे हटा लेते हैं । वह जहाँगीर था । वह मेहर से बोला—

“तुम क्यों अपना अमूल्य जीवन मिटाने जा रही हो ? किन कारणों से तुम अपने जीवन को इतना दुखी बना रही हो ? कुछ तो इसका भेद बताओ । मेहर ! अपने पुराने प्रेमी से कृपा करके कुछ तो कहो ।”

पृ० १३१ “यदि

चलना ॥”

शब्दार्थ—प्रतियोगी=प्रियतमा का दूसरा प्रेमी ।

भावार्थ—“यदि तुम न्याय रूपी तराजू के दोनों पलड़े समान करके और प्रेम बाँट के द्वारा मेरे हृदय को उस पर रख कर तोलोगी तो तुम खुद ही उसका हल्कापन और भारीपन जान जाओगी, उसके गुण-दोषों का परिचय पा जाओगी । तुम हृदय रूपी कसौटी पर कस कर मेरे मन की परीक्षा करलो ।

आज तुम्हें बताना होगा कि तुम क्यों मुझ पर इतनी कठोर होगई हो ? हे मेहर ! मेरी मान करने वाली रानी ! तुम्हें आज तो मेरी बात माननी ही होगी । मुझे भी तो मालूम हो कि मुझ से ऐसी क्या खता हुई है जो पिछले चार वर्षों से तुमने मेरी ओर आँख भी नहीं फेरी है ।

मेहर ने कहा “क्या सचमुच तुम इसका कारण नहीं जानते ? क्या वह भी मुझे ही बताना होगा ? दुनिया जिस बातको जानती है क्या वह बात

तुम्हें मालूम नहीं ? तुम दूर हट जाओ । इन खूनी हाथों से मेरा स्पर्श न करो । तुम्हों मेरे पति के कातिल हो, तुम मेरे पास भी मत आओ ।”

यह सुन सलीम मेहर के पाँवों पर गिर पड़ा और उससे बोला—“हे रानी, मुझे क्षमा कर दो ! मैं हत्या का अपराधी हूँ । मैं इसे स्वीकार करता हूँ । किंतु यह तो स्वाभाविक ही है कि प्रेमी अपनी प्रिया के दूसरे प्रेमी से जलता है और उसे हराने के लिए सब प्रकार की चालें चलता है ।

“हाँ दोषी

बहादो ॥”

शब्दार्थ—संजीवन=संजीवन बूटी । रकीब=प्रतियोगी । प्रेम-मद्य-विक्षिप्त=प्रेम रूपी शराब का दीवाना ।

भावार्थ—“हाँ मैंने दोष किया है । मैंने भारी अपराध किया है जो मैं किसी के नेत्रों की कटारी की चोट खा-खा कर भी आशा की संजीवनी द्वारा प्राणों को नहीं घुला पाया । मैंने अनेक बार अपने दुखी मन को समझाने की कोशिश की ।

आखिर मेरा मन प्रेम के घोके में आ ही गया और मैंने यह निश्चय कर लिया कि तुम्हें हर कीमत पर पा ही लूँ । इस गुलाब को पाने में जिन-जिन काँटों ने रुकावट डाली, मैंने उन सब को तोड़ दिया और गुलाब की इस डाली को काँटों से रहित कर दिया ।

अतएव मेरे इस प्यारे रत्न को जो प्रतियोगी लेकर भाग गया था, मैंने उसके जीवन की डोर ही काट दी । मुझ से अवश्य भूल हुई है । किन्तु मैं प्रेम में दीवाना हूँ । प्रेम की शराब पीकर पागल बने व्यक्ति की भूल मन में न लाना ।

मैं दोषी हूँ । लेकिन प्रेम से अन्धा होगया था । या तो तुम मुझे क्षमा कर दो या यह तलवार लो और पति के खून के बदले मेरा खून बहा दो ।”

पृ० १३२ “नत मस्तक

तुम जीओ ॥”

शब्दार्थ—हृदय-विदारक=दिल चीरने वाली । उत्पाती=चंचल । इक-बाली=जिस अपराधी ने अपराध स्वीकार कर लिया हो । याचने=माँगने ।

भावार्थ—सिर झुकाए जहाँगीर बैठा था । मेहर ने उसे उठाया और कहा “यह सब मेरी किस्मत का ही दोष है । जो होना था वह तो हो ही गया । तुमने अन्धा नहीं किया । लेकिन अब तो अवसर बीत गया है । कुछ

नहीं किया जा सकता। और तुम्हारे जीवन पर भी खून का कलंक लग गया।

वह बड़ी कायरता की घटना थी जिसने मेरा दिल चीर कर रख दिया है। उसने मेरे दिल पर ऐसी चोट की है कि हमेशा याद रहेगी। मेरे मन में तो यही था कि मैं तुम से कभी नहीं बोलूँ और हमेशा तुम से अलग रहूँ। मैं नहीं चाहती थी कि खून बहाने वाले की इच्छाओं पर अपना जीवन बिता दूँ।

इसीलिए मैं चुपचाप मरने के लिए जा रही थी ताकि चंचल मन मुझ पर अधिकार न कर सके। किन्तु तुमने स्वयं अपराध स्वीकार करके वह अवसर ही नहीं दिया। तुम स्वयं ही प्राणदंड माँगने लगे। इस प्रकार तुमने मेरे सामने बड़ी कठिन समस्या खड़ी कर दी।

खून बहाकर भी मैं उन्हें नहीं पा सकूँगी। खूनी बन कर कभी भी कलंक का टीका नहीं लगवाऊँगी। मैं तुम्हारे जीवन का प्याला नहीं फैलाऊँगी। तुम खुशी से इसे पीओ। तलवार म्यान में रखो और आनन्द से जीवित रहो।

“जोना

करने दो॥”

शब्दार्थ—स्यापे=रोना।

भावार्थ—जहाँगीर ने कहा—“मैं क्यों जीवित रहूँ जब कि तुम मेरी छाया से डरती हो और मेरे नाम से भी नफरत करती हो। जब तुम ही मुझे उदासीन होकर जीवन बर्बाद करने के लिए जा रही हो, जब तुम्हारी मर्त आँखें मेरी ओर उठती ही नहीं तब मैं जीवित रह कर क्या करूँगा ?

चलो इस उदासी को छोड़ो ! प्रेम से मिल कर रहो। और नहीं तो इस जीने से तो मरना ही अच्छा है।”

मेहर ने उत्तर दिया—“मुझे तुम से नफरत नहीं है लेकिन फिर भी दिल खोल कर मैं तुम से नहीं मिल सकती हूँ ! मैं तुम से प्रेम तो नहीं कर सकती लेकिन तुम्हारा आदर करती हूँ। सदैव एक पुजारिन के समान तुम पर श्रद्धा और भक्ति रखती हूँ।

मैं इस पवित्र रेखा के अन्दर पाँव नहीं धरूँगी। बस दूर से ही सूर्य के समान तुम्हारी पूजा किया करूँगी। मैं रात के समान हूँ। बस दूर से ही सूर्य के दर्शन करने दो। वियोगिनी के समान पति के पीछे रो-रो कर आँसू बहाने दो।

पृ० १३३ “रोती

फिर फिर ॥”

शब्दार्थ—दृगमुक्ता=आँख के मोती, आँसू।

भावार्थ—“चाहे मैं रोती रहूँ, तुम्हारे दर्शन के लिए ललक कर रह जाऊँ; लेकिन फिर भी तुम्हें आँख भर कर नहीं देखूँगी। एक पल भर के लिए तुम्हारे दर्शन करके मैं प्रसन्न हो लेती हूँ और अपने जीवन के दुख के अन्धकार को मिटा लेती हूँ।

रात जैसे सूर्य पर ओस के मोती चढ़ा कर मिट जाती है उसी प्रकार मैं भी तुम पर आँसू के मोती चढ़ाने आती हूँ और अपने आप को भूलकर लज्जा में डूब जाती हूँ। जिस प्रकार रात सूर्य को नहीं पा सकती और उसके स्पर्श से ही समाप्त हो जाती है उसी प्रकार तुम्हें दूर से देख-देख कर रोना ही मेरा जीवन है। तुमसे मेरा मिलन संभव नहीं है। तुम्हारा स्पर्श मेरे लिए मृत्यु के समान है।”

जहाँगीर बोला—“तुम खुश रहो और तुम्हारी मुझ पर कृपा बनी रहे। मैं प्रेम नहीं चाहता। मैं तो तुम्हारी पूजा करना चाहता हूँ, तुम्हारा भक्त बनना चाहता हूँ। तुम रात नहीं हो। तुम तो मेरे जीवन का प्रकाश हो। तुम्हारे बिना मेरे लिए सारी दुनिया में अंधकार ही अंधकार है।

मैं तो सूर्य के समान हमेशा तुम्हें पाने के लिए घूमता रहा। लेकिन जैसे रात सूरज से छिप जाती है वैसे ही तू भी हँसकर छिप जाती थी और मैं तुम्हें कभी भी न पा सका। हे रातरूपी सुन्दरी, तू मुझ से मत भाग। मैं तो तेरे साथ ही सोना चाहता हूँ। तेरे काले बालों में तारा बन कर खो जाना चाहता हूँ।

मुझ और कुछ नहीं कहना है। मेरी बस एक इच्छा है। आशा है उसे तुम पूरी कर दोगी। अगर तुम कहीं तो मैं अपनी वह इच्छा प्रकट कर दूँ और तुम उसे पूरा कर दो। उसे छोड़ जीवन भर मैं तुम से और कुछ नहीं माँगूँगा।”

मेहर ने कहा—“इस समय मेरा मन अशान्त है। इसलिए जाती हूँ। इसे फिर सुनूँगी।” यह कह कर वह सोचती हुई धीरे-धीरे चल दी। वह बार-बार घूम कर पीछे देखती जाती थी।



अठारहवाँ सर्ग

कथासार—इस सर्ग के आरम्भ में कवि ने ग्रीष्म ऋतु का वर्णन किया है। जोर की गर्मी है। मेघ का नाम भी नहीं है। पसीने की धाराएँ बह रही हैं। किरणों से सारा संसार जला जा रहा है। जल जल रहा है, रेती तो बिल्कुल आग ही हो गई। नदियाँ सूख-सूख कर काँटा हो गई हैं। जवासा फूल कर हरा हो गया है।

मधुमक्खियाँ फूलों पर भी जलने लगीं थीं इसलिए थोड़ी शीतलता पाने के लिए जल में जा बैठी हैं। तितली मीलों तक करील के बन में घूम आती है लेकिन उसे छिपने के लिए एक पत्ते की छाया भी नहीं मिलती। चिड़ियाँ भी गाना भूल गई हैं। हाँप-हाँप कर जान दे रही हैं। किसी तालाब के किनारे के पेड़ पर बैठ कर किसी तरह समय काट रही हैं।

शेर भी किसी गुफा में छिपा हुआ है। गर्मी के मारे परेशान है। जीभ निकली है। हिरन भी चौकड़ी भरना भूल गए हैं। धूप के कारण काले हो गए हैं। चरवाहे भी पशुओं को लेकर बड़के पेड़ के नीचे बैठे विश्राम कर रहे हैं। बड़ का पेड़ इतना सघन है कि उसके नीचे सूर्य की एक भी किरण नहीं पहुँच पाती। सभी के लिए पानी ही जिन्दगी है।

आगरे की गर्मी तो और भी भयंकर है। इस गर्मी से घबरा कर जहाँगीर और मेहर दोनों काश्मीर चल दिए। काश्मीर तो सचमुच संसार का स्वर्ग ही है। उसकी शोभा अनुपम है, उसकी शीतलता सुखद है, उसका जीवन पवित्र है। वातावरण बहुत शान्त और प्रफुल्ल बनाने वाला है। वहाँ पहुँच कर व्यक्ति गर्मी की ही नहीं, जीवन की परेशानियाँ भी भूल जाता है।

जैसे-जैसे जहाँगीर और मेहर पर्वतों को पार करते काश्मीर के निकट पहुँचते हैं वैसे ही वैसे उनके दिल को शान्ति प्राप्त होती है। मार्ग तो हरियाली के अंचल में छिपा है। उसका आदि-अन्त दिखाई नहीं पड़ता। कभी तो वह

पर्वत की चोटी पर चढ़ जाता है और कभी उससे उतर कर नीचे आता है । कभी वह नदी के किनारे-किनारे आगे बढ़ता है और कभी खाइयों से होकर निकलता है ।

वहाँ केशर के सुगन्धिपूर्ण खेत हैं । पर्वतों की चोटियाँ बर्फ के काग़्ग सफ़ेद हो रही हैं । जब सूर्य की किरणें उन पर पड़ती हैं तो चमकने लगती हैं । पहाड़ी भरनों में बर्फ के अनेक टुकड़े हैं जो एक दूसरे से टकरा कर बड़ा शोर पैदा करते हैं । कहीं धरती का कोई हिस्सा शोर करता हुआ नदी की धारा में गिर पड़ता है । असंख्य लहरें उठाकर तथा उनसे खेल कर फिर उसी नदी के जल में डूब जाता है ।

संध्या का सूर्य पारस बन कर बर्फ, जल और बादलों को सुनहला कर देता है । भरने की फुहारों में पड़कर सूर्य की किरणें अनेक इन्द्रधनुषों का निर्माण कर देती हैं । कहीं जलप्रपात हैं जो किसी कवि की नई कविता के समान रमणीक हैं । उनकी फुहार बड़ी मधुर लगती है ।

जहाँगीर मेहर को ऐसे अनुपम दृश्य दिखाता रहा और उसका मन बढ़-लाने की कोशिश करता रहा । दोनों ही घोड़ों पर चढ़कर घूमने के लिए जाते थे । अगर मार्ग में कहीं कोई शिकार दिखाई देता था तो दोनों ही उसे तीर मार देते थे । जब उसे लेने पहुँचते थे तो यह भगड़ा पैदा हो जाता था कि तीर किसने मारा है । बड़ी देर तक इसका निश्चय नहीं हो पाता था । तब जहाँगीर ही हार मान जाता था और मेहर मुस्कुरा उठती थी ।

काश्मीर का शक्तिशाली जल पीकर मेहर का स्वास्थ्य बहुत अच्छा हो गया । वह फूल के समान खिल गई । गंभीर चिन्ताओं से मुक्त हो गई । षोडशी का सा रूप निखर आया । जहाँगीर हमेशा उसके साथ-साथ लगा रहता था । वह तो मेहर के सौन्दर्यरूपी दीपक का पतिंगा बना हुआ था । लेकिन फिर भी उससे मिलन नहीं हो पाया । कभी तो मेहर झुक जाती । फिर वह दृढ़ हो जाती ।

एक बार जहाँगीर और मेहर दोनों शालीमार बाग में गये । वहाँ की अनुपम शोभा का क्या कहना ! सुगन्धि, शीतलता, प्रफुल्लता और आनन्द से सारा वातावरण ही विभोर हो रहा था । जहाँगीर ने कुंज में चलकर चौसर

खेलने का प्रस्ताव करते हुए कहा—“जो जीत जाएगा उसे चुम्बन का पुरस्कार मिलेगा और जो हारेगा उसे आलिंगन में बाँधा जाएगा।”

यह सुनकर मेहर ने आँखें नचा कर तथा हँसते हुए कहा “मैं यह खेल नहीं खेलूँगी। अब रहने दो; देखो तो सही वह पौधा सूख रहा है। चलो उसे जल से सींचें, उसकी सूखी मिट्टी को गोढ़ेंगे। छोटी सी नाली के सहारे उस क्यारी में भी जल भर देंगे। उस वृक्ष की डाली को काट-छाँट कर बराबर कर देंगे। आओ केसर की क्यारी से फूल चुन लाएँ। ये गुलाब हौजों में भरकर उनका इत्र निकालूँगी। मैं तो अपना बाग सजाऊँगी। चौपड़ खेलने में क्या रखा है।”

यह सुन जहाँगीर ने विनती एवं प्रेम से कहा “मेहर! यह मत करो। इन कामों से तुम्हारे हाथों में छाले पड़ जाएँगे। बस तुम एक इशारा कर दो। माली सब काम कर देंगे। मालियों के होते हुए तुम्हें स्वयं यह काम करने की क्या आवश्यकता है”, किन्तु मेहर ने उसकी एक न सुनी और चुपचाप जल देने लगी।

एक बार मेहर अकेली नदी के किनारे बैठो वहाँ की शोभा देखने में तल्लीन थी। इतने में किसी नाव के आने का शब्द हुआ और वह इधर देखने लगी। जब नाव पास आई तो देखा जहाँगीर आया है। उसने मुस्करा कर उसका स्वागत किया। जहाँगीर ने नाव किनारे के एक पेड़ की रस्ती से बाँध दी। इसके बाद जैसे ही उसने काई भरे पत्थर पर पाँव रखे, वह फिसल कर गिर पड़ा। और जानबूझ कर मूर्च्छित होगया।

मेहर यह देख कर बड़ी परेशान हुई। उसने उसका सर गोदी में रख लिया और अंचल से उसे पंखा करने लगी, पानी के छींटे देकर वह उसकी नब्ब देखती रही, फिर भी उसे होश नहीं आया। इस पर वह बड़ी परेशान हो उठी और बोली—

“चाहे मेरा जीवन समाप्त हो जाए, चाहे मैं जीवन भर यातना भोगती रहूँ लेकिन ये अच्छे हो जाएँ। आज हम दोनों बेकार ही इधर निकल आए हैं कोई भी पास नहीं। किससे सहायता माँगूँ? मेरी किस्मत ही ऐसी है कि जिसके साथ रहती हूँ उसी पर मुसीबतें टूट पड़ती हैं। हे राजा, जाग उठो।

मेहर तुम से प्यार करती है ।” यह कहकर उसने जहाँगीर के होंठ चूम लिए ।

जहाँगीर ने आँखें खोलीं और बोला “मेहर आज तुमने मेरा आलिंगन कर मुझे जीवित कर दिया है । मुझे कुछ ऐसा विश्वास होने लगा है कि तुमने मेरे अपराध क्षमा कर दिए हैं । तुम अब मेरे जीवन की संगिनी बन जाओ । मेरे जीवन का पथ फूलों से भर दो । क्या मेरे प्यार भरे सपने कभी सच्चे नहीं होंगे ? वह जो तुमने परियों का सपना देखा था वह मेरे जीवन की ही भविष्यवाणी थी । हे सुन्दरी तुम मेरी एक बात मान लो । वचन दो ।”

मेहर ने कहा “जब तक मैं आपकी बात जान न लूँ, मैं हों कैसे कह सकती हूँ । मैं जानती हूँ कि तुम विवाह का प्रस्ताव करोगे । लेकिन अब मेरा विवाह का इरादा नहीं है । मैं अब दो बार हाथों में मेंहदी नहीं लगवाना चाहती ! तुम बेकार दृष्ट न करो । इसके अतिरिक्त मैं आपकी किसी भी आज्ञा को स्वीकार करूँगी ।”

जहाँगीर ने कहा—“यह तुमने कैसे जाना कि मैं विवाह का प्रस्ताव करूँगा । मैं तो यह चाहता हूँ कि इस ताज का भार तुम उठाओ । और मैं तुम्हारा सेवक बन कर कार्य करता रहूँ । देखो अब तुम वचन हार चुकी हो । अब तुम मना नहीं कर सकती । बस इसे स्वीकार कर लो । मैं चाहता हूँ कि मैं तुम में अपने आपको मिटा दूँ ।”

यह सुनकर नूरजहाँ की आँखों में आँसू छलक उठे । उसने अपना सर झुका दिया । उस समय चिड़ियाँ गा रही थीं, भँवरे गुंजार कर रहे थे । उसके बाद जो सिकके चले, उन पर जहाँगीर ने नूरजहाँ का चित्र भी दिया । नूरजहाँ ने जहाँगीर की शक्ति को बढ़ा दिया ।

पृ० १३४ “यौवन

हिलती ॥”

शब्दार्थ - यौवन पर=जवानी पर, तेजी पर । स्वेद=पसीना । सार=लोहा । फाया = रुई का टुकड़ा । श्वास धार रुक रुक चलती थी=नदी की श्वासरूपी धारा धीरे-धीरे चलती थी, धारा की गति मंद है ।

भावार्थ—गर्मी जवानी पर है । सूर्य आकाश में ऊपर चढ़ आया है । कहीं बादल का नामोनिशान भी नहीं है । पसीने की धाराएँ बह रही हैं ।

सूर्य की किरणों बिखर रही हैं। धरती से आग की लपट निकलती है। तालाबों का पानी भी गर्मी से जलने लगा। रेत तो आग के समान ही जल रही है।

लोहा तो गर्मी से फैल गया है लेकिन नदी सूख कर सिकुड़ती जा रही है। जैसे-जैसे गर्मी बढ़ती जाती है वैसे ही वैसे नदी दुर्बल होती जा रही है। नदी सूख कर काँटे के समान पतली हो गई है (उपमा अलंकार), जवासा द्वारा हो गया है और फूल रहा है। गर्मी के कारण कोई चिड़िया तो मर रही है लेकिन बच्चों के लिए वह तमाशा बन गया है।

जल तो काई में तथा मोथों के भीतर छिप रहा है। क्योंकि उसे डर है कहीं सूर्य उसे बिल्कुल समाप्त न कर दे। बुलबुलेरूपी अंगूर भागरूपी रुई के भीतर छिपे हैं। उसकी साँस रूपी धारा धीरे-धीरे चलती है। लहर रूपी नाड़ी का तो कहीं पता ही नहीं है। यह वही नदी है जो बरसात में पत्थर भी तोड़ देती थी लेकिन अब यह घास हिलाने में भी असमर्थ है।

पृ० १३५ “ज्यों ही नाच रहा है॥”

शब्दार्थ—दहका है=जल रहा है। करारा=किनारा। रक्तीब=प्रतियोगी, दूसरा प्रेमी। विरह-विहग=वियोगरूपी पक्षी-रूपक। तच-तच=जल-जल कर।

भावार्थ—जैसे ही जोभ प्यास के कारण बाहर निकलती है, लू के कारण उसमें छाले पड़ जाते हैं। लहरों पर भी बुलबुले छापे हैं। उन्हें भी गर्मी के कारण जान बझाना कठिन हो रहा है। फूले हुए भाऊ के भीतर लाल फूल के रूप में अंगारे जल रहे हैं। नदी का किनारा गर्मी के कारण जल-जल कर आहें भर रहा है।

जो किनारा पहले नदी को गोदी में भरे अपनी छाती शीतल करता था तथा नदी भी लहरों के रूप में उठ-उठ कर जिसको चूम-चूम लेती थी, आज सूर्य उसी किनारे का प्रतियोगी बन गया है और उसकी प्रिया नदी को अपने रथ पर बिठा कर उससे दूर लिए जा रहा है। नदी अब अपने किनारों से बहुत पीछे हट गई है।

पतरंगा और मैना आदि पक्षी विरह के समान तट की छाती को छेद-छेद कर अपना घर बना कर उसी के भीतर रह रहे हैं। फिर वह किनारा उन

पक्षियों के भीतर अपने छिपे प्रेम की मूर्ति की स्थापना करके, स्वयं विरह की आग में जल-जल कर उन्हें बड़े परिश्रम से पालता है।

किनारा अपनी दोनों बाँहें उठाकर खड़ा-खड़ा आहें भर रहा है। नदी भी अपने प्रियतम के वियोग के कारण सूखती चली जा रही है। घमोय प्यासा है और सुनहले फूल के कटोरे में जल की भीख माँग रहा है। और भँवरा बाँस में छिद्र करके बाँसुरी के स्वर पर नाच रहा है।

“मंदारों

जड़े है ॥”

शब्दार्थ—तापपु ज=गर्मी की राशि । भँज रहा=धुमा रहा । बनैठी=पटेबाजों का बाँस जिसके दोनों सिरों पर दो लट्टू होते हैं। नीलाम्बर=नीला आकाश । भ्रू-किरीट=माथे का मुकुट-सूर्य । लाल=एक कीमती पत्थर ।

भावार्थ—गर्मी के कारण मंदार के दौट नीले पड़ गए हैं। बाँस पीले हो गए हैं और टीले तिनपतिया के नीचे छिपे पड़े हैं। मधुमक्खी फूल पर बैठे-बैठे भी जलने लगी थी इसलिए वह जल पर जा बैठी है। कमलनाल फूलों की बनैठी बना कर चला रहा है।

तितली करील के वन में मीलों तक उड़ कर फिर वापिस आ जाती है। उसे छिपने के लिए एक पत्ते की छाया भी नहीं मिलती। चिड़ियाँ भी गर्मी के कारण हाँप-हाँप कर जल रही हैं। गाना भूल गई हैं और नदी किनारे के पेड़ पर छिप कर उन्होंने जीवन की रक्षा की है।

शेर भी गर्मी से घबराया जीभ निकाले हुए किसी गुफा के भीतर छिपा हुआ है। हिरन चौकड़ी भरना भूल गए हैं और धूप के कारण काले पड़ गए हैं। चरवाहे पशुओं को लेकर बड़ के पेड़ के नीचे आराम कर रहे हैं। नीले आकाश के माथे के मुकुट पर असंख्य लाल जड़े हुए हैं। सूर्य असंख्य लालों से जड़ा है।

पृ० १३६ “पूषण

जीना ॥”

शब्दार्थ—पूषण=सूर्य । पावक=आग । बट=बड़ । हिमगिरि=हिमालय । जीवन=जल ।

भावार्थ—सूर्य आग बरसा रहा है। लटें धारण करने वाला बड़, पेड़ को तने रूपी अँगुली पर रखे खड़ा है और नीचे के सब प्राणियों की रक्षा

वैसे ही कर रहा है जैसे कृष्ण ने गोवर्धन को अँगुली पर धारण किया था और जल की एक बूँद भी नीचे नहीं जा पाई थी, इसी प्रकार सूर्य की किरण रूपी बूँद बड़ के नीचे नहीं जा पाती। उसके नीचे सभी प्राणी चैन से आराम करते हैं। ठंडी हवा धूप का प्रभाव नष्ट कर देती है।

गर्मी के कारण सब के माथों से पसीना इस प्रकार बह रहा है जैसे हिमालय से भरना बह रहा हो। सभी की जिन्दगी पानी में ही है। पानी ही जीवन हो रहा है।

‘बरसती

श्वेत ॥’

शब्दार्थ—गिरि-सोपान=पर्वत की मंजिलें। पथ-कोर=मार्ग का किनारा। द्रुत गति=तेजी। हिम=बर्फ। आच्छादित=ढके हुए।

भावार्थ—जहाँगीर और मेहर बरसती हुई आग के समान गर्मी वाले शहर आगरा से भाग कर पर्वतों की मंजिलें पार करते हुए संसार के अनोखे स्वर्ग के समान काश्मीर की ओर चल दिए।

जैसे-जैसे काश्मीर निकट आता जा रहा है, वैसे ही वैसे दिल को सुख एवं शान्ति मिलती है। मार्ग का किनारा हरी साड़ी में ढका है। उसका आदि और अन्त कहीं दिखाई नहीं देता।

कभी तो वह मार्ग पहाड़ों के ऊपर चढ़ जाता है और कभी नीचे उतरता दिखाई देता है। कभी वह उस नदी के किनारे-किनारे चलता है जिसका जल बड़ी तेजी से बहता है।

कभी वह मार्ग गहरी खाई में खो जाता है। कभी वह नदी के भीतर खो जाता है और फिर दूसरे पार से निकलता दिखाई देता है। इस प्रकार वह जंगल के हृदय रूप उस नदी में तीर मार कर निकल जाता है।

कहीं मैदान मिलने पर वह मार्ग बड़ा हो जाता है, और पर्वतों पर वह रेखा के समान होकर आकाश को चूमता दिखाई देता है। तथा आशा की डोरी सा बनकर मनुष्य को आकाश की ओर ले जाता है।

काश्मीर पहुँच कर मुगंधिा केसर के खेत दिखाई देते हैं, बर्फ से ढकी सफेद चोटियाँ दिखाई देती हैं।

पृ० १३७ “तरणि

प्रपात ॥”

शब्दार्थ—तरणि कर=सूर्य की किरण । हेम=सोना । रजत=चाँदी । हिम-स्रोत=बर्फ के झरने । हिम=बर्फ । जीवन=जल । पाषाण-विषाद=पत्थर का दुख । नवजात = नई उत्पन्न हुई । प्रपात = आबशार, जहाँ ऊपर से पानी गिरता हो !

भावार्थ—जब सूर्य की किरणें चमकती हैं और चाँदी के समान सफेद बर्फीली चोटियाँ तथा सोने सी किरणों का मिलन होता है तो वे चोटियाँ तेज प्रकाश के साथ चमकने लगती हैं । बर्फीले झरनों में बर्फ के टुकड़े हैं जो एक दूसरे से टकरा कर बहुत शोर करते हैं ।

कहीं किनारे की धरती का भाग टूट कर उसमें गिर पड़ता है । नदी की आवाज़ में आवाज़ मिला देता है । वह लहरों के साथ आनन्द मना कर उसी में लीन हो जाता है ।

सुन्दर संध्या का सूर्य पारस बनकर बर्फ, जल और मेघों को सोने का सा बना देता है । झरनों की फुहार पर उसकी किरणें असंख्य इन्द्रधनुष बना देती हैं ।

हमेशा रहने वाला जलप्रपात, दुख के अनुवाद के रूप में, पत्थर के दुख की अभिव्यक्ति के रूप में कवि की नई बनी कविता के समान हमेशा झरता रहता है ।

“उठ

अनन्त ।”

शब्दार्थ—कुहासा=धुंध । बिरवा=छोटे पेड़ । वारि-बालाएँ = जल-बालाएँ, लहरें । वक्ष=हृदय ।

भावार्थ—जल-प्रपात के नीचे मधुर फुहार उड़ रही हैं जो धूँए की धारा के समान तथा धुंध के समान दिखाई देती हैं ।

फूलों से भरे पेड़, कृष्ण के समान लहर रूपी सुन्दर जलबालाओं को देखकर उनके साथ रास करके, क्रीड़ा करके आनन्द मना रहे हैं । वह तालाब सुन्दर है । जल उजला है तथा कमल रूपी हृदय में अपार प्रेम भरा हुआ है ।

नदी की लहर आह के समान धैर्य रूपी किनारे को डुबो देती है । विरह का दुख उसके दिल में समाया है । वह अपने कठोर प्रिय के ध्यान में

झुबी है ।

जिस प्रकार दुष्यन्त के जाने के बाद शकुन्तला ठगी सी आकाश की ओर देखती रह गई थी, उसी प्रकार वह नदी भी आकाश की ओर देख रही है—उपमा ।

पृ० १३८ “विरह

क्लेश ॥”

शब्दार्थ—-विरह-विधुरा=विरह से दुखी । मानसी=नदी ।

भावार्थ—वह विरह से दुखी तथा पति द्वारा अपमान की चोट खाई शकुन्तला के समान ही स्वर्ग के समान काश्मीर प्रदेश में सो रही है । उसने अपना फूलों का शृंगार किनारे पर फेंक दिया है ।

हे नदी, तेरा यह रूप देख कर सभी दुखी होते हैं ।

“मनोहर

हरा ॥”

शब्दार्थ—शहगाम = साथ-साथ । विपिन=वन । उग्रह=मुक्त होकर । षोडश=सोलह । फानूसी शीशा=शीशे के समान पर्दा । शलभ=पतिंगा ।

भावार्थ—जहाँगीर मेहर को ऐसे ही अनुपम दृश्य नित्य दिखाता रहा । दोनों घोड़े पर चढ़े रोज ही साथ-साथ घूमने जाते थे ।

रास्ते में अगर कहीं कोई शिकार दिखाई देता था तो दोनों ही तीर मार देते थे लेकिन फिर यह निश्चय नहीं कर पाते थे कि किस के तीर ने उसे मारा है ।

तब जहाँगीर ही हार मान जाता और नूरजहाँ की मुस्कान देखकर आपको विजयी समझता था । दोनों रोज ही सैर को जाते थे और जंगल में घूम कर सुखी होते थे ।

मेहर स्वास्थ्य देने वाले जल और वायु को पाकर फिर फूल के समान खिल गई । गंभीर चिन्ता से उसे मुक्ति मिली और वह पूर्णिमा के समान खिल उठी थी ।

उसके सौंदर्य रूपी दीपक का पतिंगा बन कर जहाँगीर हमेशा उसके साथ ही रहता था । लेकिन शीशे के समान एक कोमल बाधा उस पतिंगे को उस रूप से दूर रखती थी ।

पृ० १३६ “चंग

संग ॥”

शब्दार्थ—चंग=पतंग, मन । आव=गुस्सा । भ्रू-असि=भौंहरूपी तलवार ।
नूर=प्रकाश । जहाँ=दुनिया ।

भावार्थ—कभी तो मेहर अपने मन की पतंग को ढील देती थी और फिर पल भर में ही उसे झुका लेती थी । जहाँगीर को थोड़ा ललचा कर फिर वह अपने भौंहों की कमान की डोरी चढ़ा लेती थी, नाराज़ हो जाती थी ।

जब वह क्रोध करती तो गुलाब सा मुख लाल हो आता था । चढ़ी हुई भौंहें और भी सुन्दर लगती थीं । माथे से ओस की बूँदें गिरकर भौंह रूपी तलवार को भिगोकर उसकी धार को और तेज़ करती थीं ।

यह तलवार जिधर भी घूम जाती थी, वह कलेजे के पार हो जाती थी । यह विविध रंग बनाती, बिगाड़ती और फिर बनाती । इस प्रकार वह संसार के प्रकाश—खुदा—के समान ही हो गई थी । खुदा भी विविध दृश्य बनाता-मिटता रहता है ।

“शालामार

सर ॥”

शब्दार्थ—प्रांगण=आँगन । बन-अश्व-सरिस=बन के घोड़े के समान—उपमा । बाजि बन=घोड़ा बन कर । सोपान=सीढ़ियाँ । विमल=स्वच्छ । जङ्गम=चेतनाहीन तथा गतिवान् अर्थात् भ्रमना ।

भावार्थ—जहाँगीर मेहर से कहता है—“देखो तो शालामार में नहर के बीच जंगल के घोड़े के समान मतवाला भ्रमना कैसा निकला हुआ है और घोड़े सी से दूर चाल दिखा रहा है । जल की ये चंचल लहरें पत्थर के भीतर बहती हैं । इन्हें देखकर सभी नीरस व्यक्तियों के मन में भावों की तरङ्गें पैदा होने लगती हैं ।

देखो तो जल सीढ़ियों से उतर-उतर कर कैसा मधुर संगीत पैदा कर रहा है, फव्वारे भी उछल-उछलकर आनन्द की वर्षा कर रहे हैं । यह दृश्य कितना प्यारा और मनोहर है । जंगल के इन पक्षियों की आवाज़ सुनकर बेहद खुशी होती है ।

फूलों से भरी घास मखमल के समान है, वे रङ्ग-बिरङ्गी क्यारियाँ, फूलों से चित्रित सी दिखाई देती हैं, उजले तालाब में वह हंसों की सुन्दर जोड़ी है

आओ मेहर, हम भी जल क्रीड़ा का आनन्द ले लें। पर्वत के इस झरने के समान हम भी स्वतन्त्र होकर बिहार करें।

बगीचे के पथ के दोनों किनारों पर सफेदों की सुन्दर पंक्तियाँ हैं जो तुम्हें देखकर हँस-हँस कर सर झुका रही हैं।

पृ० १४० “इन

जल ॥”

शब्दार्थ—चौसर=चार नहरों के बीच। पाटल=गुलाब। बहकी=अनावश्यक रूपी से बढ़ी हुई।

भावार्थ—“चलो हम भी इन चारों नहरों के बीच गुलाब की उस कुँज के पीछे चौसर बिछाएँ और अपनी-अपनी गोठ डालें। जिसका पौ बारह होगा उसे चुम्बन का इनाम मिलेगा और जो हारेगा उसे आलिंगन का बंधन।”

यह सुनकर मेहर ने हँसकर और आँखें नचा कर कहा—“मैं यह खेल नहीं खेलूँगी। अब रहने दो। वह पौधा सूख रहा है, उसमें जल डालेंगे और उसके थाले की मिट्टी सूख गई है, अतः उसे गोढ़ेंगे।

चलो नहर में नाली बनाकर उस क्यारी को जल से भर दें। अनुचित रूप से आगे बढ़ी उस पेड़ की डाली को चलो काट दें। चलो, केसर की क्यारी से फूल चुन-चुन कर लाएँ। यह पौधा यहाँ बेमेल है। चलो इसे दूसरी जगह लगा दें।

इन गुलाबों को हौज में भर कर इनका इत्र निकालूँगी। मैं चौपड़ नहीं खेलूँगी। मैं तो अपना बाग सजाऊँगी।”

जहाँगीर ने प्रेम और विनती से कहा “मेहर यह मत करो। इससे तुम्हारे कोमल हाथों में छाले पड़ जाएँगे। माली किस लिए हैं। उन्हें इशारा भर कर दो। वे सब काम कर देंगे।” लेकिन मेहर ने एक भी न मानी और मुस्काकर फूलों में पानी देने लगी।

“तू

उठाती ॥”

शब्दार्थ—पाल-पर=पालरूपी पर—रूपक। सर-सिता=तलवार रूपी सितार। सुन्दरियाँ=लहरियाँ। सुरभि-वीचि=सुगन्धिरूपी लहर—रूपक। अलि-पाँती=भँवरों की पंक्ति।

भावार्थ—मेहर नाव से कहती है— “हे मेरी मस्त नाव, तू इठलाती हुई चली जा । तू अपने पाल रूपी परों को खोले हुए बिना डगमगाए अपने आप को सँभालती हुई चली जा । तेरी चाल को देखकर हँसों की पंक्ति भी लज्जित हो जाए ।

तू तालाब रूपी सितार के तारों को बजाती हुई, लहरियों से छेड़खानी करती हुई, सुन्दर स्वर को उत्पन्न करती हुई, सितार बजाने वाली अँगुली के समान चली जा रही है ।

नदी के दोनों किनारों पर फूलों की रंगीन नदी लहरा रही है, तू सुगंधि रूपी लहरों को पैदा करती उनमें ऐसी चली जा जैसे भँवरों की पंक्ति जा रही हो ।

जिस प्रकार रात में पलकों पर नए-नए सपने आते हैं, जिस प्रकार पूर्व दिशा में ऊषा नए-नए चित्र बनाती है, उसी प्रकार तू भी अपने पालों को उठाए हुए नए-नए दृश्य दिखाती हुई चल ।

पृ० १४१ “चंचल

गाती ॥”

शब्दार्थ—सुरारंग=शराब का रंग, लालिमा । पुरइन=कमल के पत्ते । डल=काश्मीर की एक भील ।

भावार्थ—चंचल जावनी की उमंग के समान, आँखों पर चढ़ी शराब की लालिमा के समान, जल रूपी होठों पर लहराती हुई मुस्कान के समान सुन्दर रूप से तू बहती चल—उपमाएँ ।

ये चिनार के पेड़ हैं जो फूलों से लदे हैं । तितलियाँ इनमें खेल-खेल कर फूलों का समूह बिखेर देती हैं । तू इन फूलों से भरती हुई बढ़ती चल ।

डल भील के कमलों के समूह को देखकर मन आनंद से भर जाता है । जब तू कमलों के पत्तों को हटाती हुई बढ़ती है तो तू स्वयं ही कमलों के भीतर छिप जाती है ।

लो अब सुन्दर घाट आगया है । इस पर सफेदों की लूया है । अब धूप अच्छी नहीं लगती । इसलिए तू यहीं रुक जा । देख तो चिड़ियाँ कैसा मधुर गीत गा रही हैं ।

“मात

आये ॥”

शब्दार्थ—नीड़=घोंसला । अनिल=वायु । डैन=पंख । अम्बुधि-कुमार=सागर का पुत्र । ताड़ना = नाराज़गी । अवहेलन कर=उपेक्षा कर । द्विजगण=पक्षियों का समूह । अन्तःपुर=हरम ।

भावार्थ—नन्हा पक्षी माता-पिता की संरक्षा से उदासीन होकर घोंसला छोड़कर बार-बार उड़ने की कोशिश करता है । इच्छाओं के आवेश में वायु की धारा में कूद कर नवीन पंखों के ढाँड़ लगाता दिन रात तैरता चला जाता है ।

उसी प्रकार सागर का पुत्र यह मेघ पिता से आज़ाद होकर, इच्छा से घूमता है । पिता की नाराज़गी की उपेक्षा कर बड़ा शोर करता हुआ घूमता है । बिजली के विमान पर बैठकर तथा हवा की पतवार बना कर पक्षियों के समूह से होड़ लगाते हुए घूम रहे हैं । उदाहरण अलंकार ।

ये मेघ मित्र देशों, प्रान्तों तथा प्रदेशों से होते हुए तथा खेलते हुए चले आ रहे हैं । कभी-कभी किसी पर्वतकन्या के जनाने महल के भीतर चुपचाप घुस जाते हैं—गुफा में प्रवेश कर जाते हैं । और कभी उस मुसाफिर की राह रोक देते हैं जो अपनी पत्नी से मिलने के लिए चिन्ता से भरा तेजी से चला जा रहा है ।

उसकी प्रिया झरोखे से भौंक-भौंक कर उसके आने की प्रतीक्षा कर रही है । मेघ उसके दरवाजों से टकरा कर उसमें यह भ्रम उत्पन्न करता है कि उसका पति आगया है । जब वह दरवाज़ा खोल कर और पति को न पा कर निराश हो जाती है, उसके मिलन की इच्छा टूट जाती है । तब यह उसकी परेशानी पर गर्जन करके ज़ोर-ज़ोर से हँसता है ।

ये आगे बढ़ते-बढ़ते कभी किसी पर्वत से टकरा जाते हैं । कभी किसी जंगल में फँस जाते हैं तो धाराओं के रूप में रो-रो कर बाहर निकल पाते हैं ।

पृष्ठ १४२ “ग्राम

प्रयास ॥”

शब्दार्थ—उच्छृङ्खलता=तेज़ी । यान=जहाज ।

भावार्थ—मेघों का यह जहाज गाँव, नगर, बगीचे, जंगल और शहर का आनन्द लेता हुआ हिमालय तक जा पहुँचा । ये बालकों की स्वाभाविक

तेजी के साथ घर से निकल तो पड़े किन्तु जब घर की याद आई तो बड़े व्याकुल हुए ।

जब यह आगे बढ़ने लगे तो हिमालय ने अपनी ऊँची भुजा फैलाकर तथा डाँटकर कहा--रुक जाओ, अगर आगे बढ़ने की कोशिश की तो सर्दी के दंड से तुम्हारी सारी गर्मी दूर कर दूँगा । तुम को जमा कर पत्थर बना दूँगा और तुम्हारे उड़ने वाले पंखों को काट डालूँगा ।

अब वे रुक गए । उन्हें कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया । मेघों का समूह खड़ा का खड़ा रह गया । क्योंकि उनका घर बहुत दूर था और वे बहुत थक गए थे । फिर इन्होंने हिमालय की ओर देखा । सफेद बालों वाला वह बड़ा कठोर था । सर्दी का दंड देने को तैयार वह इनकी ओर क्रोध में भर कर देख रहा था ।

अब वे अधिक धीरज नहीं रख सके और सिसककर रोने लगे । आँसू के रूप में वे आकाश रूपी नेत्रों से गिरने लगे । उनकी माँ नदी इन्हें प्यार से अपने पास बुला-बुला कर इन्हें पिता के घर पहुँचाने की कोशिश कर रही है ।

“उन्हीं

वह ॥”

शब्दार्थ—सरि=नदी । व्यंजन=भोजन । वादन-यंत्र=बाजा ।-प्रस्तर=पत्थर ।

भावार्थ—उन्हीं मेघ-कुमारों में से दो कुमार किसी के नयन रूपी सागर से आकर मिल गए । मेहर के दोनों आँसू भी मेघों के समान ही नदी ने अपने भीतर छिपा लिए । मेहर अपने हाथ पर गाल रखे जीवन के रसहीन भोजन में कल्पित स्वप्न रूपी रामरस डालती हुई उसी नदी के किनारे चिन्ता में लीन बैठी थी ।

फुहार पड़ रही थी । वायु धीरे-धीरे चल रही थी । वृक्ष के पत्ते रूपी बाजे पक्षियों की आवाज के साथ ही गारहे थे । संजीवनी के समान हरी काई से ढके हुए पत्थर के पास ही वह बैठी थी । वहाँ विविध रंगों के फूलों से सुशोभित घास हिल रही थी ।

वहाँ जलरूपी आँखों में मछलियाँ पुतलियों के समान खेल रही थीं ।

वहाँ दिशाएँ अन्तरिक्ष को हरिणों की मालाएँ पहना रही थीं। वहाँ पर एक शिला थी जिससे टकरा कर नदी की धारा मुड़ जाती थी। तब नदी उसको रेत में परिणत करके अपनी धारा सुधार लेती थी।

वहीं बेठी मेहर नदी में नैन रूपी नौका को भिभरी खिलती रही। जल पर अपनी आँखें दौड़ाती रही, तथा आँसू रूपी सागर में अपने जीवन की नदी को मिलाती रही अर्थात् रोती रही।

पृ० १४३ “इतने में क्षण क्षण ॥”

शब्दार्थ—अनभिव=नई। व्यजन=पंखा। वाञ्छित=इच्छित।

भावार्थ—इतने में ही नाव के चलने की आवाज आने लगी। उसे सुन कर वह सचेत हुई। उस नाव को देखकर उसके मन में भी एक नई लहर उठने लगी। नाव पास आ पहुँची। स्वयं जहाँगीर उस पर बैठा था। दायाँ डोंड रोक कर बाएँ डोंड से वह किनारे की ओर आने लगा।

जब मेहर ने देखा कि बहुत रोकने पर भी नाव लहरों में बहती चली जा रही है; तो पहले वह संकुचित हुई, फिर नमस्कार कर हँस दी। जहाँगीर जल में कूद पड़ा। नाव को रोक कर किनारे पर लाया। और फिर रेशम की रस्सी से नाव एक पेड़ के साथ बाँध दी।

उसके पाँव भीगे थे। जैसे ही उसने काई के पत्थर पर पाँव रखे, वैसे ही वह फिसल गया और तेज़ी से धरती पर गिर पड़ा। उसके गिरते ही मेहर ने उसे गोदी में ले लिया और उसे अपने आँचल से पंखा करने लगी।

जहाँगीर कुछ तो चोट से, कुछ थकावट से और कुछ जानबूझ कर ही मूर्च्छित होकर इच्छित प्रिय की गोदी में सो गया। मेहर घबरा गई। अंचल से पवन करने लगी और मुख पर जल के छींटे देकर उसकी नब्ज प्रतीक्षण देखने लगी।

“संग अपने भर ॥”

शब्दार्थ—विकट=जोर की। दुर्दैव=अभाग्य। दुर्दिन=बुरा दिन।

भावार्थ—मेहर उसके शरीर को व्याकुलता के साथ देखते हुए बोली—“इनके तथा मेरे साथ कोई भी नहीं। हम दोनों अकेले ही चल पड़े। कहीं

इन्हें जोर की चोट आगई है ।” जब उसने देखा कि मैं इसका कुछ भी इलाज नहीं कर सकती और उसकी हालत भी सुधरती न देखी तो वह अपना सर ठोक कर बोली—“हे दयानिधान ! अब क्या होगा ?”

“चाहे अभाग्य हमेशा मेरे जीवन के साथ रहे, चाहे मेरा भाग्य कभी न जागे और वह हमेशा के लिए सो जाए, किन्तु उनको क्यों परेशानी हो जो मुझ से प्रेम करते हैं । जैसे ही कोई मेरे निकट वह आता है उस पर बुरे दिन का वज्र-प्रहार हो जाता है ।

हे राजा ! जागो । मेहर तुम से प्यार करती है । तुम जिसे अपना कहते थे, एक बार तो उसकी ओर देखो । तुम क्यों यहाँ अकेले ही चले आए ? सेना, सेवक और दास-कहाँ हैं ? कितने दुख की बात है कि भारत का स्वामी इस प्रकार घरती पर पड़ा है !”

यह कह कर उसने उसके होठों को जोर से चूम लिया और उठा कर उस बेहोश जहाँगीर को आलिगन में भर लिया ।

पृ० १४४ “आलिगन

विचार ॥”

शब्दार्थ—उपचार=इलाज । अधर-सुधा=होठों का रस । संजीवन=जीवन देने वाला । अवसान=अन्त । बलात्=जिद्द ।

भावार्थ—आलिगन के इलाज से तथा होठों से जीवन देने वाला रस पीकर जहाँगीर ने आँखें खोल दीं । यह देख मेहर की चिन्ता समाप्त हुई । हँस कर उसने मेहर से कहा—“हे सुन्दरी ! तुम्हें बार-बार धन्यवाद है जो तुमने मुझे बचाकर आलिगन का द्वार पहनाया है ।

अब मुझे कुछ-कुछ विश्वास हो चला है कि तुम मेरे जीवन की भूलों को भुला दोगी और मेरी संगिनी बन कर मेरे जीवन में फूलों की वर्षा कर दोगी । बताओ तो, क्या मेरा प्यारा सपना सच्चा हो जाएगा ? क्या सुख और दुख दोनों का विवाह हो जाएगा ? मैं दुख के समान हूँ और तुम सुख के समान ।

यदि परियों की भविष्यवाणी मेरे ही भविष्य की थी, यदि शुक के समान चमकती तुम्हारी ये आँखें हमारे जीवन के प्रभात की सूचना देने वाली हैं, तो घायल पक्षी के समान मुझे मरहम-पट्टी करके बचालो । हे सुन्दरी !

आज केवल मेरी एक बात और मान लो ।”

मेहर ने अपने नयनों को चंचल करके कहा, “जब तक मैं बात न जान लूँ, कैसे हों कह सकती हूँ । तुम ज़बर्दस्ती न करो । तुम मेरे साथ विवाह का प्रस्ताव करोगे । लेकिन मैं उसके लिए तैयार नहीं हूँ । मैं एक बार फिर दायों पर मेंहदी नहीं रचवाना चाहती ।”

“इससे सुन्दरि ॥”

शब्दार्थ—तव=तुम्हारी । प्रमदे=सुन्दरि । मधुमक्षिका=मधुमक्खी । आसव=रस ।

भावार्थ—“इससे महाराज जहाँगीर ! तुम इस बात पर बेकार हठ न करो । आपकी और कोई भी आज्ञा मुझे स्वीकार है ।

जहाँगीर ने तेजी से कहा—“सुन्दरी ! तेरा यह अनुमान ग़लत है । मुझे तो कभी इसका ध्यान भी नहीं आया । बस मेरी एक इच्छा है । अगर कहो तो बताऊँ । नहीं तो मुझे चुपचाप इसी गोद में मर जाने दो ।”

मेहर ने कहा “आप की यह बात सर आँखों पर । आप बेकार ही निराश हो रहे हैं । आप कहिए कि आपकी ऐसी कौन सी इच्छा है ?”

जहाँगीर ने कहा—“अच्छा अब बात से मत फिर जाना । मेरी इच्छा है कि मैं अपनी नूरजहाँ के सिर पर ताज रख दूँ । तुम मधुमक्खियों की रानी के सम्पन्न मेरे दिल के सिंहासन पर बैठकर हम सब पर हुकूमत करना ।

मैं संसार भर के फूलों का रस ला-ला कर तेरे हृदय के खज़ाने में हमेशा आनन्द का रस भरता रहूँगा ।”

पृ० १४५ “तुम दो जाम ॥”

शब्दार्थ—आसव=रस । रतनारी=लाल । किरीट=मुकुट । प्रतियाम=हर समय । जाम=शराब के प्याले ।

भावार्थ—“तुम केवल अपने प्यारे होठों का रस मुझे पिला देना । बस, अपनी लाल मस्ती भरी आँखें मेरी आँखों से मिला देना ।”

मेहर ने का—“प्रिय ! इस प्रकार परेशान करके मुझ पर इतना बोझ न डालो । एक स्त्री का सिर कौन इतना बोझ सँभाल सकता है ? इस मुकुट को रहने दो । इससे पहले ही तुम जो प्यार का ताज मुझे पहना चुके हो, वही

सफल है ।

हे प्रिय ! इन कीमती पत्थरों का बोझ मुझ पर मत डालो । सारे साम्राज्य का भार सिर पर उठाने की हिम्मत मुझ में नहीं है । नहीं ! नहीं !! मैं तो इस विचार से ही घबराती हूँ । मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करती हूँ कि यह ताज अपने सिर पर धारण करो ।”

जहाँगीर बोला—“तुम वचन हार चुकी हो । अब यह ताज तुम्हारा हो गया । यह राज्य, धन और जीवन भी मैंने तुम पर न्योछावर कर दिया है । तुम राज्य करो । मैं तो हमेशा तुम्हारा रूप देखता रहूँगा । तुम केवल अपने हाथों से मुझे दो प्याले शराब के पिला दिया करना ।”

“भार जमवाया ॥”

शब्दार्थ—जीवन=जिन्दगी रूपी जल—श्लेष और रूपक ।

भावार्थ—“मैं तो गुलाब की जड़ बन कर स्वयं ही सारा भार ढो लूँगा । तुम तो मुझ पर कलम के समान रहोगी और तुम्हारे सिर पर गुलाब का फूल होगा । सारा बोझ अपने ऊपर लेकर मैं जीवनरूपी जल से तुम्हें सींचत रहूँगा और तुम्हारी सेवा के कर्मों से कभी भी हाथ नहीं खींचूँगा ।

तुम तो यह ताज पहन कर मेरे सामने प्रसन्न रहो । मैं तुम में अपना व्यक्तित्व मिला दूँ और तुम मुझ से मिली रहो । तुम प्रसन्न होकर मेरे जीवन को मुस्कुराहट से भर दो । हे प्रिये मेहर ! अब तुम नूरजहाँ रानी बन कर संसार में चमको ।”

यह सुन मेहर की आँखों में प्रेम के आँसू भर आए । उसने सर झुका दिया । जहाँगीर ने प्रसन्न होकर उसके सर पर ताज रख दिया ।

इस समय चिड़ियाँ मधुर सगीत सुना रही थीं और भँवरे मधुर स्वर से गा रहे थे । फिर जहाँगीर ने सिक्कों पर नूरजहाँ का चित्र बनवाया । नूरजहाँ ने भी जहाँगीर के जीवन को प्रेरित कर उसका तेज बढ़ा दिया ।



